ॐ

विमल विनोद.

स्वामी दयानन्द सरस्वतीका उपदेश

लेखक

M. V मोक्षाकर.

तथा न भङ्गे च नही शरावे,
नवा अफीमे नहि कक्कडे वा ॥
यथास्ति सत्यार्थ बुके अमीरा,
गप्पाकुल्ले क्वापि नशा विचित्रा ॥

[मैथिल-श्री वैद्यनाथ मिश्र]

प्रकाशक

शेठ: जवाहरलाल जैनी सिकंदराबाद.



धी सीटी प्रीन्टिंग प्रेसमां
शा. चंदुलाल छगनलाले छाप्यु.

संवत् १९७१ मूल्य दस आना.

" निवेदन "

सज्जनो !

वर्त्तमान आर्य समाजकी वर्त मानिक शिक्षा पद्धति और उसके सिद्धान्तोंने जन समुदाय पर अपना कैसा जहरीला असर डाला है यह विद्वानोंसे छिपा हुआ नहीं है वर्त्तमान आर्यदलके आदि गुरु स्वामी दयानन्द सरस्वतीने वैदिक धर्मकी आड लेकर जो चाल चली है और अपने बनाए हुए सत्यार्थप्रकाशादि ग्रथोंमें जिन कुत्सित शब्दोंसे मत मतातरोंका खंडन करके ससारके भोले भाले जीवोंको अपन जालमें फँसाया है विद्वानोंसे वहभी अज्ञात नहीं उनके किए हुए आक्षेपोमें सभ्यता और सत्यताकी कितनी मात्रा है इससे भी विचारशील अज्ञात नहीं ! परतु कितनेक ऐसे मनुष्य भी है जो कि इस विप मिश्रित मधुके वास्तविक स्वरूप को न समझ कर इसका उपयोग करने लगजाते हैं परिणाम यह होता है कि उन विचारोंको जीवनके असली उद्देश्यसे सदाके लिए हाथ धोलेने पडते है इस महती हानिसे वे लोग वच रहे या वचजावे इसी उद्देश्यसे मैने इस ग्रथको लिखा है किसीके दिलको आघात पहुचानेका मेरा सर्वथा विचार नहीं.

इसके पढने वालोंको कुछ आनन्द भी मिले और वर्त्तमान आर्यसमाजकी शिक्षा तथा सिद्धान्त और उनके प्रतिवादसे भी वखुवी परिचित हो सके इस लिए मैंने इसकी रचना अधिकांश उपन्यासके ही ढवसे की है आशा है कि सज्जन इसका साद्यन्त अवलोकन करके मुझे अनुगृहीत करेंगे !

लेखक

॥ ॐ ॥

॥ नमः श्रीवीतरागाय ॥

विमल विनोद

—अपर नाम—

" स्वामी दयानन्द सरस्वतीका उपदेश "

आधार– कला ! आज उदास सी क्यों मालूम देती हो ?

कला– आधार ! क्या कहू कुछभी मत पूछो आज ही मुझे खबर मिली है कि " स्वामी दयानंद सरस्वतीजी " इस दुनिया से अपने किये हुए कर्मों के अनुसार कूच कर वहा गये है जहासे कितनी एक मुद्दतके बाद फिर इस संसारमें (न जाने किसके घर किस अबलाकी कूखमें वास कर) अवतार लेकर अपने बनाये हुए अनेक ग्रंथोंका जीर्णोद्धार करेंगे ? आज विक्रम स० १९४० का भादों महीना ऐसा खोटा चढा है कि, खोटी ही खोटी खबरें मुझे मिलती हैं. एक तो "सरस्वती जी" की मृत्यु की बुरी खबर मिली, दूसरी खबर अभी ही ' नायन ' ने आकर सुनाई कि तेरी बहन " सत्यबाला " के पेटमें सख्त दर्द हो रहा है " सत्यबाला " का पति

(मेरा बहनोई) अलीगढ़ है, उसको बुलाने के लिये तार दिया है. तीसरा मुझे व्रत है, क्यों कि आज जन्माष्टमीका दिन है, इससे सारे दिनकी भूखी हूं, न जाने रात के बारह कब बजेंगे? और कृष्णजीका जन्म कब होगा? और सासुजी फलाहार कब आकर बनायेंगी? और कब खाने को देंगी? मै तो "स्वामीजी" की कृपासे इन पाखंडोंको बहुत बुरा समझती हूं! मगर क्या करूं? मेरा पति अभी मेरे कहने में नहीं है! वह तो अपनी अम्माका भगत बना हुआ है!!

आचार– अरी कला! तो, क्या उसे अपना भगत बनाना चाहती हो? "स्वामीजी" की कृपासे कृष्णाष्टमी वगैरह को पाखंड मानती हो तो क्या स्वामीजीने कहीं यह कहा है कि, अपने पतिको अपना गुलाम बनानेका इरादा रखना? बड़े दुखके कारण प्रगट किये! क्या कहना है? अगर "स्वामीजी" मर गये तो सारे जहानके लिये ही मर गये, न कि सिर्फ तेरे ही लिये! रही 'सत्यवाला' के पेटके दर्दकी बात, सो तो उसके गर्भके दिन पूरे हो गये हैं, पहल पहलोठी का प्रसूत है, अगर पुत्र हुआ तब तो खुशीका पारावार भी न आवेगा! वाहरी वाह! उसेभी उदासीका कारण बता दिया! वाहरी "सरस्वतीजी" की भगतन! तुझे धन्य है! हा यूं कहे तो ठीकभी है कि, भूख लग रही है! सखि! "स्वामीजी" की भगतन और उनके कथनपर चलनेवाली तो तुझे तबही समझूंगी, जो उनके

वनाये हुए " सत्यार्थ प्रकाश " के चतुर्थ समुल्लासकी लकीरोंकी फकीर बनेगी ! वरना नाहक ही किसीको पाखंडी कहना ठीक नहीं ! ले देख वो ' नायन ' फिर आ रही है, मालूम देता है कि तेरी वहन "सत्यवाला" ने ही तुझे बुलवाया है ! अच्छा यदि जाओ तो मेराभी प्रणाम कहना और कहना कि, आधारकी शरत याद रखना ! ले घडीमे भी सात वज गये.

कला– आधार ! सच कह, तुझे मेरी ही कसम है, तूने सत्य-वालाके साथ क्या शरत की है ?

आधार– जीजी कला ! मै सच कहती हू, उससे मेरी यही शरत थी कि, तुझे पुत्र ही पैदा होगा ! अगर नहो (यानें लडकी हो) तो अपने हाथका विछुआ (जो मैंने पहन रखा है) दे दूगी !

कला– ले ! वडी भारी शरत निकाली ! (इतनेमें नायन आ पहुची और कलासे वोली)

नायन– जीजी ! चलो भी " सत्यवाला " तो दर्दके मारे रो रही है उनकी जिठानियां और काकीसासु वगैरह चोथे कृष्णजी का हिंडोला देखने गई है, शायद वे तो कहीं वारह वजे (कृष्णजीके जन्म होनेके वाद) आवेगी. उनके पास सिर्फ इस वक्त मालतीको छोड आई हूं, अलीगढसे तुम्हारे वहनोईजी का तार आगयाकि, मैं नहीं आ सकता ! मेरे परीक्षा के तीन दिन और वाकी.

रहते है. तुम जलदी चलो, उन्होंने (सत्यवालाने) कहा है कि, साथ लेकर आना. मेरे प्राण जाते है!

कला– (नायनसे) चल बहन चल ! देखूं अंदर सासूजी आगई होतो उनसे पूछकर और चदर लेकर अभी आती हू (अंदर जाकर अपनी सासूसे) बूजी साहब ! बहन " सत्यवाला " के यहासे मुझे बुलाने के लिये " जानकी नायन " आई है सो मै जाती हूं.

सासू– (अपने बेटेको) अरे मुरलीधर! वे मुरलीधर!

मुरलीधर– (अपनी मातासे) क्या है ?

माता– बेटा ! तूं दुकान पर जायगा क्या ?

मुरलीधर– जी हां ! जाऊंगा तो सही मगर मीह वरसता है सिकरम गाड़ी जुतवाता हुं, क्योंकि मै माधोदासकी बगीचीमें रासलीला देखने भी जाऊंगा.

माता– बस ! सिकरम गाड़ी जुतवानेकी जरूरत नही, क्या बापूजीकी आदतको नहीं जानता ? विचारे घोड़ेको ऐसे मीह वर्षतेमें निकम्मा हैरान करेगा तो वो गुस्से होगे. किरायेकी गाडी करवा मगा उसमें बहू (कला) कोभी लेता जा " सत्यवाला " के सासरे छोडता जाइयो !

मुरलीधर– अच्छा ! यूही सही, ला किरायेके लिये डेढ रुपया !

माता– अरे डेढ काहेका ? छै आने थोडे होते है, छे नही तु आठ आने ले दश आने ले इकट्ठाही डेढ़ रुपया ! ले ठहर मै आठ आनेमें गाडी किराये मंगवा देती हूं.

मुरलीधर– (हंसकर प्यारके साथ) नही मैं आपही गाडी वालेसे ठहरा लुगा, तूं मुझे डेढ रुपया देदे.

माता– तो यूं कहकि, मुझे खरचनेको चाहिये. निकम्मा! (अंदर से डेढ रुपया निकाल कर दे दिया, कलाको वग्धीमें बिठला लट्टुशाके कूचेंमें सत्यवालाके सुसरालमें छोडकर आप तो माधोदासकी बगीचीमें पहुंच गया. इधर कला अपनी बहनके पास पहुंची और रोती हुईको पुचकार कर बोली)

कला– बहन ! क्यू ?

सत्यवाला– (पेटको दोनों हाथोंसे मरोडती हुई) बहन ! कुछ मत पूछ ! मेरेतो प्राण जाते है. हायरे ! क्या करू ? (अपना मस्तक कलाकी गोदमें डाल दिया)

कला– (सिरपर हाथ फेरती हुई) बहन ! घवडा मत जरा दिलको करड़ा कर मै आगई हु (पासमे बैठी मालतीसे) अरी और सब घरकी बइयर बानिया कहां गई हैं ?

मालती– कृष्णाष्टमीका हिंडोला देखने.

कला– बडे अफसोसकी वात है ! कि यहतो इस तरह तडफ रही है और उन्हें हिंडोले सूझते है.

मालती– अजी चुप करो, तुम देखती जाओ, जरा घरके आदमियोंको खबर पडेगी तो सबकोही कृष्ण हिंडोला देखनेका स्वाद आजावेगा !

कला– (हसकर) तो हल्दी और चुना तैयार कर रख !

मालती– अब तुम हँसीको तो रहने दो " सत्यबाला " का ख्याल करो.

कला– (नायनसे) अरी जानकी ! तूं फतेपुरीमें जा, और " मनभरी " (दाई) या उसकी बेटी " अनारो " को जलदी साथ लेकर आ ! ये ले इक्केके लिये पैसे. नायनभी जाकर दाईको ले आई, इधर इतनेमें " सत्यबाला " की सासु और जिठानियां वगैरहभी सब आगई रातका एक बजा उस वक्त सत्यबालाके पुत्र जन्मा.

दाई– (अंदरसे) मुबारक हो ! बधाइयां आप सबको बधाइया !

शारदाचंद्र– (अपने एक लड़केसे) अरे अभी पंडित चंदूलालजी हकीम मेरे पाससे उठकर गये हैं, अभी रस्तेमें ही जा रहे होंगे उन्हें बुला ला. (लडका गया और ले आया, शारदाचंद्र हकीम चदुलालजीसे) पंडीतजी ! आपके भानजा हुआ है, मुबारक !

पं० चंदूलाल– कब ? कितनी देर हुई ?

शारदाचंद्र– बस अभी एक बजकर २५ मिनटपर.

पं० चदूलाल– इसकी जन्मकुंडली तो जरूर ही बनवाना, अच्छा मैंही बनाऊंगा जरा पचाग मगाना.

शारदाचंद्र–(हसकर) भाई साहब ! अभी तो हमारे यहां न किसीकी कुंडली, न घरमें पचाग, न देखें और नाहीं कुंडली बनवावें, इन वाहियात वातोंसे क्या बनेगा ? मैंने तो आपको खुश खबरके ही लिये बुलायाथा.

पं० चंदूलाल– (जरा रोशमें आकर) सचमुचही तुम तो

जगली हो! अरे सनातन धर्म तो छोड बैठे मगर लोक रिवाजभी नहीं करते! बड़ा अफसोस है!! आज सारे लोगोंने जन्माष्टमी मनाई मगर तुम्हारे घर तो मूंधे ही नगाडे होंगे!

शारदाचद्र– वाहजी वाह! जरा सोचो तो सही मूंधे नगाडे जन्माष्टमी मनानेवालोंके ह या कि हमारे! देखो! हमने तो खूब मजेसे दिनमें भी (कई बार) खाया और दुकानसे आकर भी रातको (दश बजे) खाकर चुके हैं! और कृष्णाष्टमीवाले विचारे सारा दिन तो भूखे मरे (या किसीने फलवार) और आधी रातको पत्थरोंके आगे मंदिरोंमें माथा फोड़ते फिरे! फिर कहीं खानेको और पीनेको मिला! तुम लोगोंने तो नकल की, मगर हमारे तो असल ही कृष्णका जन्म हुवा है.

पं० चटुलाल– तो क्या इसका नाम कृष्णही रखोंगे? (पासमें खडी हुई " मालती " अपने बाप शारदाचंद्रसे) आपाजी! मां कहती हैकि कृष्ण अष्टमीकी रातको होनेसे कृष्ण ही नाम रखना है)

शारदाचद्र–(पुत्रीसे) चल! चल! बैठ चुपकी होके, हमारे घरमें आजतक किसीनेभी ऐसे चोट्टे जैसा नाम रखा है? जो हम रखे! नाम रखनेका दिन तो आने दे! हमतो इसका नाम " विश्वंभरनाथ " रखेंगे! (सुबह होतेही शारदाचद्रके पोता हुआ यह सब साक संबंधिओं में मालूम होगया, कई लोग बधाई (मुबारक) दे

सहाय पी. जज्जसाहब, पंडित हरगोविंद, " रामानुज संस्कृत पाठशाला " के कितनेक विद्यार्थी और माधोदेव शास्त्री वगैरहभी उपस्थित थे. लोगोंसे मकान एकदम भर गया! घरमें चारों तरफ खुशीयें मनाई जाने लगी, उधर औरतें गीत गाने लगी, और इधर हवन वगैरहका काम शुरू हुआ.

शारदाचंद्र– (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! संस्कार वगैरह काम सब तूंनेही करना, पंडितोंका काम तो मूर्खोंके घरोंमें होता है !

ब्रह्मानंद– (शारदाचंद्रसे) बहुत अच्छा! इसमें दो रुपयेकी! किफायत भी होगी !

शारदाचंद्र– तो अच्छा बेटा ! काम शुरू करो! मगर एक काम करना, मंत्र ऐसी होशयारीसे बोलना कि सुन सब पंडितोंके छक्के छूटें !

(इतना सुनतेही ब्रह्मानन्द हाथमें जल लेकर)

" आचमन मंत्र "

ॐ कपटानन्दाय नमः, ॐ सद्धर्मविरोधकाय नमः, ॐ व्यभिचारप्रचलितकराय नमः—

(आचमन करनेके बाद संकल्प हाथमें लेकर)

" संकल्प मंत्र "

ढों ! तत् असत् अद्येह फों नमः, गपोडानन्दाय नमः, सर्वधर्म विरोधकाय, अद्यधूर्त कल्पितसर्गे, गडबड

कल्पे, कपटानन्द मन्वन्तरे, महाकलियुगे, प्रथम चरणे, जम्बू द्वीपे, भरत क्षेत्रे, अजमेर नगरे, वर्त्तमान नाम संवत्सरे, अमुकायने, अमुकऋतौ, अमुक मासे, कृष्णपक्षे, नग्न तिथौ, कुबुधवार नक्षत्र योगकरणे, श्रीगदृत्तानन्द कृत मिथ्यार्थप्रकाश प्रतिपादित फल प्राप्त्यर्थ आर्यगोत्रो, विधवा पुत्रो, ब्रह्मानन्द शर्मोऽहं, सर्वाधर्म शास्त्रस्य अति निन्दन रूप ऐश्वर्यस्य प्राप्ति कामनया मिथ्यानन्द प्रसन्न हेतवे सर्व धर्मवर्णान् एकीकृत्य पूजनमहं करिष्ये. (यह पढकर संकल्प छोडा)

" आवाहन मंत्र "

भो ! अनादि मार्ग विध्वंसकम्, मूर्तिपूजनशास्त्रादि निवर्त्तकम्, वर्णशंकर गोत्र प्रवर्त्तकम्, विधवा विवाह कारकम् श्री श्री अनेक रंगभंगाचार्य, दंभानन्द आवाहयामि, भोदंभानन्द ! इहागच्छ ! सुप्रतिष्ठ कुवरदो भव ! मम कुपूजा गृहाण भगवद्दंभानन्दाय नमः ॥ (इतना पढकर " ब्रह्मानन्द " षोडशोपचार पूजनके मंत्र पढने लगाकि इतनेमें जज्जसाहब शारदाचंद्रसे बोले)

जज्जसाहब–अजी शारदाचंद्रजी ! वाह ! ये कैसी वाहियात श्रुतियां उच्चारण करनी शुरू की हैं ? तुमको (इतने वृद्ध और दाना होने पर) जानबूज कर सैंकडो औरतों और आदमिओंके बीचमें ऐसा काम करवाते शरम नहीं आती ?

शारदाचंद्र–(जरा मूंह बनाकर) बस साहब मेरी मरजी,

मैं अपने घरका मालिक हुं ! जो मेरे दिलमें आयेगा सो करूंगा मेरे घर खुशीका दिन है, मुझे तो कहते हो कि शरम नही आती, मगर जब आप " स्वामीजी " के मंत्रों द्वारा एक एक लुगाईको भरी सभामे एक के वाद दूसरा, दूसरेके वाद तीसरा, तीसरेके वाद चौथा, चौथेके वाद पाचवां, पांचवेके वाद छठा (हँसी) हँ–हॅ–हँ–हॅ–हॅ छठेके वाद सातवा और सातवेके वाद आ-ठवा, आ-ठवेके वाद नौ वां, नौवेंके वाद दशवा, बापरे बाप ! बलिहारी आपके "स्वामीजी" की ! वलिहारी आपको ! वेटा ! जज्ज वनगयेतो क्या होगया ? और वलिहारी उस अल्ला-माकी जनी औरतको ! जिसने "स्वामीजी" के असूलको पाला ! (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चुप क्यो होगया ? तू अपना काम करेजा !

" षोडशोपचारपूजनमंत्र "

ॐ कलयुगानन्दाय नमः (इत्यर्घ)
ॐ अद्भुतरगाचार्याय नमः (पात्रम्)
ॐ धर्मविध्वंसकाय नमः (आसनम्)
ॐ गप्पाष्टकाय नमः (स्नानम्)
ॐ व्यभिचारानन्दाय नमः (गंधम्)
ॐ सर्वधर्मनिन्दकाय नमः (अक्षतम्)
ॐ विधवाना एकादशपतिकराय नमः (पुष्पम्)
ॐ मर्तिपूजननिषेधकराय नमः (धूपम्)
ॐ अधर्मपाखण्डमतप्रकाशकाय नमः (दीपम्)

ॐ सर्वेषामेकभोजनकराय नमः (नैवेद्यम्)

ॐ मोक्षमार्गविध्वंसकाय नमः (आचमनम्)

ॐ अवतारनिषेधाय नमः (तांबूलम्)

ॐ गोचर्मविक्रयकराय नमः (पूगीफलम्)

ॐ शिल्पशास्त्रोपदेशिने नमः (वस्त्रम्)

ॐ घोरकलिप्रवर्त्तकाय नमः (द्रव्यदक्षिणां)

ॐ महाघोरधूर्त्तमार्गप्रचलितकराय, सनातनधर्मविनिन्दकाय, सत्य आत्मज्ञान निवर्त्तकाय, वेदब्राह्मणसंत विमुखाय, अधर्म स्वरूपाय, आत्मोपदेशे मतिप्रदाय विरोध कृताना बहुरंगाचार्यगपोडानंदाय नमः ।

यह प्रार्थना करके ध्यानम्—

वैदिक धर्म्म निवार पाप पाखंड बढाया ।
निन्दे मूर्त्ति पुराण अर्थ पलटो मन भायो ॥
विधवा व्याह कराय पुरातन रीत नसाई ।
वर्ण भेद विनिवार नमस्ते करी कराई ॥
तेली चमार कोरी सुई लघु जातन आरज करो ।
धर्म कर्म मति पुण्यकी मूल काढि अघ सचरो ।

" विनियोग. "

ॐ अस्य श्री गपोड मंत्रस्य बहुरंगाचार्य ऋषि अविलक्षणं छंदः। कलियुगानन्द देवता, विरोध बीजम्, अशुचिशक्तिः, धूर्त्तता कीलकम्, श्री कलियुगानंद प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । (इतना करके)

" अंग न्यास "

बहु रंगाचार्य ऋषये नमः	(शिरसि)
अविलक्षण छंदसे नमः	(मुखे)
कलियुगानन्द देवतायै नमः	(हृदि)
विरोध बीजाय नमः	(गुह्य)
अशुचि शक्तये नमः	(पादयोः)

(इसके बाद करन्यास)—

ॐ बहुरंगाचार्य ऋषिः अंगुष्ठाभ्यां नमः
ॐ अविलक्षणं छंदः तर्जनीभ्यां नमः
ॐ कलियुगानद देवता मध्यमाभ्यां नमः
ॐ विरोध बीजम् अनामिकाभ्या नमः
ॐ अशुचि शक्तिः कनिष्ठिकाभ्यां नमः
ॐ धूर्तता कीलकम् करतलकर पृष्ठाभ्या नमः

(इसके बाद हृदयादि न्यास)—

ॐ अनेक रंगाचार्य हृदयाय नमः
ॐ अविलक्षण छंदसे शिरसे स्वाहा
ॐ कलयुगानन्दाय शिखायै वषट्
ॐ विरोध बीजाय कवचाय हुं
ॐ अशुचि शक्तये नेत्राभ्यां वौषट्
ॐ धूर्तता कीलकम् अस्त्राय फट्

" अथ गपोड गायत्री "

ॐ बहुरंगाचार्य, घोर मत प्रवर्त्त काय, सनातनधर्म ध्व-

सकाय श्राद्ध तर्पण निषेध कराय, वर्णाश्रमधर्म विनाशकाय, मूर्ति पुराणादिविनिंदकाय, वेदार्थ विपरीत कराय नमस्ते प्रचलिताय, धीमही तन्नो गप्पा प्रचोदयात् ॥ इति

(इसको पढकर " ब्रह्मानंद " चुपही हुआथाकि, जज्ज साहबके सिवाय सबके सब तालिया बजाकर हँसने लगे! औरतोंमें बैठी हुई " ब्रह्मानन्द " की साली (सत्यवालाकी बहन) " कला " इस कार्रवाईको देखकर एक दम शिरसे पैरतक जलभुन गई ! और उठकर जहाँ ' सत्यबाला ' बैठीथी वहा गई और उससे बोली.)

कला-बहन ! येले मै तो अपने सासरे जाती हू (जाती हुई लोकोंके बीचमें बैठे हुए जज्जसाहबसे) फूफाजी ! अफसोस सद अफसोस ! हरदुलानत है आपके यहा बैठने पर ! देखो हायरे ! कैसे गजबकी बात है जो ऐसे " परमहंस महात्मा सरस्वतीजी " को हजारों गालियां दे रहे हैं (लोगोकी तर्फ इशारा करके) अपने घरमें चाहे कितनाही बुराभला कहलो ! तुम्हारी बहादुरी तो तब है जो मैदान मे बोलो !

ब्रह्मानंद-(कलासे) आज हम लडकेके होनेकी खुशीमें आनद मना रहे हैं अगर तुझे गालिया प्रतीत होती हैं तो भी वे तुझे नहीं, तेरे धनीको नही ! तेरी माको नहीं, तेरे बापको नही, तेरे कुटुंबमेंसे किसीको नहीं. मगर जब मैं तेरी बहनको व्याहने आया था उस

तुने मेरे साथ कुछभी कसर बाकी रखी थी ? जबतो न मेरे बापको छोडा न मेरी माको, न मेरी बहनको, क्यों नहो ! आपतो गालियां देते मुंहमें मिठास आतीथी आज हमसे सुनकर जहर चढती है !

जा ! जा ! किसीपर ऐसान नहीं करती ! जब तेरे घर कोई खुशीका दिन आवे अर्थात् तुं अपना किसी अन्य पुरुषके साथ नियोग करे तो हमें मत बुलाना ! मुबारक रहो तुझे तेरे " सरस्वतीजी " (समाजके लाल बुझक्कड) या ये तेरे जज्ज साहब फूफाजी.

शारदाचंद्र–(ब्रह्मानंदसे झिडककर) बसरे ! बस ! औरतोंसे बोलना अपनी बेहूदगी है (कलासे) जा बेटी ! जा ! कहारके छोकरेको साथ लेजा. (कहारके लडकेको) अरे बुद्धु ! जा इसके साथ इसे सासरे छोड आ.

ब्रह्मानन्द–(अपने बापसे) आपाजी ! अब क्या करू ?

शारदाचंद्र– बेटा ! अब हवन करो !

ब्रह्मानन्द– जी बहुत अच्छा !

(इतना कहकर हवनकी सामग्री पासमें रख कर कुंडमें अग्नि जला लगा हवन करने)

"हवनके मंत्र"

ॐ बहुरंगाचार्याय स्वाहा.
ॐ बिरोधाचार्याय स्वाहा.

ॐ कलियुगाचार्याय स्वाहा.

ॐ कपटाचार्याय स्वाहा.

ॐ धूर्त्तानन्दाय स्वाहा

ॐ लंपटेश्वराय स्वाहा.

ॐ सत्यधर्म विनाशकाय स्वाहा.

ॐ अधर्म मत प्रवर्त्तकाय स्वाहा.

ॐ आर्य छन्द भ्रष्टकराय स्वाहा

ॐ धूर्त्त शिरोमणये पाखण्डाचार्याय स्वाहा

शारदाचन्द्र– ले वेटा ! इन मन्त्रोंसे अग्निमें आहुति तो छोडदी अब थालीको जमीनमें रखदे और पूर्व दिशाके क्रमसें आगेके मन्त्रोंसे भाग रख.

ब्रह्मानन्द– आपाजी ! यह क्या ? अभी गप्पा वैश्वदेव तो बाकी है !

शारदाचन्द्र– वाह वेटा ! अच्छे मोके पर याद करवाया मैंतो भूलही गया था अच्छा अब करलो ! (शारदाचन्द्रके कहनेसे रसोईमेसे भोजन लाकर ब्रह्मानन्द गप्पा वैश्वदेव करने लगा.)

मंत्र—

ॐ बहु भक्षकाय धूर्त्त शिरोमणये स्वाहा.

ॐ, सन्यासधर्म विपरीताय कपटा नन्दाय स्वाहा.

ॐ घोरकलि प्रवर्त्तकाय स्वाहा.

ॐ पुराणनिषेधकराय मल्ल विद्योपदेशिने स्वाहा.
ॐ परस्पर विरोध वृद्धिकराय स्वाहा.
ॐ वेदार्थ विपरीतकराय शुद्धार्थ विध्वंसकराय स्वाहा.
ॐ पाखंडमत प्रचलित कराय प्रजा नाशकाय स्वाहा.
ॐ कपटे श्वराय सह्यावा पृथ्वीभ्यां स्वाहा.
ॐ सर्व वर्णेषु नमस्ते प्रचार कराय अशुद्धि कृते स्वाहा

ब्रह्मानन्द–(गप्पा वैश्वदेव करके अपने बापसे) आपाजी! मैतो थक गया!

शारदाचंन्द्र– बेटा! अबतो थोडासा काम बाकी है ले बोल बोल जलदी!

ब्रह्मानन्द–अच्छा करलेताहुं इस गल पडे ढोलको बजाये विना छुटकारा होना मुशकिल है.

मंत्र–

ॐ सानुगाय धूर्त्त शिरोमणये नमः
ॐ सानुगाय वाचाला नंदाय नमः
ॐ सानुगाय विरोधाचार्याय नमः
ॐ सानुगाय मिथ्यादंभ प्रवर्त्तकाय नमः
ॐ धर्म ध्वंसिने नमः
ॐ अधर्मरताय नमः
ॐ मुण्डाचार्याय नमः
ॐ स्वयंवर विधवा विवाह कराय नमः
ॐ एकादश पतिकराय सर्व धर्म निंदाकराय नमः
ॐ वेद बाह्य प्रवर्त्तकाय नमः

ॐ गपोडा नन्दाय नमः

ॐ कपटेश्वराय नमः अवतार साकार निषेधकराय नमः

सनातनधर्म विपरीताय नमः पापरूपाय नमः

ॐ आत्मोपदेशे मति मदाय नमः

ॐ वेद ब्राह्मण विमुखाय नमः

ॐ कलेरवताराय नमः

ॐ धर्मभ्रष्टानदाय नमः ।

शारदाचन्द्र– बेटा ! इन भागोंको- अतिथिको जिमाना या अग्निमें छोडदेना चाहिये तुंतो अग्निमें डाल और बोल स्वाहा—

बेटा ! बोल तेरे लडकेका क्या नाम रखे ?

ब्रह्मानन्द– मुझसे क्या पूछते हो ? पूछो मेरी मासे या लडके कीमा से.

शारदाचन्द्र– वाह वे ! भूतनीके ! राज हमारे घरमें मरदोंका है या औरतोंका ? अब तो स्वामीजी मरगये ये हवा तुझे कहासे लगी ? सच बता ! अलीगढमें कभी किसी समाजी की सोबततो नहीं की ?

ब्रह्मानन्द– आपाजी ! सोबततो क्या करनीथी समाजियोंका ! नामभी अच्छा नहीं लगता !

शारदाचंद्र–फिर तूने कैसे कहाके औरतोंकी सलाह लो ! औरतें तो कलको कहेंगी कि हमारा दिल दूसरा खसम करनेको चाहता है !

ब्रह्मानद– नहीं नहीं ... कह सकती ! क्यों

कहींभी उत्तम कुलमें स्त्री दूसरा पति नहीं कर सकती और नाहीं किसी शास्त्रमें करना कहा है.

शारदाचंद्र– अबे घनचक्कर ! नहीं कर सकती के खसम ! तुझे क्या खबर कि किसी शास्त्रमें नहीं लिखा ! ला तो स्वामीजीका बनाया हुआ " सत्यार्थ प्रकाश " तू दूसरेको रोता है ! " स्वामीजी " एकको दश खसम करनेकी आज्ञा वेदोंमें बतलाते हैं ! अगर (तूं) जिन्दा रहा तो देख लेना आजसे उन्नीस वर्षके बाद विक्रम सं० १९६९ में मुरादाबादका रहनेवाला " जगन्नाथदास " एक " दयानन्द मतकी सूची " बनावेगा उसमें मेरे मुहसे निकलती हुई इस 'कविता' को पढना !

*"हाय हाय कैसा नियोगका अनुचित कर्म चलाया।
"उत्तम कुलकी अबलाओंको व्यभिचारिणी बनाया ॥ ५३ ॥

"दश पुरुषोंसे करे नियोग इतनेसे सबर न आया।
"लिखे बार दो तीन और सन्यासी नहीं सरमाया।५४।

(दयानंद मतसूची पृष्ट ९)

ब्रह्मानन्द–आपाजी साहब ! यह क्या कहा कि, विक्रम सं० १९६९ में दयानन्द मतकी सूची बनेगी आपको क्या भविष्यत कालका ज्ञान है ? फरज करो कि, ज्ञानभी हो

*ऋग्वेद भाष्यभूमिका पृष्ट २१४

तो क्या ऐसा अद्भुत ज्ञान कि वो ऐसी ही कविता बनावेगा ? मुझे तो सुनकर हैरत पैदा होती है !

शारदाचंद्र– वाहवे उल्लू! बेटेका बापभी बनगया मगर वेवकूफही रहा! अबे ! इतनातो सोचकि ज्योतिषी लोग १०० वर्षके बाद फला वक्त और फलां समयमें इतने घटे और इतने मिनिट पर सूर्य ग्रहण लगेगा और उस दिन फलाना वार और फलानी तारीख होगी तो क्या मै (आजसे उन्नीसवें वर्षमें यह बात होगी) नही बतला सकता हूं ? बस मैंने तुझसे कहदिया, एक "दयानन्दसूची" तो क्या मगर मुरादाबाद निवासी जगन्नाथ साहब, पंडित ज्वालाप्रसाद साहब और मेरठके ईश्वरीप्रसाद साहब आदिकी ऐसी कलम चलेगी कि दयानन्दकी सूचीतो सूचीही रहेगी मगर दयानन्दके समाजकी कूची हो जायगी.

ब्रह्मानन्द– ये बेधडक अपनी कलमको निडर पने इस न्यायवान् गवर्मेन्ट सरकारके राज्यमें कैसे चलावेंगे ?

शारदाचंद्र–वहभी मैं तुझे अभी कह देता मगर यह काम फुरसतका है इस वक्त मुझे एक जरूरी काम है इसवक्त तो मै तुझे उन ट्रेक्टोंका सिर्फ नाम बतला देता हूं ले लिख !

ब्रह्मानन्द–(जज्जसाहबसे) आपने सुना, आपाजी क्या कहते है ?

जज्जसाहब– भाई ! तुम्हारे घर आयें है जो मरजीमें आवे सुनालो ! तुम लोगोंके यहा लडकी देना– तुमसे नाता रिस्ता करना–बडी मूर्खताका काम है !

शारदाचंद्र–(हंसकर) अगर आपकी मनशा हो तो नाता वापस ले लीजीये ! बिगड़ा क्या ? फायदाही हुआ है " सत्यवाला " को आपने वारह (१२) वर्षकी उमरमें दियाथा हमने तीन साल पालकर पन्द्रह (१५) वर्षकी बना दी है अगर इतने परभी कुछ कसर हो तो उसके जो लडका पैदा हुआ है वह सूद (व्याज) में ले लो ! और आगेके वास्ते जैसे जैनी लोग किसी वस्तुका त्याग करने वक्त " वोसिरे " " वोसिरे " कहते है वैसे आपभी कह दो ! और हमको लडकियोंका घाटा नहीं है, ब्रह्मानन्द जैसा लडका कारा नहीं रहेगा. (अन्दर औरतोंमें बैठी हुई ब्रह्मानंदकी मा झिडककर अपने पति शारदाचन्द्रसे)

यमुना– बस करो ! तुम्हे क्या हो गया है ? नाहककी झक झक बक बक लगाई है कुएमें पड़े स्वामीजी और भाडकी भट्टीमें पड़ा स्वामीजीका कहना ! यहा हमे तो देरी होती है हम बिरादरीमें भाजी बाटनेके लिये जानेको बैठी है तुम्हारे " स्वामीजी " के कजीयेने वहू की बहन "कला" को तो रुसा दीया ! अब क्या वहूके फूफाजी (जज्जसाहब) कोभी रुसाकर भेजनेका इरादा है ? (ब्रह्मानन्दसे) चुपका होके बैठ !

ब्रह्मानन्द–अरी जरा ठहर ! मुझे उन ट्रेक्टोंका नाम तो लिख लेने दे ! नहीं तो फिर भूल जाऊंगा (अपने बापसे) हा ! लो आपाजी पहले मुझे आप उन ट्रेक्टोंका नाम लिखा दो !

शारदाचन्द्र–(अपनी बहू यानी ब्रह्मानंदकी मांसे) क्या कहा ? " तुम्हें क्या हो गया है ? " जरा फिरतो कहियो ! (उठकर) " बक बक झक झक लगाई है " कहते शरम नहीं आती ? " कला " रुस गई तो रुस जाने दो और जज्जसाहब रुस जायेंगे तो बलासे ! (ब्रह्मानंदसे) ले बेटा ! लिख.

ब्रह्मानन्द–हा आपाजी ! लिखाओ !

शारदाचन्द्र– " विधवा विवाह निराकरण. "

" अनार्यसमाज रहस्य. "

" देवसभा स्वर्गमें दयानंदियोंकी किस्मतका फैसला. "

"शंभुनाथका गप्प कुठार जगन्नाथका वज्र प्रहार."

"दयानन्दके मतका खातमा." "शगूफा दयानंद."

"दयानन्दकी चट रगतें " "दयानन्द मत मर्दन."

"दयानन्द मत परीक्षा " "दयानन्द पराजय "

"दयानन्दकी बुद्धि " (सोचता हुआ)

औ–र–याद आजा–आजा–आजा–आजा–हां आगया !

"दयानन्दके मूल सिद्धांतकी हानी."

"दयानन्द चरित्र." "दयानन्द लीला."

"दयानन्द स्तोत्र." "दयानन्दमत सूची."

"दयानन्दमत खडन"–(इतने कहकर चुप होगये.)

ब्रह्मानन्द– क्यों आपाजी ! और के बस ?

शारदाचंद्र–अरे बसके बचे ! अभीतो इतने बाकी हैं जो लिखते लिखते ! अभी आल्हाराम सागर

सन्यासीजीके अंकोंका नाम तो लियाही नहीं है !

ब्रह्मानन्द– अच्छा वो फिर लिखाना हाल और कोई एक दो लिखा दो वरना सबको पान बीड़ा देता हूं !

शारदाचंद्र–अ–रे–तो–ले–लि–ख–ले एक और नाम–"बाबा आदम" (यहसुन सब हंस पडे) अरे ले और याद आगये "दयानन्द हृदय." "नियोग खंडन."
" सत्यार्थप्रकाश समीक्षा "
"धर्म सन्ताप." "स्वामी दयानन्द." "धर्मदिवाकर"
"भजन बीसा." "दयानन्दमत दर्पण." "दयानंदकी माया"
"दयानन्द नाटक." और " दयानन्दका कच्चा चिठा."
(थोडीसी देर बाद) भला गिनतो सही कितने हुए ?

ब्रह्मानन्द–अच्छा लो गिनता हूं जरा ध्यानसे सुनना ! एक एक एक चार पांच और नौ नौ नौ चार तेरां तेरा और आठ इकीस–इकीस और चार पचीस और उनत्तीस.
आपाजी ! उनत्तीस हुए !

शारदाचंद्र–अबे ! चोट्टीके एक कमती क्यों रखा ? लिख जल्दीसे ' ढोलकी पोल ' करदे पूरे तीस. ले दे अब सबको पान बीड़ा ! (ब्रह्मानन्दने सबको पान बीडा दिया)

पं० गिरजाशंकर–(शारदाचंन्द्रसे) आज आपको भांग चढरही मालूम देती है !

शारदाचंद्र–(हसकर) जबही आप उल्लू मालूम देते हैं.

जज्जसाहव–(प० जीसे) गिरजाशंकरजी ! आपने असल कह दी.

शारदाचन्द्र–अजी जज्ज साहब ! आपको तो नशा करना दोनों कानुनोंसे मना है, फिर क्यों गिरजाके साथ शंकर वनते हो ?

प० गिरजाशंकर–(स्वयम्) भाई पोता होनेकी खुशीमें इसवक्त इन्हे कुछ भान नहीं है ! (प्रगट) अच्छा भाई ! अच्छा ! शारदाचन्द्रजी ! पोतेका नाम क्या रखा ? सो तो बीचमें ही रहा !

शारदाचन्द्र–अरे ! रे ! रे ! मुद्देकी वात तो बीचमें ही रह गई. सुनो साहव ! मै इस अपने पोतेका नाम रखता हुं, इसका नाम " विश्वंभरनाथ "

जजसाहव–अच्छा ! मैंतो जाता हू ! नमस्ते !

शारदाचन्द्र–(हाथसे पकडकर) चाहे न मस्तो चाहे मस्तो विना रोटी खाये तो नहीं जाने देंगे ! (वाकीके सब-लोगोंसे) मुझपर आप लोगोंने वडाही अनुग्रह किया कि जो मेरे घरको पावन किया आपको जो मैंने तकलीफ दी उस वातकी क्षमा चाहता हू ! पधारियेगा !

सबकेसब– वाहजी वाह ! आफरीन है आपकी लायकीपर, यह दिन आपको परमात्मा जल्दी जल्दी दिखलावे !

शारदाचन्द्र– ना साहव ! ना ! मेरे घरकी औरतें और वहुऍ दयानन्दके असुलों पर नहीं चलती जो इकठेही दो दो गर्भ धारण करे ! या दश सालमें दश बचे पैदाकरे !

अगर आप लोगोंको यह दिन जलदी जलदी देखनेकी मनशा होवे तो दो चार मुरगिया लाकर पाल लूं! उनमेसे जब कोई अंडा देवे तबही आपको बुला लूं!

जज्जसाहब–हां ! तो क्या आपने दयानन्दियोंकी औरतें मुरगिया समझ रखी है ? अगर ऐसी समझ है तो आपके घरमेंभी लगेगी ! क्या " सत्यवाला " को मुरगीके पेटसे निकली हुई न मानोगे ?

शारदाचन्द्र–हा ! हा ! बेशक आपकी औरत (सत्यवालाकी भूआ) भी मुरगी होगी तो इसकोभी मुरगी ही समज लेवें गे !

(पंडित चन्दूलाल जज्जसाहबसे–जानेदोजी ! क्या वाहियात बातें ले बैठे चुप करो ! सबके सब खानेके लिये बैठे. खाना खाचुके बाद अपने अपने घरको चले गये)

(एकदिन जबकि विश्वंभरनाथकी, उमर दो वर्ष और तीन महीनेकी हुई तब हरभजन घरमें रहनेवाला एक पूरबिया-नौकर दुकानपर आकर शारदाचद्रसे.

हरभजन– अजी ! बब्बन (विश्वंभरनाथ) की माको कुछ हो गया घर जलदी चलो !

(शारदाचंद्र यह बात सुनतेही नौकरके साथ हो लिया. रस्तेमें आते हुए एक दूसरा आदमी मिला और बोला कि–बब्बनकी मां तो मरगई !)

शारदाचद्र– (आदमीसे) अरे यह क्या हुआ ? अच्छा तू जल्दीसे सीधा इमलीके महल्लेमें जा और उसके पीअर

वालोंको खबर कर कि " सत्यबाला " काल कर गई !
(शारदाचंद्रके कहनेसे आदमी तो उधर गया. आप घरमें आकर देखे तो औरतें रो पीट रही है.)

मालती– (बब्बनको गोदमें लिये हुए बाहर आकर रोती हुई शारदाचंन्द्रसे) आपाजी ! छोटी भोजाई मरगई !

(सत्यबालाके मरनेकी खबर सुनकर सब सगे संबधी अपनी अपनी दुकानें बद करके आगये–सत्यबालाके पीअरके सबलोग, जज्जसाहब, और बब्बनका मामा– युगलकिशोर वकील–वगैरहभी आगये.)

युगलकिशोर– (शारदाचंद्रसे) देखिये साहब ! मैं एक बात आपसे बडी अधीनगीके साथ कहता हू.

शारदाचंद्र– कहिये साहब !

युगलकिशोर– मरने वाली तो मरगई मगर अब रहा उसका अग्निसस्कार, सो तो मै वेदविहित विधिके साथ करूगा! आपके यहा तो उसका न कुछ होगा नाही तुम करोंगे. विचारीका अंतिम सस्कार तो अच्छी तरहसे करदो !

जयंतिसहाय– (शारदाचंद्रका छोटाभाई) सुनिये साहब ! हम अपने घरका जो रिवाज है वही करेंगे, यहासे ले जाकर सिरा लकडियोंमें फूकनेके हम दूसरा कुछ भी नहीं करेगें, और नाहीं पीछे किसीका कुछ किया है. आपने यदि वेद वृदका कुछ झगडा डाला तो अच्छा न होगा ! किसी किसी बातमें आपके निसबत हम लोग सनातनियोंको कुछ - , ` है. भला आप ही कहिये कि,

आधुनिक " स्वामीजी " की कपोल कल्पित लीलाको मजूर करके कौन मुर्देकी मिट्टी खराब करवावे ? बस आप चुपही कर रहियेगा !

युगलकिशोर– वेदके असली रहस्यको तो हमारे स्वामीजीने ही प्रगट किया है. तुम उसे कपोल कल्पित और लीला बतलाते हो ! (फिर कुछ अफसोस सा जाहिर करके) भाई ! इसमें तुम्हारे अधीन कुछ नही है आज कलका जमाना ही ऐसा है कि जो बुरी बुरी बातें और खोटे खोटे रिवाज है वे तो लागोंको अच्छे लगते है और जो अच्छी बातें है वे बुरी लगती है !

जयंतीसहाय– शाबाश ! शाबाश ! आपके बच्चे जिये ! आपके कहनेसे साफ जाहिर होगया कि, दुनियामें जितने मत मतातर है वे सबही अच्छे थे मगर स्वामीजीको बुरे लगे तबही तो उन्होंने सबको बुरे बुरे कहकर उनकी निंदाके जल कुंडमें गोते लगाये ! और अपना जो बुरा मत था उसको अच्छा सिद्ध करनेके लिये " सत्यार्थ प्रकाश " (कहते तो मुझे संकोच होता है) "असत्यार्थ प्रकाश " बनानेकी मुफ्तमें ही तकलीफ उठाई ! सच है आपका कहना यह जमाने काही रंग है ! जो सच्चे धर्मका लोपन करनेवाले देवपूजा जैसे पवित्र मारगका उत्थापन करनेवाले अनेक धूर्त्तानद पैदा होगये है !

युगलकिशोर– खबरदार ! उस महर्षिके बारेमें ऐसे वैसे बेमरजादाके वाक्य बोलने अच्छे नहीं, मै कोई प० सुद-

रसहाय जज्ज नहीं हूं जो वरदास्त कर लूगा ! मुझे सब कुछ मालूम हो गया है जो कि विश्वभरनाथके नाम करण संस्कार करनेके वक्त आप लोगोंने किया मैं उसवक्त हाजिर न था वरना देखते क्या होता ?

शारदाचंद्र– (जरा तेज होकर) अवे ! ओ ! जुगलेके धुगले ! मै जानता हू कि तेरे पास विकालतका चोगा है ! सो भाई माफ कर ! अगर चुप करके मुरदनी में साथ चलना हो तो चल वरना अपने घरका रस्ता पकड !

ब्रह्मानन्द– भला आपाजी साहब ! इनके " स्वामीजी " ने अग्निसंस्कारकी क्या विधि वतलाई है सो तो सुन लो !

शारदाचंद्र– अरे भाई ! " जाना नहीं जिस गाम, क्या लेना उसका नाम " अगर तुझे जाननेकी इच्छा है तो मैं तुझे स्वस्थ चित्त होनेपर " स्वामीजी " का माया जाल अच्छी तरहसे वता दूगा (फिर) अवे वतलाऊगाही नहीं लेकिन कर दिखलाऊगा !

जज्जसाहव– (युगलकिशोरसे) भाई ! अपनेको इस वक्त चुप करनाही ठीक है !

ब्रह्मानन्द– (अपने चाचा जयतिसहाय और यशगोपालसे) चाचाजी ! मै नही चाहता कि इन लोगोंसे इस वातके लिये विरोध किया जावे, यदि इनके " स्वामीजी " के कहे मुताविक अग्निसंस्कार कर देवें तो अपना इसमें

क्या नुकसान है ! उसे जलाना तो यूंभी है और यूंभी औरोके लिये अपने हाथमें है इसको तो जैसे ये कहें वैसे ही करो !

वंशगोपाल– क्या आपाजी करने देवेंगे ?

जयंतिसहाय– पूछ देखो !

वंशगोपाल– आपाजी ! जरा इधर आइएगा ! (एकातमें सबने मिलकर सलाह की और बाहर आकर)

शारदाचंद्र– (अपने बडे लडके वंशगोपालसे), अरे वशू ! बब्बनके मामाको नाराज करना ठीक नहीं इस लिये जैसे ये कहते हैं वैसेही कर लो !

बिरादरीके लोग– (शारदाचद्रकी बात सुनकर) अजी ! क्या लडकोंके कहनेमें लगकर आपकीभी अकल मारी गई है. आपके घरसे ऐसा काम शुरू होना ठीक नहीं है

शारदाचद्र– (लोगोंसे) अरे भाई क्या करें यह मौकाभी ऐसा है कोई हमेशाके लिये थोडेही है अपनेको अवकी दफा यही समझ लेना चाहिये कि हमारे घर मौतही नहीं हुई ! अगर यह पीअरमें मर जाती तो फिर ये लोग (स्वामीजीकी लकीरके फकीर) क्या अपनी रीति करनी छोड देते ? कदापि नहीं !

सबलोग– अच्छा तो आपकी मरजी !

शारदाचंद्र– (युगलकिशोरसे) वकील साहब ! लीजिये जो आपकी मरजीमें आवे करियेगा ! कहिये ! क्या क्या मंगवाया जावे ? क्यों कि हम तो सिर्फ इतना ही

जानते है कि, मुरदेको यहांसे उठाया और मसाणोंमें ले गये लकडियोंमें रखा और फूक दिया ! वस न्हाये धोये और काम हो लिया !

युगलकिशोर– (दिलमें वहनके मरनेकी गमगीनी के हो-नेपरभी अपने धर्मके असूलका पालन होते देख चेहरे पर मुसकराहट लाते हुए जयतिसहायसे) भाई साहव ! अन्दर औरतोंसे कहो कि उसको न्हुलाकर और चंदन वगैरह सुगंधीवाली चीजोंका लेप करके नवीन वस्त्र पहरा दो !

जयंतीसहाय– (औरतोंको कहकर सव काम ठीक कर-वाके युगलकिशोरसे) क्यों साहव अव क्या करे ?

युगलकिशोर– (सस्कार विधि हाथमें लेकर पृष्ट २३८ निकालकर स्वय ही १९ पक्ति पढकर) भाई ! जितना उसके शरीरका भार हो उतना घृत लाओ !

ब्रह्मानन्द– (युगलकिशोरसे) इतना वडा तराजू आपके घर हो तो मगवा लो ! या इसकी लहाशको उठाकर वाजारमें किसीके यहासे वडे कांटेपर चढवाकर वजन करवा लो ! (जो लोग उदास हुए हुए धीरे धीरे रो रहेथे वह ब्रह्मानदकी वात सुनकर मुसकरा उठे)

युगलकिशोर– (ब्रह्मानदकी तरफ हाथ करके) तुम कैसे वेअकल आदमी हो ! कहीं वाजारमें मुरदे तुलवाते भी कभी किसीको देखा है ?

ब्रह्मानन्द– जनाव वकील ... तो वेअकल हू ! मगर

('सईसने वट्ट तो उठाकर गाड़ीमें रख लिये और कांटा पांडि (मजूर) के सिर पर उठवा लाया और आकर दरवाजे पर लगा दिया (जैसे लकडियां तोलने वालोंके टाल (वखार) में लगा हुआ होता है) मुरदनी में साथ जानेको आये हुए सवासौ डेढसौ आदमी कांटे को देखकर ब्रह्मानन्दसे पूछने लगे)

एकआदमी– क्यों भई ! इसमें क्या तुलेगा ?

ब्रह्मानन्द– इसमें ! इसमें तुलेगी " स्वामीजी " की बुद्धि !

लोगोंमेंसे एक– नहीं नहीं सच कहो !

ब्रह्मानन्द– लो ! क्या मैं झूठ कहता हूं ? " स्वामीजी " ने लिखा है कि मुरदेके बराबर घी तोलना !

लोग– अरे भाई ! वकील और जजकी तो अकल मारी गई क्या तुम्हारीभी अकल ठिकाने नहीं है ? तुमही चार पाच सेर घी के लिये क्यों हँसी कराते हो ?

ब्रह्मानन्द– (युगलकिशोरसे) अच्छा भाई हुआ ! देखली आपकी और आपके " स्वामीजी " की बुद्धि ! ये पड़ा है घी ! उठाओ ! जलदी देर मत करो ! (चिढता हुआ दूसरी तर्फ मू करके) अपनी बहनकी लहाश तोलते शरम नहीं आती !! (युगलकिशोर स्मशानमें काम आने वाली सब सामग्री (स्वामीजी के कथनानुसार) बनाकर सबके साथ चल पडे और चार मनुष्योंने 'सत्यबाला' की अरथी को उठाया और " स्वामीजीका नाम सत्य है " की ध्वनी उच्चारण करते हुए स्मशानमें

पहुंचे और वहां 'संस्कार विधि' के पृष्ट २३९ के अनुसार सब काम कराकर अग्निमें प्रवेश कराने बाद नीचे लिखे मंत्रोंकी भरमारसे विगडी हुई हवाकी शुद्धि करने लगे

युगलकिशोर—ॐ अग्नये स्वाहा
ॐ सोमाय स्वाहा
ॐ लोकाय स्वाहा
ॐ अनुमतये स्वाहा
ॐ स्वर्गलोकाय स्वाहा

शारदाचन्द्र— (युगलकिशोरके आगेसे हवनकी वस्तुवाला थाल अपनी तरफ खींचकर युगलकिशोरसे) अरे भाई ! तुम्हारा मंत्र किसीकी समझमें तो आता है और किसीकी नहीं ! सुनो ! जैसे मैं बोलूं वैसे बोलकर आहुती दो.

ॐ सत्रह (१७) वर्षकी उमरमें मर गई स्वाहा.
ॐ दो वर्ष तीन महीनेका पुत्र छोडकर मर गई स्वाहा.
ॐ घरके लोगोंको रुलाती मर गई स्वाहा.
ॐ ब्रह्मानन्दको रडवाकर मर गई स्वाहा.
ॐ स्वामीजीकी बुद्धिको दिखा गई स्वाहा.
ॐ युगलकिशोरकी बहन मर गई स्वाहा.
ॐ स्वाहा स्वाहा स्वाहा (सब वस्तु चितामें एकदम फेंककर) सब लोगोंकी तर्फ हाथ करके)
ॐ स्नान करके घर चलो भाई स्वाहा—आ—

युगलकिशोर- (बडे क्रोध पूर्वक लाल आंखे करके दात पीसता हुआ शारदाचंद्रकी तर्फ हाथ करके) अफसोस बुढ्ढे तो हुए मगर अकल न जाने किधर चली गई !

शारदाचंद्र- बुढ्ढा हुआ हू जबी तो कहता हू कि ये लाल लाल आखे किसी और को दिखाना ! अरे ! शरम नही आती ! हमारे घरमेंसे तो जवान स्त्री मर जावे और तुम लोग स्वाहा स्वाहा करके खिल्ली मचाओ ! बस ! ज्यादा तीन पांच लगाई तो याद रखना !

जज्जसाहब- (युगलकिशोरसे धीरेसे) भाई ! इस वक्त अपने पांच सात आदमी हैं और ये डेढसौ (१५०) सामने खड़े नजर आते हैं इस लिए इस वक्त स्वाहाको बद कर वह जो दूसरे थालमें बची हुई सामग्री है उस सब सामग्रीको एकदम अग्निमें डाल दो और चुप करके चले चलो वरना नतीजा अच्छा न निकलेगा !

युगलकिशोर- (जज्जसाहबसे) ये लोग अपने धर्मके बडे ही द्वेपी है !

जज्जसाहब- भाई अपनी अपनी समझ है. (अनुमान एक घटेके बाद दाहक्रिया हो चुकी सब लोग स्नान करके शारदाचद्रके घरपर आगये और जो कुछ मुरदनीसे आकर करनेका रिवाज था वह करके लोग अपने अपने घरोंको चले गये. जब चार दिन हो चुके (चौथेके दिन) तब बिरादरीके तथा औरभी अन्य लोगोंके आने पर शोक दूर करके शारदाचद्र अपनी दुकानपर गये

और ब्रह्मानंदभी अपनी डयूटी (नौकरी) पर चला गया. अलीगढमें उसको अस्सी (८०) रुपये मासिक मिलते थे मगर जातेही पाच रुपयेकी तरकी होकर उसको इटारसी जाना पडा. इटारसीमें ब्रह्मानदका दो आर्यसमाजियोंके साथ मेल हो गया उनके सहवाससे ब्रह्मानदने "स्वामीजी" के बनाये हुए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेद भाष्यभूमिका और यजुर्वेद भाष्य आदि ग्रथोंको देखा उनके देखनेसे वह बड़े विचारमे पड गया मनमें कहने लगा कि यह तो अजबही पंथ है! एक दिन अपने मित्रोंसे कहने लगा कि—भाई साहब! जैसा "स्वामीजी" लिखते हैं वैसा आर्यसमाजी लोग अमल क्यों नहीं करते?

तब वे "ब्रह्मानन्द" को कहने लगेकि भाई! हमसे तो जितना होता है उतना अमल करते है, हा! आप पूरा पूरा अमल करनेकी हिम्मत रखते होतो बडी अच्छी बात है लेकिन कई बातें ऐसी है जो "स्वामीजी" ने न जाने क्या सोचकर लिखडाली हैं कि, जिनके पढनेसे हमतो नहीं मगर हमारे मातापिता और घरकी औरतें बडीही चिढती हैं। इस लिये हमसे उन बातोंका पूरापूरा पालन नहीं हो सकता। ब्रह्मानन्द अपने मित्रोंका यह कहना सुनकर बोला कि—अजी साहब! यह क्या? "स्वामीजी" के लेखको पूरापूरा अमलमें लाना कोई मुशकिलकी बात है? यह आपके दिलकी कमजोरी है

दूसरा कुछ नही ! मै तो मानूगा तो "स्वामीजी" की कुल वातोंको मानूंगा चाहे दुनिया कुछही क्यों न कहती फिरो ! यह क्या एक बात मानी और एक न मानी ! देखिये ! मेरी औरत मर गई है, अब मेरे लिये मेरे माता पिता दूसरी शादीके लिये विचार कर रहे है, सो मैंने आज एक पत्र लिख दिया है कि, अगर आप लोग मेरे विवाहके लिये आग्रह करते हो तो साफ बात है कि, मैं सामाजिक रीती (स्वामी दयानंदजीके सिद्धात) के मुताबिक ही विवाह करूगा इत्यादि देखू क्या उत्तर आता है !

समाजी मित्र– अब आप पके आर्यसमाजी हो चुके मगर देखना अब फिर न जाना !

ब्रह्मानन्द– कभी नही ! मगर हा जो समाजी लोग केवल दिखाने मात्रही "स्वामीजी" का पल्ला पकडे हुए सिद्ध होते नजर आवेंगे तो मेरा अखत्यार है, मै स्वतंत्र विचारका आदमी हूं न्यायपर चलना मेरा काम है. (इधर घरपर)

शारदाचंद्र– (अपने बड़े पुत्र जयंतिसहाय और यशगोपालसे) क्यों भाई ! क्या सलाह है ? "ब्रह्मानद" का विवाह दूसरा करनाही होगा !

जयंतिसहाय– वेशक करनाही है. अम्माजीभी दो चार दफा कह चुकी कि. तुम "ब्रह्मानद" के लिये क्यों

किसी लडकीकी तलाश नहीं करते ? मगर ये उसका पत्र पढ लो आजही आया है.

शारदाचंद्र– क्या लिखा है ? सुनाओ !

जयतिसहाय– (पत्र जेवसे निकालकर) " मेरे पिताजी
" साहव ! नमस्ते ! मैंने सुना है कि, आप मेरे विवा-
" हके लिये तरदत कर रहे है सो मेरी मनशा विलकुल
" नही है अगर आप या माताजी या भाईसाहव वगैरह
" मेरे विवाहके लिये आग्रह करते हों तो साफ वात है
" कि, मैं सामाजिक रीति (स्वामी दयानन्दके सि-
" द्धात) के मुताविकही करूंगा ! लडकी किसी अच्छे
" खानदानकी पढी लिखी सामाजिक सिद्धातोंमे प्रेम
" रखनेवाली हो ! " और विवाहसे पहले " स्वामी-
" जी " ने सत्यार्थप्रकाशमें जो वरकन्याकी परिक्षा
" करनेकी तरकीव वतलाई है उसके मुताविक कुल
" कार्रवाई होनी चाहिये अगर आपको और लडकी
" देनेवालेको यह वात मजूर हो तो लिखियेगा !
" वादमें मैं विवाह करना मंजूर करूगा.

आपका ब्रह्मानन्द

चैत्र शुक्र २ संवत १९४३

शारदाचद्र– अरे जयति ! यह क्या हुआ ? क्या ब्रह्मानद दयानन्दी वन गया ? मुझे तो यकीन नहीं आता !

जयंतिसहाय– मेराभी यही ख्याल है.

शारदाचंद्र– ओहो ! मै उसकी चालाकीको जानता हूं तुम उसके लिये पहले लड़कीकी तलाश करो पीछे उसे लिखना.

जयंतिसहाय– आपाजी ! आपका कहना तो ठीक है मगर बिरादरीके लोग (सामाजिक रिवाजके अनुसार विवाहविधि) नहीं मानेंगे ! अगर मानभी गये तो यह वात अच्छी नहीं है, क्यों कि जगह जगह तो सामाजियोंको फिटकार मिलती है. और घरमें कोई जरा चार अक्षर पढ़ी हुई आ गई तो औरभी टंटाही खड़ा हो जायगा ! मुझे तो यह वात पसंद नहीं है. (थोडी देरके वाद सोचकर) आपाजी ! दूसरे युगलकिशोर आदिके झगड़े टंटेको आपने देखही लिया है, वे वहुतही चिढ गये हैं, उनका जहांतक जोर लगेगा क्या किसी समाजीको लड़की देने देवेंगे ?

शारदाचंद्र– वेटा ! तुमतो भोलेहो ! विरादरीको समझाना अपने हाथमें है. अच्छा ! दूसरे जो पढ़ी लिखी आयगी तो क्या सिरपर पैर धरकर चलेगी ? हॅं ! कुछ डर नहीं है ! खैर यहतो ठीक, मगर ये क्या कहाकि, वो किसीको लड़की नहीं देने देवेंगे ! अरे ! तुम देखोतो सही लो आजही लो ! मैने तुमसे जिकर ही नहीं किया, पंडित हरदत्तके दो लड़कियां है, जिनमें एक पंद्रह वर्षकी.

उन्होंने मुझे किसीके हाथ कहलायाभी है कि, मैं आपसे ब्रह्मानंदके संबंधमें मिलना चाहता हू.

(इतना कहनेके बाद पंडित शारदाचंद्र अपने बड़े भाई और लडकोंके साथ सब सलाह करके रोटी खाकर अपनी दुकानपर चले गये. वहासे एक आदमीको भेजकर पंडित हरदत्त (कन्ट्राक्टर) को कहलायाकि; आपको शारदाचंद्रने याद किया है, पंडित हरदत्त भी शारदाचंद्रके सदेशेको सुन उस आदमीके साथही अपने भाईकी दुकानसे उठकर वहा आये.

पं. हरदत्त– (शारदाचद्रको देखतेही) नमस्ते साहब !

शारदाचद्र– (अदबके साथ) आइये ! आइये ! मिजाज खुश !

प. हरदत्त– अनायत आपकी !

शारदाचंद्र– (उठकर) चलिये ऊपर ही चौवारेमें बैठें ! (दोनो जने दुकानके ऊपर चौवारेमें जाकर बैठ गये, वहा दो तीन आदमी जो दुकानका काम करतेथे उन्हे नीचे भेजदिया.)

प. हरदत्त– मुझे आपने याद किया बडी मेहरबानी की फरमाइयेगा क्या हुकम है ?

शारदाचंद्र– ब्रह्मानंदके संबधमें आपने किसीसे कुछ जिकर भी किया था ?

पं. हरदत्त– जीहां ! कियातो था, कहिये ! आपकी क्या मनशा है ?

शारदाचंन्द्र– भाई साहब ! आप जानते ही हो ! आप कहिये कि, अपनी बड़ी पुत्रीकी सगाई ब्रह्मानदके साथ करनेकी यदि आपकी मनशा होवे तो हमें मंजूर है वरना हम दूसरी जगहकी मांग मंजूर करें !

पं. हरदत्त– आप इतनातो समझे कि, अगर मेरी मनशा न होती तो मैं आपको इसके बारेमें कहलवाताही क्यों ? मगर जरा इतनी बात है कि, मेरी बडी लड़कीके ख्यालात कुछ नई रोशनीके साथ मिलते जुलते है, और जबसे मेरे पिताजी और भाई साहब आर्यसमाजके लाइफ मेंबरबने हैं, तबसे उन्होंने प्रतिज्ञा करली है कि, हम " स्वामीजी " के कथनसे अन्यथा न चलेंगे ! और मेरीतो आदत आप जानते ही हो कि, मुझे आर्यसमाजपर विशेप प्रीती नहीं और सनातनधर्म पर द्वेप नहीं और नाहीं धर्म सबधी चरचा करनेको वक्त मिलता है ! पिताजी के इस लिहाजसे आप मुझे भले समाजी समझलें ! मेरे घरवाली की पूरी मनशा यह है कि, अपनी बेटी " माया " का विवाह ब्रह्मानन्दके साथ हो, तो अच्छा है, उसके कहनेसे ही आपको कहलवायाथा मगर जिस कामको मैं करूगा उसको मेरे पिता या भाई खुशीसे मजूर करेंगे; सिर्फ इतनी बात है कि, समाजी

रस्मोरिवाजके साथ हमारे पिता विवाह करनेको कहेंगे वो आपने मजूर करलेना !

शारदाचंद्र– आप क्या कहते ह ? यहां तो पहलेही ब्रह्मानंद यह कह रहा है कि, मैं यदि विवाह करूंगा तो आर्य विधिके ही मुताबिक करूंगा, वरना नहीं ! लो ये देखो उसकी चिठ्ठी !

पं० हरदत्त– (चिठ्ठी पढकर और खुश होकर) ये पत्र आप मुझे दे दीजीयेगा, क्यों कि इस पत्रको पढ़कर मेरे पिताजी और भाईसाहब बहुतही खुश होंगे और ये कार्य वो स्वयं ही करेंगे और आपसे मिलेंगे ! मगर आप अब और कहीं लडकीकी तलाश न करे, मेरी लड़की (बड़ी) आपके ब्रह्मानन्दको हो चुकी !

जयंतिसहाय– (पिता और हरदत्तकी क्या बाते होती हे ये सुननेको आ बैठाथा हरदत्तसे बोला) हैं ! है ! पंडितजी ! अभी एकदम ऐसा मत कहो ! क्यों कि, जब तक ब्रह्मानन्द विवाहसे पहले " स्वामीजी " के बनाये हुए " सत्यार्थप्रकाश " में लिखे अनुसार आपकी लड़की " माया " की परीक्षा नहीं ले लेता वहा तक " स्वामीजी " का कथन माना नहीं जा सकता. "स्वामीजी" के कथनसे विपरीत चलना आर्यसमाजी भाईयोंको गुरुके वचनोंका अनादर करना नहीं तो और क्या ?

पं० हरदत्त– अजी बस करो ! कभी विवाहसे पहलेभी

लडका लडकी की किसी वातकी परीक्षा कर सक्ता है ! तुम्हारा तो यह कहनाभी वेशरमीसे भरा हुआ है !

जयंतिसहाय– भाईसहब ! अगर यह वात मैं अपनी मरजीसे कहता हूं तो मुझे वेशरम कहना ठीक है, लेकिन मैने तो आपके "स्वामीजी" के अक्षरोंको देखकर कहा है. अगर ये वात आपको वुरी मालूम देती है तो आप अपने "स्वामीजी" कोही वेशरम कहो, या अपने पिताजी और अपने भाईसाहवको वेशरम कहो, जिन्होंने "स्वामीजी" के कथनको माना है ! और दूसरी वात यह है कि, जवतक आपकी लडकी "माया" की परीक्षा (स्वामीजीके कथनानुसार) "ब्रह्मानंद" न कर लेगा वहा तक इस वातको कभी मजूर नहीं करेगा !

पं० हरदत्त–अरे भाई ! यह तुम क्या कहते हो ? मैंने तो अभीतक किसीभी खानदान (रईस) के घरमें ऐसी कार्रवाई होती नहीं देखी ! कि जहा विवाहसे पहले लड़कीकी परीक्षा हुई हो !

जयंतीसहाय– तो वस जो आर्यसमाजी ऐसा नहीं करते वे लोगोको धोखेमें डालने वाले हैं ! क्यों कि स्वामीजीके कथनसे उलटा चल रहे है !

पं० हरदत्त– भाई ! मुझे तो पूरी तरहसे मालूम भी नहीं है कि "स्वामीजी" ने क्या लिखा है ? और क्या माना है ? अगर यह वात लिखी है तो वहुत वुरी है ! मैं इस

वातको मानने के लिये हर गिजभी अपनी राय नहीं दूंगा! बिरादरीके लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे कि, अपनी लडकीयोंका इम्तिहान (परीक्षा) दिला दिलाकर व्याहने लगे! फर्ज करो अगर पहले लडकेने नापास की तो दूसरेके पास गई, उसने भी नापास की तो तीसरेके पास गई, उसने भी नापास की तो फिर वो कौन बेवकूफ औरतका लोभी है? जो तीन लडकोंसे फेल (नापास) की हुई लडकीको विवाहेगा!

और अगर फर्ज करो लडकी ही लडकेको फेल (नापास) करदेवेतो लड़के वालोंको कितनी शरमिन्दगी उठानी पड़ेगी! और उम्मेद है कि, कोई शरमदार लडका शरम का मारा अपनी जानपर ही खेल जावे! तो भी तअज्जुव नहीं!

जिस आदमीने औरतसे हार खाई उस आदमीको मूह दिखलाना कितनी बड़ी शरमकी बात है! मुझे तो यकीन नहीं आता कि "स्वामीजी" ने ऐसा लिखा हो!

जयतिसहाय– अच्छा! अब आप अपनी लडकी का विवाह "स्वामीजी" के लिखे मुताबिक करनेको कहते ही हो, और इधर मेरे भाई "ब्रह्मानन्द" को दयानंदके भक्त आर्यसमाजियोंकी सोहबत हो ही चुकी है "हाथके कंगनको आरसी क्या?" "स्वामीजी" ने ऐसा लिखा है, या कैसा लिखा है? सब मालूम हो

जावेगा ! पहले आप अपनी लड़की हमारे घर देनेका पक्का निश्चय कर लीजीये, और बुद्धिरूप कसौटीसे "स्वामीजी" के लेखरूप सोनेकी परीक्षा कर लीजीये कि, उनकी बुद्धि इस जमानेके लिए कहांतक दौडकर थक गई !

पं० हरदत्त–भाईसाहब ! मरदोंकी जबान एक होती है जब मैं अपनी जुबानसे अपनी लडकी आपके घर देनी मंजूर कर चुका हूं तो अब चाहे मेरा पिता या भाई मुझसे फन्टही क्यों न हो जावें ! मगर " स्वामीजी " सबधी जो भूत मेरे अंदर आपने भरा दिया है सो अब जाता हू और भाईसाहबसे पूछता हू, मगर मेरा पूछना ही फिजूल है, क्यों कि आपके "ब्रह्मानन्द" ने ही " सरस्वतीजी " की सरस्वतीको पकडा है उसमें हमारा क्या जोर ? लो मैं जाता हूं !

(इतना कहकर प० हरदत्त तो अपने घर गये और अपने पिता और भाईसे घरकी सब औरतोंके समक्षमें बैठकर बात करने लगे, पासमें "माया" भी खडी है)

पं० हरदत्त– (पितासे) चाचाजी ! मैं किनारीवाले शारदाचद्रके छोटे लड़के " ब्रह्मानन्द " को इस अपनी " माया " के लिये मंगनी कर आया हू, आप कहिए अब क्या करना चाहिये ?

कीर्त्तिप्रसाद– बेटा ! शारदाचंद्रको तो मै जानता हूं मगर

उसका छोटा लडका " ब्रह्मानंद " कौनसा है ? सो मेरे ध्यानमें नहीं आता ! जयतिको तो मैंने देखा है

माया– (अपनी दादी रुक्मणीके कानमें धीरेसे) दादीजी ! वो ही न ! जिसके साथ " सत्यबाला " हकीमजीकी बहेन व्याही हुईथी !

रुक्मणी– बैठ चुप होके ! मैं जानती हूं ! (फिर अपने पुत्रसे) क्या वोही जो इमलीके महल्ले में युगलकिशोर वकीलकी छोटी बहेनसे व्याहा हुआथा ?

पं० हरदत्त– हां ! हां ! वही.

रुक्मणी– लडकातो अच्छा है ! उमर उन्नीस या बीस वर्षकी होगी !

कीर्तिप्रसाद– हा हा ठीक समझा समझा ! जो रेलवेके महकमें में अस्सी (८०) रुपये तनखाह पाता है.

पं० हरदत्त– अबतो पांच (५) रुपये तरकी हुए हैं और तबदील होकर "इटारसी" गया है.

कीर्तिप्रसाद– बेटा ! बात तो ठीक है, मगर हमारा विचार तो उसके साथ विवाह करने का है, जो अपने आर्यधर्मको पालता होवे ! उनके घरके लोगतो धर्मके नामसे ही कोसों भागते हैं धर्म करना तो दरकिनार रहा !

पं० हरदत्त– (जेबसे एक पत्र निकालता हुआ) नहीं नहीं !

पिताजी ! यह आपका ख्याल गलत है ! उसके मा बाप चाहे कैसेही हों ! मगर उसके (ब्रह्मानन्दके) ख्यालतो इस पत्रसे देखिये उसने अपने बापको लिखा है, सो यह पत्र मै ले आया हूं, येलो आप सुनलो कि, क्या लिखता है ? (पत्र ऊंचेसे पढकर सुना दिया जोकि सबने सुना)

शिवदत्त- (हरदत्तका भाई अपने बाप कीर्तिप्रसादसे) चाचाजी ! यह क्या ? मैंने तो सुना था कि अपनी स्त्री "सत्यबाला" के मरने पर उसने युगलकिशोर वकील वगैरह दो तीन जनोंके साथ बडी ही झंझंट बाजी कीथी और अपने धर्मका बड़ा फजीता किया था और "स्वामीजी" के बारेमें भी बहुत कुछ बुरा भला कहा था !

प० हरदत्त- मै नहीं मान सकता कि, वह लडका ऐसा हो!

रुक्मणी- (शिवदत्तसे) नहीं बेटा शिवदत्त ! मैने उसका सारा हाल सुना है. बल्कि आज चार पाच रोज हुए कि "माया" की अम्मा, (राधा)को "पंडित सुन्दर सहाय जज"की बहु मिलीथी उसने उसका चालचलन बहुतही अच्छा बतलाया, और देखनेमेंभी खुबसूरत है ! अभी चेहरेपर रेखभी नहीं आई ! सच पूछो तो मेरा दिलतो यही चाहता है कि, इस काममें देर न होनी चाहिये ! अगर ये अवसर हाथसे खो दोगे तो " माया " के लिए ऐसा लडका (वर) फिर मुश्किलही मिलेगा ! " सत्यबाला " दो अढाई साल- का लड़का छोडकर मर गई है, उसे उस (ब्रह्मानंद) की

बहेन (मालती) पालती है ! इस कार्यमे देर मत करो ! घर अच्छा है, और वरभी अच्छा है ! (यह बात सबने मजूर कर ली और पासमे खडी हुई "माया" मुशकराई)

कीर्त्तिप्रसाद– (हरदत्तसे) अच्छा तो कहला भेजो !

रुक्मणी– कहलाना क्या है ? सगन भेजदो !

कीर्त्तिप्रसाद– मगर उनसे यह करार कर लेना कि, निवाह वैदिक रीतिसे होगा !

माया–(अपनी मा–' राधा ' से) अम्मा ! देखो दाऊजीने क्या अच्छी बात कही हैं, और होनाभी यूही चाहिये ! ये सगन वगन पीछे भेजवाना पहले यह लो " सत्यार्थप्रकाश " समुल्लास चौथा पृष्ठ ९२–९३ में अपने " परमपूज्य श्री स्वामी दयानद सरस्वतीजी " विवाहके पहले लडका और लडकीको क्या करना फरमाते है ? इसको पढो !

५० हरदत्त–(अपनी लडकीसे आखे घूरकर) बेटी ! तुझे चुप रहना चाहिये ! कभी शरमदार भले घरकी बेटिया इस प्रकार नहीं बोला करती ! जो कुछ बेटीके मा बाप करें उसे शिर माथेपर लेना चाहिये. तूं पंद्रह (१५) वर्षकी हुई है तेरेको मा बाप और दादा दादीके सामने इस सलाहको देते शरम नहीं आती ?

कीर्त्तिप्रसाद–(हरदत्तसे) उसे ठीक बात कहती हुईको क्यों

धमकाता है ? (पोती-"माया" से) बेटी! तूंने ठीक कहा है, सब कुछ "स्वामीजी" के कथनानुसार ही कार्य किया जावेगा ! सुनातो पढकर ! "स्वामीजी" ने क्या लिखा है ?

माया- (बेधडक होकर) मैं कौनसा बापके धमकाने पर कॉन धरती हू, इस वक्त इनके दबकानेको मानकर चुप हो रहूंगा तो न जाने किस अनघड़के पाले पडूं ! इनका क्या विगडेगा ? सारी उमरका रोनातो मेरी जानका रहेगा ! सच कहते है जहा ऐसी ऐसी बुद्धिवाले लोग हों वहा उन्नति नहीं हो सकती. दाऊजी ! जब मैं यूरोपकी स्त्रियां और लडकियों का इतिहास पढती हू तो मुझे ऐसा आनन्द पैदा होता है कि कुछ मत पूछो ! और मैं परमेश्वरसे प्रार्थना करती हू के हमारे देशकी स्त्रियोंकोभी इस प्रकारकी आजादी मिलेगी !

पं० हरदत्त- (अपनी लडकीके यह वचन सुनकर मनही मनमें) हाय हाय ! यह लड़की है या कोई आफत ? यह मेरी पुत्री कहलानेसे तो मरजाती तोही अच्छा था मगर खैर इसके मुहसे सारी उमरका रोना निकला है तो रोनाही रहेगा !

माया- (सत्यार्थ प्रकाशको हाथमें लेकर कीर्त्तिप्रसादसे) लो दाऊजी ! सुनो—"उन कन्या और कुमारोंका "चित्र अर्थात् जिसको फोटोग्राफ कहते है अथवा प्रति "कृति उतारके कन्याओंकी अध्यापिकाओंके पास

" कुमारोंकी. कुमारोंके अध्यापकोंके पास कन्याओंकी
" प्रतिकृति भेज देवें, जिसका रूप मिल जाय उस उसके
" इतिहास अर्थात् जन्मसे लेके उस दिन पर्यंत जन्मचरि-
" त्रका पुस्तक हो उसको अध्यापक लोग मगवाके देखें
" जब दोनोंके गुण कर्म स्वभाव सदृश हों तब जिस
" जिसके साथ जिस जिसका विवाह होना योग्य समझें
" उस उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिंब और इतिहास
" कन्या और वरके हाथ में देवे और कहें कि इस में
" जो तुम्हारा अभिप्राय हो सो विदित करदेना, जब
" उन दोनाका निश्चय परस्पर विवाह करनेका हो
" जाय तब उन दोनोंका समावर्त्तन एकही समयमें
" होवे, जो वे दोनो अध्यापकोंके सामने विवाह करना
" चाहें तो वहा, नहीं तो कन्याके माता पिताके घरमें
" विवाह होना योग्य है, जब वे समक्षमें हों तब उन
" अध्यापकोंका कन्याके माता पिता आदि भद्रपुरुषोंके
" सामने उन दोनोंकी आपसमें बातचीत शास्त्रार्थ क-
" राना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछें सोभी सभामें
" लिखके एक दूसरेके हाथमें देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें
" जब दोनोंका दृढ प्रेम विवाह करनेमें हो जाय तबसे
" उनके खानपानका उत्तम प्रबंध होना चाहिये कि
" जिससे उनका शरीर जो पूर्व ब्रह्मचर्य और विद्या-
" ध्ययन रूप तपश्चर्या और कष्टसे दुर्बल होता है वह
" चद्रमाकी कलाके समान बढके पुष्ट थोडेही दिनोंमें हो
" जाय पश्चात् जिस दिन कन्या रजस्वला होकर जब

" शुद्ध हो तब वेदी और मंडप रचके अनेक सुगधादि
" द्रव्य और घृत आदिका होम तथा अनेक विद्वान पु-
" रुष और स्त्रियोंका यथायोग्य सत्कार करे, पश्चात्
" जिस दिन ऋतुदान देना उचित समझे उसी दिन सं-
" स्कार विधि पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सब कर्म
" करके मध्यरात्री वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके
" सामने पाणीग्रहण पूर्वक विवाहकी विधिको पूरा करके
" एकात सेवन करे, पुरुष वीर्य स्थापनकी और स्त्री
" वीर्य आकर्षणकी जो विधि है उसीके अनुसार दोनों
" करे " (इत्यादि सुनाकर फिर कहने लगी) दाऊ-
जी ! देखो यह विवाहकी विधि बताकर आगे फिर
लिखा है कि–" जब वीर्यका गर्भाशयमें गिरनेका समय
" हो उस समय स्त्री और पुरुष दोनो स्थिर, और ना-
" सिकाके साथ नासिका नेत्रके सामने नेत्र अर्थात्
" सूधा शरीर और अत्यत प्रसन्न चित्त रहे डिगे नहीं
" पुरुष अपने शरीरको ढीला छोडे, और स्त्री वीर्य-
" प्राप्ति समय अपानवायुको ऊपर खींचे योनीको ऊपर
" सकोचकर वीर्यका ऊपर आकर्षण करके गर्भाशयमें
" स्थित करे. "(मायाकी मां और दादी वगैरह घरकी
सब औरतोंको वडी भारी शरम आई मनही मनमें वि-
चारने लगी कि–हाय हाय ! कैसी वेशरम लडकी है ?)

प० हरदत्त– (क्रोधमें आकर "माया"के हाथसे "सत्यार्थ प्रकाश " छीनकर अपने बापसे) गजबरे गजब !

चाचाजी! क्या कहना है? आपने इसको वहुतही अच्छी तालीम दी और वैदिक धर्मका मर्म सिखलाया है! (अधिक क्रोध) वस! मेरा आपसे कोई तअल्लुक नहीं आप जुदे, मैं जुदा! भरपाया आपसे और आपके धर्मसे! धिकार है इस धर्मके चलाने वालेको क्या कहूं तू मेरा वाप है वरना अभी तमाशा दिखादूं (कुछ देर वाद) अरे कैसे गजवकी वात है! आजतक मैं नहीं जानताथा कि स्वामी ऐसा अनार्यधर्म चलाने वाला है! मैंने तो नाहक ही सभाओंमें चदाभरा, नाहक ही आर्य मैसिन्जरादि अखवारों का ग्राहक वन अनार्यधर्मी कहलाया. (अपनी मासे) अरी मा! तेरा सत्यानास जाय! तूने भी कुछ ख्याल नहीं किया कि, ये कलजोगन! क्या पढती है? आर्यकन्याशालामें क्या पढाई और क्या तालीमदी जाती है? कभी कुछ ख्यालभी नहीं किया कि, ये क्या धर्म पालती है? (अपनी औरतसे दात किट किटाकर) अरी राड! हरामजादी! तैंने इस जहरकी वेल को वढाकर क्यों मेरी रईसी इज्जतका नाश किया! (वेटोसे) अरी! कुलकी जस कीर्त्तिपर पानी फेरने वाली कुमाया! क्या तुझे अपने सामने वैठे हुए मा, वाप, दादी, दादा भी नजर नहीं आते? (दात पीसकर) अरी वेहया वेशरम वदजात! इतने वडे वडे दयानदके भगत और जो मोहरी वने फिरते हैं, उनके घर में सैकडों व्याह हुए हैं, क्या तुने कहीं देखा या सुना कि, फलाने के घर-फलानेकी लडकीका विवाह इस प्रकारसे हुआ?

मुझे अफसोस तो इसबातपर आता है कि, हमें इस लेख को सुनते ही बडी शरम आती है ! तुझ से पढा किस तरह गया ? तेरे जैसी अच्छे घरानेकी पैदा हुई ऐसे लेखपर अमल करने कराने को तयार हों तो इससे बढकर और अनर्थ क्या होगा ?

क्या करु मै उन भले आदमीओं को जबान दे आया हूं वरना सारा ही दयानन्द के मतका पालन करा देता और तुझे समाजका ताज पहना देता ! (इस प्रकार हरदत्तको बोलते हुए देखकर किसीकीभी सामने उत्तर देनेकी हिम्मत न चली इतनेमें)

माया—(बेधडक होकर बापसे) बस पिताजी ! बस !

उची नीची जुबान मत निकालो ! अगर हरामजादी हु तो आपकी हुं ! बदजात हुं तो आपकी हुं ! मगर आपको याद रहे कि मैं उसके साथ विवाह कराने को कदापि तैयार नही हु, जिसकी कि, मै अपनी मरजी के मुताबिक परीक्षा न करलुं ! आप क्या मेरी जिन्दगी को खराब करना चाहते हो ? आपने कहा है कि, ऐसा तो काम बडों बडों के घरमेंभी नहीं हुआ ! आपको क्या मालुम है कि, क्या होता है ? और हमारे पूर्वज क्या करते आये हैं ? आप तो जबसे होश सभाली है तबसे कन्ट्राक्टर (ठेकेदार) बनकर, बन बन में लकडियोंका ठेका लेते फिरे हो ! अगर आपने पूर्वजोंका इतिहास पढा होता तो कभीभी ऐसे असमंजस वचन मुंहसे न निकालते !

और न "स्वामीजी" को बुरा भला कहते ! पिताजी ! ये याद रखो कि, मुझे मरजाना तो मंजूर है, मगर यह उत्तम आर्य धर्म और "स्वामीजी"के किये हुए वेदों के अर्थ और बतलाये हुए गुप्त रहस्योंसे बरखिलाफ चलना मंजूर नही ! मेरे दादा वगैरह से जुदा होकर क्या मुझे आप अपनी मरजीके मुताबिक किसी के साथ ब्याह दोगे ? आप इस ख्याल मे मत रहना ! राज्य गवर्नमेन्ट सरकार महाराणी मलका का है, इस लिये आपको लाजिम है कि, आप घरमे झगडा मत डालो और मेरे लिये "स्वामीजी" के ही वचन पालो ! आगेके लिये आपकी मरजी ! अपनी सारी जिन्दगी पोप धर्म में ही गालो ! आप मुझे आर्य ब्रह्मानन्द को देनेके लिये उसके बापसे प्रतिज्ञा करचुके हैं, सो बहुत अच्छा मै आपकी, प्रतिज्ञाका खडन नहीं होने दुंगी, यह मेरा भी धर्म नहीं है ! लोग बिरादरी में हाँसी होने का ख्याल अगर आपको होतो यह आपका गलत ख्याल है, विवाह में आर्य धर्म के निन्दक पोप पाखंडियों को बुलाना ही क्यो ? जो हाँसी करें ! आपको चाहिए कि एक पत्र छपवाकर आर्य विद्वानो और बडे बडे ग्रेज्युएटो तथा प० सुन्दर सहाय P C जज आदिकोंको भेज दीजीये, और आर्य सभाओ को भेजदीजीये, और बाहर शहरो में भी भेजदीजीये गा. जैसी उन विद्वान आर्य पडितो के आनेसे मेरे विवाह मडपकी शोभा होगी क्या उन पोप पाखडी अनपढो के ओह्दसे वैसी होगी ? नहीं ! हरगिज नहीं ! और उन

लोगों के आने से आपका महत्व बढेगा और सारे हिन्दुस्तानमें आपका नाम प्रसिद्ध होगा ! आप प्राचीन रीती के अनुसार प्रवृत्ति करने वाले कहलायेंगे, इसवक्त आपको बिरादरीका खौफ करना बिलकुल ही निकम्माहै, धूल डालो इस पोप बिरादरी के सिरपर ! जो आर्य हैं वही हमारी बिरादरी है बाकी तो सब बुराद्री ही हे !

आज कल ऐसा जमाना आ गया है कि, जो अच्छी बात बतलाओ तो बुरी मालुम देती है ! इसकी वजह यही है कि, उनको बचपन से तालीम ठीक नहीं मिलती ! मैं देख रही हुं कि, इसवक्त मेरी मा, दादी वगैरह सबही दांत पीस रही है इसकी वजह यही है कि, ये अनपढ और मूर्खनी है! दूसरी को पढी हुइ देखकर इर्षा करती हैं! पहले भी मैं इसके मूंह से सुनचुकी हूं कि " राय साहब ने ' विद्या ' को विद्या क्या पढाई है हमसे घडीभर बात करनी तो दूर रही सीधे मूह बोलती भी नहीं ! ऐन्ट्रेन्सका तो इम्तिहान दिला दिया न जाने अभी कहा तक पढाये ही जायेंगें ? " अब सोचना चाहिये कि, इनके साथ घडी आध घडी निकम्मी बातें करनी अच्छी या उतनी देर में अपना लहसन्स याद किया जावे वो अच्छा ? (दादीसे) दादीजी,! बुरा मत मनाना तुमतो मुझे बडा प्यार करती और अच्छी तरह रखती हो और तुम्हारीही मेहरबानीसे मैं इतना पढ भी गई ! वरना अम्माकी तरह मै भी रहजाती ! इसलिये गुस्सा छोडदो और जिस तरह से बने आपसमें सलाह करके मेरे

ब्याहकी बात प्रसन्नता पूर्वक करदो बाद में जो बनेगा वो मैं आपही समजूंगी! जब वो आर्य रीति से विवाह करना मजूर करते है तो आपको मेरे लिये मंजूर करना ही पडेगा! मैं ने 'ब्रह्मानंद' को देखा है, वो एक पढा हुआ लायक है, उसके एक लडका "सत्यपाला" से है, सो उसका मुझे कुछ एसा विशेष दुख उठाना पडे एसा नहीं मालूम देता, क्यो कि उसको उसकी बुआ (मालती) पाल रही है, वह अनुमान तीन सालका होनेका आया है (सबके सब "माया" को इस तौर खुले दिल शरम रहित बेधडक देखकर सोचने लगे कि, बस! हद हुई! अब बोलनेकी जरूरत नहीं अबतो जैसे बने वैसे अपनी इज्जत रखनी चाहिये!)

कीर्तिप्रसाद-(हरदत्तसे) बेटा! तूं हमें जुदा होनेकी धमकी देता है सो तेरी मरजी! मगर ये तो बता कि "माया" ने इस वक्त क्या बुरा कहा है? खैर तू जान तेरी लडकी! हमतो आर्य धर्म पर जितना बनेगा उतना अमल करेंगे अगर इस लडकीने जो कहा है उसके मुताबिक काम होगा तो हम तेरे साथ शामिल है वरना तु जान तेरा काम!

हरदत्त-अच्छा पिताजी! (सासभरकर) आपकी मरजी जो आपके मनमें आवे सो करो! कुछ अपनी इज्जतका ख्याल आपकोभी तो होगाही! क्या अपना भला बुरा आप नहीं जानते?

कीर्तिप्रसाद्– मुझे तेरे कहने पर वडा ही अफसोस मालूम होता है कि क्या, जितने सज्जन और आवरुदार वडे वडे ग्रेज्युएटस अहलकार व अमलदार लोग आवेंगे क्या वे सवके सवही तेरी समझमें वेवकूफ है ? क्या उनको अपनी इज्जतका ख्याल नहीं है ? इतना तो जरुर है कि, जो इज्जत और आवरु व विद्या इस वक्त इनको पैदा हो रही है वह आर्य धर्म अगीकार करनेसे पहले कोसो तक भी नजरमें नही आती थी। हां अगर वो कुछ वेद विरुद्ध करते नजर आते हों तो कहनाभी ठीक है, इस लिये मुझे आर्यधर्म (स्वामीजीके वचनों) से विपरीत चलना पसद नही है मैं भला वुरा सव जानता हु ! मै अव ज्यादा वात वढानी ठीक नही समझता अगर विवाह करना हो तो आर्य रीतिसे करनेमें मै तेरे सामिल हुं वरना तेरी लडकी तू जान !

हरदत्त–(अपने कपालको हाथ लगाकर) पिताजी ! कहो आप क्या चाहते है ? मै तो अव जो आप कहो सो करनेको तैयार हुं, मुझे तो इस वक्त आप कहो कि– नगे होकर वजारमें नाच तो मे नाचनेको भी तैयार और नचाने को भी तैयार (अपनी मासे) मा ! मुझे पिताजीका हुकम मजुर है (यह सुनकर सवही हंसपडे)

रुक्मणी–लायक पुत्र हो तो तेरे ही जैसा हो (घरमे अदर से सिवाय कीर्तिमसाद (हरदत्त के पिता) के और

माया के किसीकी भी मरजी नहीं है कि इसका विवाह आर्य विधि से हो। लेकिन क्या करे? आखर लोग दिखावे के लिये नाई के हाथ रुपया नारियल दे भेजा और व्याहका निश्चय हो गया, सहारनपुरसे पंडित मोहनपाल को आर्यविधि से विवाह करानेके लिये बुलवा लिया। और हेन्डबिल छपवाकर सबजगह आर्यसमाजियों को भेजवा दिया कि—

मान्यवर महाशयजी! नमस्ते

सविनय निवेदन है कि दश फरवरी सन् १८९१ वार बुधके रोज मेरे पुत्र हरदत्तकी बडी पुत्री 'माया' का विवाह संस्कार है, विवाह वैदिक रीतिसे होगा. संस्कार करानेके लिये सहारनपुरसे पंडित मोहनपालजी बुलाये गये हैं इसलिये आपलोग पधारकर सभामंडपकी शोभाको बढाते हुए मुझे अनुग्रहित करेंगे। वैदिक धर्मकी उन्नति और शोभा आप पर हि निर्भर है

आपका शुभचिन्तक

कीर्तिप्रसाद.

नोट—दस बजेसे चार बजे तक स्वामीजीके लेखानुसार वर कन्याकी परस्पर परीक्षाका कार्य होगा.

उधर ब्रह्मानन्दभी अपने बाप शारदाचन्द्रके बुलानेपर अपनी एजन्सी (डयूटी) पर एक उम्मेदवार अगडदत्त आर्य समाजीको रखकर घरको आ पहुंचा ! और पूर्वोक्त रीतिसे फोटोपचार हुआ और कीर्त्तिप्रसादने जहां मंडप सजायाथा (राय श्री शंकरकी कोठीमें) मायाको ले जाकर वहां ब्रह्मानदको बुलाया, उसवक्त मान्यवर आर्यसुप्रतिष्ठित महाशयोंसे सभा मंडप भर गया. उनके सामनेही पत्र द्वारा " माया " और " ब्रह्मानद " का " स्वामीजी " के वचनानुसार, सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ९३ के मुताबिक (कन्याके माता पिता आदि भद्र पुरुषोंके सामने उन दोनोंकी आपसमें बात चीत शास्त्रार्थ करना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछे सोभी सभामें लिखके एक दूसरेके हाथमें देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें) इत्यादि कारवाइ शुरु हुई ! मगर उस वक्त " माया" की मा या दादी वगैरह अन्य कोई औरतें हाजर नहीं हुई

पं० मोहनपाल– (ब्रह्मानन्दसे) हा साहब ! अब क्या देर है ? खडे हो जाओ और परमेश्वरकी प्रार्थनाके लिये वेदकी ऋचासे मंगलाचरण करो !

ब्रह्मानन्द– (खडेहोकर) हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे । भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १ ॥

पं० मोहनपाल– बस ! अब आप (अपने सामने खडी हुई को विवाहनेकी इच्छा वाले) को चाहिये कि जो तुम्हारे दिलमें आवे उस प्रकार प्रश्नोत्तर कीजीये ! (मायासे)

भद्रे ! तुम भी शांतिके साथ अपने भावि पतिको उत्तर दो और जो तुमने भी पूछना हो वो पूछो ! आप दोनों का जीवनचरित्र आप दोनोंने सुन ही लिया है.

ब्रह्मानन्द– (मायासे) तुमको कौनसा धर्म मान्य है ?

माया– मुझे वैदिक धर्म मान्य है ! और नाहीं मैं इस वैदिक धर्मसे परे किसी धर्मको मानती हूं !

ब्रह्मानन्द– तुमने कौनसे ग्रंथ पढे हैं ? और किन किन ग्रंथो पर तुम्हारी प्रीति है ?

माया– मैने " आर्यकन्या पाठशाला " की अध्यापिका वीवी पानादेई की मेहरवानी से " स्वामीजी " के बनाये हुए " यजुर्वेद भाष्य " " वेद भाष्य भूमिका " " संस्कार विधि " और " सत्यार्थप्रकाश " आदि ग्रथोंको पढा है, मुझे इन्ही ग्रथों पर प्रेम है !

ब्रह्मानन्द– सत्यार्थ प्रकाशके कितने समुल्लास हैं ?

माया– चौदह !

ब्रह्मानन्द– अच्छा ! बतलाओ कि, यह वर्णन किस ग्रथमें किस जगह " स्वामीजी " ने किया है कि, जिससे कुरुप और वक्रांग संतान न हो !" और गर्भ धारण करनेकी विधि किस प्रकार बतलाई है ?

माया– (कुछ विचार कर) " स्वामीजी " के किये हुए यजुर्वेद भाष्यके अध्याय १९ मंत्र ८८ में इसका वर्णन है.

ब्रह्मानन्द– (हाथ में स्वामीजीके भाष्यको लेकर) अच्छा ! बोलो क्या विधि है ?

माया– क्या मुझे मुह जवानी थोडे ही याद है, लाइये दीजीये मुझे (हाथ लंवा करके) पुस्तक, मै आपको पढ़कर सुना देती हूं ! (ब्रह्मानन्दके हाथसे यजुर्वेद भाष्य ले कर और झट अध्याय मंत्र निकाल कर सुनाने लगी !)

" स्त्री पुरुप गर्भाधानके समय परस्पर मिलकर प्रेमसे पूरित हो मुखके साथ मुख, आंखके साथ आख, मनके साथ मन, शरीरके साथ शरीरका अनुसंधान करकेगर्भको धारण करें जिससे कुरूप और वक्राग संतान न हो ! "

ब्रह्मानन्द्– थैंक्स ! ऑलराइट ! (वाह वहुत ठीक !)

माया– अच्छा अव आप वतलाइये कि, यजुर्वेद भाष्यके अट्ठावीस (२८) में अध्यायके वत्तीसवे (३२) मत्र का " स्वामीजी " ने क्या अर्थ किया है ? यह लो पुस्तक (हाथ वढाकर पुस्तक देती है)

ब्रह्मानन्द्– वस वस ! पुस्तकको तुम अपने पासही रखो ! मुझे " स्वामीजी " का किया हुआ अर्थ याद है. सुनो मै वोलता हूं तुम मिलाती जाओ ! " हे मनुष्यो ! जैसे वैल गौओंको गाभिन करके पशुओको वढाता है वैसे गृहस्थ लोग स्त्रियोंको गर्भवती कर प्रजाको वढावें ! "

माया– (हँसकर) वस साहव वस ! आपने तो हिफ्ज कर रखा है !

ब्रह्मानन्द्– अगर हिफ्ज नकर रखा होता तो तुम्हारे जैसी इन भले आदमियो के वीचमें तोडिया न वजादेती ! और फिर यह भी डर है कि, तुमसे फेल्ल हुआ कि

हिन्दकी लडकियोसे फेल हुआ ! मेरी कोई बातभी न पूछे, और वेदादि शास्त्रको कठस्थ रखना यह अपना आर्यधर्मका कर्त्तव्य है.

माया–आपने सच फरमाया ! " स्वामीजी " ने " सस्कारविधि " के पृष्ठ ११२ में इसो लिये तो लिखा है कि " चाहे मरण पर्यंत कन्या पिताके घरमें विना विवाहके बैठी रहे परतु गुणहीन असदृश पुरुपके साथ कन्या विवाह कभी न करे ! "

ब्रह्मानन्द–हॉ ! मै तुम्हारे कहनेको समझ गया ! कहो मैं तुम्हारे लिये सदृश हू या नहीं ?

माया– (नीची गरदन कर शरमाती हुई धीरेसे) yours is not the question but it appears that you have played a joke (आपका यह प्रश्न नहीं है लेकिन मश्करी ठट्ठा करते हो !)

ब्रह्मानन्द–ओहोहो ! तुम तो इगुलिशभी जानती हो ! नहीं नहीं भला यह वक्त ठट्ठा मस्करी करनेका है ! और फिर इन बड़े बडे महाशय भद्र पुरुषोके सामने ! अगर अकेली होतीं तो बातभी थी ! अच्छा बोलो मेरा वाक्य सर्वथा हमेशाके लिये तुमको कबूल है ?

माया– क्यों नहीं ? जब आपको मेरे वाक्य मान्य है तो मुझे आपके क्यो नहीं ? (थोडी देर ठहर कर) अच्छा ! कहिये कि यजुर्वेद अध्याय ६ के मत्र १४ का "स्वामीजी" ने क्या अर्थ किया है ?

ब्रह्मानन्द्- तुम पहले चौदवां (१४) मत्र तो उच्चारण करो जिससे मुझे भी मालूम होवे कि, तुमको मत्र उच्चारण करना भी आता है या कि नहीं ?

माया- मुझे कंठस्थ तो है नहीं ! लाओ देखकर मंत्र उच्चारण करती हुं ! (बड़े उच्च और मधुर स्वरसे)

वाचं ते' शुन्धामि प्राणं ते' शुन्धामि
चक्षु'स्ते शुन्धामि श्रोत्र'न्ते शुन्धामि
नाभि'न्ते शुन्धामि मेढ्रं' ते शुन्धामि
पायुन्ते शुन्धामि चरित्रां'स्ते शुन्धामि ॥१४॥

पं० मोहनपाल- (ब्रह्मानन्दसे) मैं उम्मेद करता हूं कि इस प्रकारके मधुर स्वरसे इस मंत्रको और ऐसा स्पष्ट और शुद्धतो आप भी उच्चारण नहीकर सकेंगे! अच्छा! अव आप इसका अर्थ पढ़ सुनाइयेगा !

ब्रह्मानन्द्- (मायाके मधुर स्वरको सुनकर लट्टु हुआ हुआ) क्या मैं इसका अर्थ सुनाऊं ! बेहतर हो कि तुम इसके अर्थको अपने दिल ही दिलमें पढ़लो ! मुझे जरा इसके पढ़ने में संकोच होता है !

माया- आप यूं ही क्यों नही कहदेते कि मुझसे पढा नहीं जाता ! अभी तो आप कहतेथे कि " स्वामीजी " के किये हुए अर्थ हिब्ज है अब आपको यादतो है नहीं इस लिये कहते हो कि संकोच होता है ! इसमें क्या संकोच की वात है ? (पं० मोहनपालसे) सुनि-

येगा पंडितजी साहब ! इस अर्थ में क्या ऐसीबात है जो इन्हें संकोच होता है ! लो मैं ही सुनाती हूं आप लोग सुनिये !

" हे शिष्य ! मैं विधि शिक्षाओंसे तेरी जिससे बोलता है उस वाणीको शुद्ध अर्थात् सद्धर्मानुकूल करता हूं ! तेरे जिससे देखता है उस नेत्रको शुद्ध करता हूं, तेरी जिससे नाड़ी आदि बांधे जाते हैं उस नाभीको पवित्र करता हूं, तेरे जिससे मूत्रोत्सर्गादि किये जाते हैं उस लिङ्ग (पुरुष चिन्ह) को पवित्र करता हूं, तेरे जिससे रक्षा की जाती है उस गुदा इन्द्रियको पवित्र करता हूं समस्त व्यवहारोंको पवित्र शुद्ध करता हूं-तथा गुरुपत्नी पक्षमें सर्वत्र " करती हूं " यह योजना करनी चाहिये !" (पंडित मोहनपालसे) क्यों पंडितजी ! इसमें क्या संकोच होनेकी बात है ?

पं० मोहनपाल- नहींजी कुछभी नहीं ! संकोच होनेकी क्या बात है ! !

ब्रह्मानन्द- अच्छा तो पंडितजी ! फरमाइयेगा मैं आपका शिष्य होता हूं ! क्या आप मेरी 'गुदा' की और 'लिङ्ग' की शुद्धि करोंगे ? अगर करोंगे तो क्या इन लोगोंके समक्ष करोंगे ? या अन्दर कोठडीमें ले जाकर !

शारदाचंद्र- (ब्रह्मानन्दसे) अबे ! भूतनीके ! इसवक्त उस विचारीके साथ बात करता है या कि पंडितका चेला बनता है ? पहले उस विचारीको चेली बना ले

बादमें पंडितजीका चेला बनकर शुद्धि कराता फिरियो!

पं० हरदत्त– (इन बातोंको सुनकर दुःखी होता हुआ अपने मनहीं मनमें) धिक्कार है ऐसे धर्मको और लानत है बैठे हुए इन ग्रेज्युएटोंको! और सबसे ज्यादा धिक्कार है मेरी इस लड़की–'माया' को जो इतने आदमीओंमें वेश्या (रंडी) की तरह बोलती हुई जराभी नही शरमाती!! (शारदाचंद्रके कानमें) भाई! मुझे तो ये बातें बहुतही बुरी लगती है! अगर इनमें सनातनधर्मी या और किसी मतके माननेवाला कोई मनुष्य निकल आया तब तो बहुतही फजीता होगा!

शारदाचंद्र– भाई! अब अपना बोलना अच्छा नहीं है चलने दो जैसे काम चलता है, विवाह के बाद 'ब्रह्मानन्द' और 'माया' दोनोंको मैं एकही महीने में ऐसा तीर बना दूंगा कि, इस (अनार्य) धर्मकी धूल यही दोनों उड़ायेंगे! तुम देखते जाओ क्या होता है! दरवाजे पर मैंने अपना चपडासी बिठा रखा है इस लिये सिवा दयानन्दियोंके दूसरा आदमी अंदर नही आ सकता! (ब्रह्मानन्दसे) बेटा! चल आगे अब जो प्रश्न करना है सो कर या उस बिचारीको इजाजत दे ताकि तुझे पूछे! निकम्मी बातोंमें वक्त जाया करना ठीक नहीं!

माया– (अपने भावि पति–ब्रह्मानन्दसे) जाने दो इस बातको! आप ये बतलाइये कि– "ऐश्वर्य की इच्छा रखने वाले मनुष्यको क्या करना चाहिये? इसके बारे

मे "स्वामीजी" का क्या मत है? और वह कहा लिखा है?

ब्रह्मानन्द– तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर मै कागज पर लिख कर दू तो क्या तुम मजूर करोगी?

माया– कागज पर लिखी हुई उन्हीं बातोंको मजूर करूगी जो कि मेरे और आपके गुह्य व्यवहारसे सबंध रखती होगी!

ब्रह्मानन्द– अरे! (अपने मनमें) क्या ये कोई पा . तो नही है? (अव्यक्त चेष्टासे) हु–हु–हुं खैर (प्रगट माया से) हां तो लो! ऐश्वर्य चाहने वालेको क्या करना चाहिये? यही तुम्हारा प्रश्न है न?

माया– (मुसकराकर) जी हा!

ब्रह्मानद– लो सुनो इसका उत्तर (धीरेसे मायाके नजदीक मुह करके) "ऐश्वर्यके लिये बैलसे भोग करे" फिर तुमने इसके साथही पूछा है कि "स्वामीजी" का इसके बारेमें क्या मत है? और वह कहा लिखा है? सोभी सुनो! यजुर्वेद अध्याय २१ मत्र ६० में "स्वामीजी" लिखते है कि–"हे मनुष्यो जैसे आज भली भाति समीप स्थिर होनेवाले और दिव्य गुणवाला पुरुष वट वृक्ष आदिके समान जिस जिस प्राण और अपानके लिये दुःख विनाश करनेवाले छेरी आदि पशुसे वाणीके लिये मेढ़ासे परम ऐश्वर्यके लिये बैलसे भोग करे."

माया– क्या "स्वामीजी" का किया हुआ यह वेद मन्त्रका अर्थ आपको मान्य है?

ब्रह्मानंद्– (विचारे विना ही अभिमानमें आकर) हाँ हाँ! क्यों नहीं !

माया– (मुशकराकर) अब तो मुझे आपके आर्य होनेमें कुछभी संदेह नहीं रहा !

ब्रह्मानन्द्– (मायाको मुसकराती हुई देखकर मनमें) अरे ! मैं तो वहुत भूला जो हां कह वैठा क्यों कि वैलके साथ भोग करना क्या यह मनुष्यका धर्म है उसपरभी अपने आपको आर्य कहलानेवालेका ! क्या ऐसी वातें जिसमें हों वह वेद हो सकता है ? अगर ऐसाही है तव तो धन्य है 'स्वामीजी' को कि, जिन्होंने ऐश्वर्यप्राप्तिका ऐसा सरल मार्ग वतलाया कि, मुहूर्त्त करतेही छ (६) वर्पके लिये आनन्द (कारागारका) मिल जाता है ! मगर अपनी जवानको नहीं फिराना चाहिये ! (मगटमें) मगर इसमें मुझे यह शंका हो रही है कि "ऐश्वर्यकी इच्छाके लिये वैलसे भोग करे" सो मनुष्य तो ऐश्वर्यकी इच्छाके लिये वैलके साथ भोग कर सकता है मगर जिस औरतको ऐश्वर्यकी इच्छा हो तो वो वैलके साथ भोग किस मकार कर सकती है ? यह संशय मेरे दिलमें कितनेहीं अरसेसे पैदा हुआ है ! मैंने 'स्वामीजी' के ग्रंथोंका कई वार अवलोकन किया मगर कहीं भी ऐसा लिखा हुआ नहीं मिला कि "ऐश्वर्यकी इच्छा करनेवाली औरत वैलसे भोग किस मकार करे ?

माया– (हँसकर धीरेसे) आप इस विपयको हाँसी में ही उड़ाकर मुझसे अन्य कोई मश्न पूछो ! मैं ज्युं ज्युं आप

से बात करती हू त्यूं त्यूं ही मेरा दिल विवश होता जाता है, बस ज्यादा क्या कहू ? अब मुझे आपके बगैर दूसरे पतिसे बस है, आपकी आज्ञा सर्वथा मान्य है !

ब्रह्मानन्द्- (पं० मोहनपालसे) अजी पडितजी !

प० मोहनपाल- हाँ भाई ! क्यों ?

ब्रह्मानन्द्- क्यों क्या ? आप तो नींदके झोके खाते है ! क्या रात सोये नही ?
(सभा में सब लोगोंकी हँसा हस)

प० मोहनपाल- (आंखोंको मसलकर) भाई ! इस वकत में नीदका झोका नही खाता तो इसवक्त इन महाशयोंके दिलकी कली कैसे खिलती ? सारी रात खटमलो ने सोंनें नहीं दिया इस लिये नींद आती है ! अच्छा हां अब तुमने क्या किया ? आगे काम चलाओ ! माया के प्रश्नका उत्तर दे दिया ?

ब्रह्मान्न्द्- जी हा । उत्तर दे दिया ! मगर आप जरा इजाजत दो तो मे भी बाहर जाकर अपनी सुस्ती उतार आऊ और जरा पानी पी आऊ ?

शारदाचद्र- (ब्रह्मानन्दसे) अरे ! सुस्ती फुस्ती पीछे उतारते फिरना पहले इस कामको भुगताले ! फिर ये महाशय लोग भी अपने अपने घरोंको जावे !

ब्रह्मानन्द्- आप तो खामुखा जलदी मचाते है देखो तो स्वयवरका टाइम १० से ४ वजे तक का दिया है, और अभी तो ग्यारां ही वजे है, अभी पांच घटे बाकी है,

इतनी वातचितमें तो न मेरी ही तसल्ली हुई है और न इस मायाकी ! (सभा में से एक वृद्ध महाशय शारदाचंद्रसे) नहीं नही जलदी करने की जरूरत नहीं है यह काम आहिस्ते ही होना चाहिये ! यहां हम सव खा पीकर आये है (फिर ब्रह्मानन्दसे) जाओ वेटा ! जाओ ! जरा वाहर फिर आओ !

ब्रह्मानन्द– जी ! वहुत अच्छा ! (इतना कहते ही वाहर आया और उस कोठी (जिस जगह में स्वयंवर का काम हो रहा था) के समीप चादनी चौक में टहलने लगा, इतने ही में क्या देखता है कि " दया " और " नदिनी " नाम की दो विधवा नवयौवना स्त्रिए रोती हुई स्वयंवरके स्थानकी तर्फको आरहीं हैं, उनको समीप आती देख आगे होकर) क्यों वहनों ! तुम क्यो रोती हो?

दया– भाई ! हमारे रोनेको कौन सुनता है ? मगर आप इतना वतलाइये हमने सुना है कि, पंडित हरदत्त सहाय कन्ट्राक्टरकी लड़की " माया " का विवाह शारदाचन्द्रके लड़के " ब्रह्मानद " के साथ वैदिक रीति (दयानन्द सस्कार विधि) से होना स्वीकार हुआ है ! सो आज राय श्री शकरकी कोठी में उनके निमित्त स्वयंवर रचा गया है, वहा पर वडे वडे आर्यमहाशय इकठे हुए हैं उनमें पडित सुन्दर सहाय P. C जजसाहव भी आये हुए हैं वह कौनसी और किस जगह पर है ?

ब्रह्मानन्द– वहेन ! उनसे तुमको क्या काम है ?

नदिनी- आप मकान तो बतलाइये !

ब्रह्मानन्द- मकान तो यही है ! चलो अंदर (यह सुनकर दोनो जनी अदर चली गई और पीछे पीछे ब्रह्मानन्द भी पहुच गया सभा मडप में बैठे हुए महाशायों को तथा बाचमें खडी हुई 'माया' को देखकर)

दया-और-नंदिनी- (आखों से आसू बहाती हुई गाती है)
" क्या दुख कहू मैं तुम से ये ऐ जनाब मन ! ।
दुखियाके दुःखको सुनता है क्या कोइ जनाब मन !॥१
सोला बरसकी छोड मुझे मरगया खाविंद ।
कैसे निबाहू हाय ये जोबन जनाब मन ! ॥ २
उठती है आग तनमें मेरे हाय हाय हाय ! ।
कैसा जुल्म ये होता है हम पर जनाब मन ! ॥ ३
जी चाहे नर करे विवाह चार पाच या कई ।
क्या नारियोने है गुनाह किया जनाब मन ! ॥ ४
आज्ञाभी दी है वेद में करने नियोग की ! ।
होता न अमल इसपे कहो क्यों जनाब मन ! ॥ ५
राडे न रहें दुनिया मे करिये उपाय ये ।
सुनना मेरी पुकार ये अहले जनाब मन ! ६

दया- महाशयो ! सभासदो ! बडा अफसोस है कि, आप जैसे प्रतापी पुरुष भी वेद की मर्यादाको नहीं चला सकते !

नदिनी- सुज्ञ महाशयो ! मुझे शोकसे कहना पडता है कि आप जैसे इन्साफ पसद आदमी भी बेइन्साफी करनेको तैयार हो जावें तो हमारे जैसी अनाथ विधवायें

गवरमेन्ट सरकारकी इजलासमें बैठकर भी क्या एसाही न्याय करते हो ?

जज्जसाहब– क्यों ?

नंदिनी– यहां तो मैं इन महाशयों मे बैठे हुए आपको अन्याय करते देखती हू ! यहां तो आप अपने धर्माचार्य "स्वामीजी"के वचनोंका अनादर ही करते दिखाइ देते हो !

जज्जसाहब– अरे यह क्या कहा ? क्या मुझे यहा बैठे हुए अन्याय करते देखती है ?

नंदिनी– बेशक !

जज्जसाहब– कैसे ?

नंदिनी– आप जरा अपने दिलमें सोचियेगा तो आपको स्वयं ही मालूम हो जायेगा. (मायासे) बहन ! तुम्हारा क्या नाम है ?

माया– मेरा नाम ' माया ' है.

नंदिनी–बहन ! मैने तुम्हारा नाम ही सुनाथा तुम्हे देखा न था !

माया– मैंने भी तुमको आजही देखा है !

नंदिनी– बहन ! तुमको यह उचित नहीं !

माया– यह क्या कहा ? याद रखना जमीनका आसमान और आसमानकी जमीन क्यों न बन जाये मगर अपने परम गुरु परम हंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वती महाराजके कथनसे एक कदमभी विपरीत चलना मैं अपने लिये पाप समझती हू ! परमेश्वर जानता है कि इस वक्त तुमको देखकर मेरा दिल टुकडे टुकडे होता

जाता है ! (आखमें आंसू लाकर) मगर तुम मत घबडाओ ! मैं तुम्हारे लिये शीघ्रही अपने विवाहके वाद किसी " नियोगी " पुरुषकी तलाश करुगी !

दया– वाईजी ! वस करो निकम्मा झूठ वोलनेसे क्या फायदा ?

माया– अच्छा तो क्या मै झूठ वोलती हू ?

दया– क्या झूठ वोलनेके सिर सींग होते है ? आपही तो कहती हो कि " स्वामीजी " के कथनसे विपरीत चलना मुझे पाप है और फिर सवके सामने विपरीत चल रही हो ! क्या कहना है आपकी सत्यताका !

माया– हैं ! हें ! यह तुम क्या कहती हो ? (इतना कहकर अपने मनहीं मनमें विचार करने लगी)

नदिनी– विचार क्या करती हो ? क्या " स्वामीजी " का लेख याद नही आता ?

माया– वहन ! सच कहती हू मुझे इसवक्त " स्वामीजी " का लेख विलकुल याद नहीं आता !

दया– (नदिनीसे) वहन ! इस वक्त इनको कहासे याद आवे ? इनका मन तो इसवक्त सामने खडे हुए उस आर्य छवीलेमें गया हुआ है ! परतु आश्चर्य है कि, दूसरेका हक मारनेमें भी इसवक्त इनको नेकी व वदीका ख्याल नहीं है ! अव तो जव तुमहीं " स्वामीजी " का लेख निकालकर इनके सामने रखोगी तोही इनको याद आवेगा !

नदिनी– (मायासे) क्यों वाईजी साहव ! दिखलाऊ क्या ?

(नंदिनीकी बात सुनकर ' सत्यार्थप्रकाश ' हाथ में लिये खडी खडी सोचती हुई और कभी सभासदोंपर, कभी ब्रह्मानन्दपर, कभी दया और नंदिनीपर, कभी अपने बापपर और अपने दादेपर नजर डालती हुई मायाको देखकर फिर) बहन ! ऐसा क्या बडा भारी विचार करती हो लाओ सत्यार्थप्रकाश मुझे दो ! (मायाके हाथ से 'सत्यार्थप्रकाश' लेकर झटपट पृष्ट ११५ निकालकर) " द्विजोंमें स्त्री और पुरुषका एकही बार विवाह होना "वेदादि शास्त्रो में लिखा है द्वितीयवार नहीं कुमार और "कुमारी का ही विवाह होनेमें न्याय और विधवा स्त्रीके साथ "कुमार पुरुष और कुमारी स्त्रीके साथ मृतस्त्री पुरुषके "विवाह होनेमें अन्याय अर्थात् अधर्म है" (पंडित मोहनपालसे) क्यों पंडितजी साहब ! ठीक है न !

प० मोहनपाल– भला इसे कौन बे ठीक कह सकता है ? मैंने खुद ही इस मुताबिक कई नियोग और विवाह कराये हैं !

दया– अजी पंडितजी महाराज ! तो क्या यहां ही आकर आपकी अकल चक्कर खागई जो "स्वामीजी" के कथन को भूल गये ?

नंदिनी– (दयासे) बहन दया ! मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि ' माया ' ने पंडितजी की मुठ्ठी गरम करादी है (जजसाहबसे) रायसाहब ! अब आपको मुन्सफी का Robe (चोगा) उतार कर पंडितजीसे पूछना चाहिये !

सभाके सब लोग– (जज्जसाहब और पंडित हरदत्त, शिवदत्त आदिकोंसे) भाईसाहब! "दया" और "नन्दिनी" का कहना बिलकुल ही ठीक है! बेशक हम लोगोंने "स्वामीजी" के कथनको भुलाकर अन्याय किया है "स्वामीजी" के सिद्धान्तके मुताबिक "ब्रह्मानन्द" का विवाह कुमारी कन्याके साथ नहीं हो सकता! "माया" के लिये किसी दूसरे कुआरे आर्य नवयुवककोही ढूंढना चाहिये!

ब्रह्मानन्द–(माया तर्फ इशारा कर धीरेसे) देखना सभलना! यह तो दुनिया ही उलट चली! अपना दिया वचन याद रखना! मुझे विधवा राडके साथ विवाह करना बिलकुल मजूर नहीं है!

दया– (ब्रह्मानदसे) साहब! मैं भी सुन रही हूं! इसका नाम आर्य धर्म नहीं है! "स्वामीजी" का यह कथन भी नहीं है इस लिये जरा सोच समझकर ही अपनी अकलका बाइसीकल चलाना! क्या कभी कानका मोतीभी नाकमें शोभता है? इस लिये अपनी आँखे फाडकर 'माया' पर मैस्मेरिज़म न कीजीये! जरा रहमका जाम पीकर हमपर ध्यान दीजीयेगा! (मायासे) बाईजी! ईश्वरके वास्ते माफ कीजीयेगा! आपके लिये कारे पुरुषोंका घाटा नहीं! मगर हम सरीखी दीन दुखिया राँड विधवाओंके लिये "ब्रह्मानदजी" जैसे रंडवोंका मिलना आज कलके ज़मानेमें बडा मुशकिल हो रहा है

(सभासदों और पंडित मोहनपालसे) क्यों साहब! आपकी रायमें क्या आता है?

जज्जसाहब- (पं० मोहनपालसे) क्यों पंडितजी! अब क्या विचार है? और क्या करना चाहिये?

नंदिनी- (झुंझलाकर) अजी जज्जसाहब! पंडितजीकी जाने बला! हमको तो एक एक घडी एक एक वर्षकी तरह बीत रही है! इसवक्त इनको तो रिशवतका ऐसा नशा चढा हुआ है कि "स्वामीजी" का लेख पढ सुनानेंमेंभी हिंचकू हिंचकू करते हैं! (फिर मायाके हाथसे सत्यार्थप्रकाश लेकर पृष्ठ ११९ निकालकर-) "जैसे "विधवा स्त्रीकेसाथ पुरुष विवाह नही किया चाहता वैसे "ही विवाह और स्त्रीसे समागम किये हुए पुरुषके साथ "विवाह करने की इच्छा कुमारी भी न करेगी"

दया- (नंदिनीसे) क्यों क्यों! चुप क्यों कर गई! पढ पढ़ आगे और पढ़!

नंदिनी- बहुत अच्छा! "जब विवाह किये हुए पुरुषको "कोई कुमारी कन्या और विधवा स्त्रीका ग्रहण कोई कु-"मार पुरुष न करेगा तब पुरुष और स्त्रीको-नियोग कर-"नेकी आवश्यकता होगी" फिर ११५ पृष्ठकी अंतिम "पंक्ति- "और यही धर्म है कि जैसेके साथ वैसे हीका "संबंध होना चाहिये."

माया- (दया और नंदिनीके कानमें) बहनों! "स्वामीजी"

के इस कथनको वो कौन आर्यसमाजी है जो न माने ? और इसपर अमल न करे ? मगर तुम जानती हो कि अभीतक " स्वामीजी " के मतकी जड अच्छी तरहसे नहीं जमी और जहा कही थोडी बहुत जमी है वहां पोप धर्मोपदेशक सनातन धर्मी आदि सबके सबही पीछे लग तालिया बजाते हैं और मै चाहती हू कि किसी तरह विधवाओंका दुःख दूर हो जावे ! और नियोगके प्रचार द्वारा " स्वामीजी " के कथनका पालन करू और लोगोंसे कराऊ ! मैं वचन देती हू कि मै तुम्हारे लिये शीघ्रही अपने विवाह के बाद अच्छे उत्तम कुलीन बानूओं (दोनोंके लिये दो) की अपने पति द्वारा तलाश करवा कर आपका दुःख दूर करूंगी ! मगर इसवक्त यहा आप माफ ही रखो तो मैं ताजिन्दगी के लिये तुम्हारा ऐसान मानूगी ! " स्वामीजी " की प्रगट की हुई यह कारवाई नवी नवी होनेसे किसी को अच्छी नहीं लगती ! और उसमें भी मेरे बापको तो देखो कैसे माथेमें त्रिवडिया डाल, लाल लाल आखे कर, दांत पीस होठ चबा रहा है ! इस लिये इसवक्त तुमको मेरे विवाहमे विघ्न डालना ठीक नहीं है ! "ब्रह्मानद" को मै पसद कर चुकी हू ! तथा इसमें एक औरभी दूरदेशीकी बात है कि शारदाचद्रके घरमें स्त्री पुरुष छोटे बड़े मिलाकर बत्तीस-तेतीस जने है उन्हें भी मैं जाकर " स्वामीजी " के आर्य रहस्यका उपदेश देके वेद मार्ग पर चलाऊगी ! रहा " स्वामीजी " का यह कथन

कि-" जैसेके साथ वैसेहीका सबंध होना " सो तुम सामनेहीं देख लो ! करीवन वीस सालका नौजवान, लिखा पढ़ा है इस वास्ते मैं इसके लिये और यह मेरे लिये काविलही है !

दया- वहन माया ! तुम क्यों निकम्मा " स्वामीजी " का नाम ले लेकर और अपने मन चाहा सो उनके कथनका इसारा वतला वतलाकर अपने आपको " स्वामीजी " के मंतव्य पर चलनेवाली सिद्ध करना चाहती हो ? अगर मानना है तो " स्वामीजी " का लिखा अक्षर अक्षर मानो वरना ढुढियोंकी तरह (जैसे वह लोग भगवत् मूर्तिपूजक श्वेतांवरी जैनोंके साथ विरोध करते हुए एकही शास्त्रमें लिखी हुई वातोंमेसे जो मनको अच्छी लगी वो मान ली और जो न अच्छी लगी व छोड दी) तुमभी करती हो ! सो विलकुल भूल भरी वात है ! याद रखो ! ऐसा करनमें जैसे भगवत मूर्त्तिपूजक जैन श्वेतांवरीयोंसे जगह जगह वहेस मुवाहशः[1] (शास्त्रार्थ) में ढुढियोंको नीचा देखना पडता है वैसेही कहीं आपको भी न देखना पड़े इस लिये वहन ! " स्वामीजी " का कथन सर्वथा ही तुमको मान्य करना चाहिये ! अगर तुम अभी इस प्रकार अपने वापसे या अन्य किसी संवधिओंसे डरती हो तो हम कैसे यकीन करसके कि तुम " स्वामीजी " के

(१) देखो " ढुढकमत पराजय "

कथनका प्रचार अपने सुसरालमें जाकर करोगी! क्या! इसी "ब्रह्मानंद" की बडी बहन "अंगिरा" जिसे अभी एक सालही विधवा हुएको हुआ है उसका नियोग किसीके साथ कराओगी? मुझे तो यकीन नही के उस घरमें तुम्हारा पथ चले! हा इतना तो जरूर है कि जहा तुमने उनके घरमें 'सत्यार्थप्रकाश' खोला कि वहा ही तुम्हारा निरादर हुआ और 'सत्यार्थप्रकाश' के पत्रे उखाड उखाडकर उनसे 'अंगिरा' और 'मालती' जैसी औरतें घरमें छोटे छोटे लडके लडकियोंको देकर पतंगे बनवा उडा खिलायेंगी! इस लिये तुम 'ब्रह्मानंद' से ऐसे ऐसे सवाल पूछो कि वो जवाब न दे सके! बस फिर इन बैठे हुए बडे बडे आर्य महाशयोंके समक्ष हम दोनोंमें से एक इसके साथ नियोग करलेवेंगी! तुम्हारे लिये कुंआरे पुरुषोंका क्या घाटा है? मुशकिलतो हम रांडो को है! देखो! तुमको अगर "स्वामीजी" के कथन का पास है तो तुम अपने लिये पचीस वर्षका वर तलाश करो! यह तो अभी बीसकाभी पूरा नहीं है तुम्हारे लिये "स्वामीजी" के कथनानुसार कुंआरा वर होना चाहिये ये तो रडवा है! देखो! "स्वामीजी" का कथन है कि-"जैसे लडके पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या "पढ ज्ञान होके अपने सदृश कन्यासे विवाह करें वैसे "कन्या भी अखंड ब्रह्मचर्यसे पूर्ण विद्या पढ पूर्ण युवती "हो अपने तुल्य पूर्ण युवावस्थावाले पतिको प्राप्त होवे"

(संस्कार विधि पृष्ठ ८८)

नंदिनी–अरी तो ले ! " स्वामीजी " ने लिखा है कि "गर्भवती स्त्रीसे एक वर्ष समागम न करने के समयमें पुरुष "वा स्त्रीसे न रहा जाय तो किसीसे नियोग करके उसके "लिये पुत्रोत्पत्ति करदे " अब सोच कि स्त्रीके पेटमें एक गर्भ तो पतिका स्थापन किया हुआ है ही ! और उस वक्त भोग करनेकी इच्छा पैदा हो गई गर्भावस्थामें अपने पतिसे तो भोग करना ही नहीं ! क्यों कि " स्वामीजी " ने " स्त्रीसे न रहा जाय तो किसीसे " इस वाक्यसे निषेध किया है ! तो सिद्ध हो गया कि नियोगीसें भोग करे ! अच्छा अब फिर सोच कि, जब दूसरेसे भोग करेगी तो जो विचारा पेटमें आ बैठा है क्या उसे तकलीफ न होगी ? या उसको अंदर ही अन्दर सिकुड़कर बैठ जानेके लिये कोई दूसरा स्थान दे दिया जावेगा ? खैर फिर सोच ! कि, कभी किसीको आज तक ऐसा हुआ भी है कि जिसके पेटमें चार पांच महीनेका गर्भ हो और फिर भोग करनेसे दूसरा गर्भ रह जावे ? फर्ज कर कि " स्वामीजी " के कथनानुसार किसी गर्भवतीने अन्य किसीसे नियोग किया और कदापि पेटमें रहे बिचारे कोमल ऊंधे शिर लटके हुए बालकके सिरमें नियोगी जबरदस्त पुरुषसे कोई आघात पहुंच जावे तो बिचारी दूसरा गर्भ धारण करती करती पहलेसेभी हाथ धो बैठेगी ! मैं अच्छी तरह जानती और बहुतसी

दाईयोंसे भी सुना है कि गर्भवती स्त्रीसे भोग कभी नहीं करना और शास्त्रकारभी ऐसा काम करनेवालेको दोषी बताते है! अच्छा फरज कर कि यहभी मान लिया जावे कि एक गर्भपर दूसरा (नियोगीसे) भी रह गया तो फिर यह बताकि जब पाच महीनेका गर्भ धारण करने वाली स्त्रीने नियोगी पुरुपसे भोग करके दूसरा गर्भ धारण किया तो पहला जो पाच महिनेका है वोतो और चार महीने गुजरने पर वह जन देवेगी, लेकिन जो पीछे नियोगीसे धारण किया है उसे अगले पाच महीने बाद जनेगी या एक साथ ही? (एक नौ महीनेका और एक चार महीनेका) जनेंगी ?

अच्छा! अब एक बात औरभी है कि जो "स्वामीजी" ने 'सस्कार विधि' के पृष्ट ४६ पक्ति १९ में लिखा है कि-" इन दो मन्त्रो को बोल के पति अपनी गर्भिणी पत्नी के गर्भाशय पर हाथ धर के यह मत्र बोले" ले अब तुही अपने मनमें अच्छी तरहसें विचार कर कि "गर्भिणी पत्नी के गर्भाशय पर हाथ धरके" यह जो काम है वह उस स्त्री के पति और नियोगीजी दोनों हीं करें या केवल पति ही करे? क्यों कि उसके अदर तो दो बटेरे है एक नियोगीजीका और एक अपने पतिका! और "पुंसवन" सस्कार तो जरूर ही होना चाहिये! कहीं "स्वामीजी" ने यह बयान किया याद नहीं है कि नियोगी के गर्भका पुंसवन सस्कार नहीं होता है! बलकि "स्वामीजी" के न्याय से तो अवश्य ही होना

चाहिये, क्यों कि " स्वामीजी " का संस्कार विधि में फरमान है कि " गर्भ स्थिति के ज्ञान हुए समय "से दूसरे वा तीसरे महीने में पुंसवन संस्कार करना "चाहिये जिससे पुरुषत्व अर्थात् वीर्यका लाभ होवे" बस सिद्ध है कि विवाहित पतिके गर्भ को जैसे वीर्य के लाभ की जरुरत है वैसेही नियोगी पतिके गर्भ को भी वीर्य के लाभ की जरूरत है वरना वो विनावीर्य (नपुंसक) आगेको किस काम आयेगा ? हां! वेशक इतनी वातका ख्याल तो अवश्यहीं यहां हो सकता है कि यदि गर्भ में लडका होवे तो उसको तो ' पुसवन संस्कार ' से वीर्य-का लाभ वकौल "स्वामीजी" के होसकेगा मगर लडकी होवे तो उसके लिये क्या करना? कोई ' स्त्रीसवन ' संस्कार वनालेना या उसकोभी वीर्यका लाभही होने देना ? अगर ऐसा हुआ तो कुदरत से उलटा क्यों नहीं ? इसका सोचना जरूरी मालुम होता है.

"स्वामीजी" के ख्याल में यह आयाही नहीं है वरना स्वा-मीजी चूकने वाले नथे ! जवाकि गर्भस्थिति में भी हमारे (स्त्री वर्गके) लिये न रहाजावे तो नियोगी से हुकम देगये है तो क्या वे ऐसी वात में भूलते ? कभी भी नहीं ! मगर एक और भी टटा वना रहता, अगर फरज करो "स्वामीजी" लडका लडकी के लिये जुदा जुदा संस्कार वनाजाते तो पेटमें लडका है या लडकी ? उसके इमतिहानके लिये भी कोई नयी डॉक्टरी विद्या उनको निकालने की जरूरत पडती !

क्यों अब मालूम हुआ कि "स्वामीजी" के पूर्वोक्त लेख में कितनी गलतिया है ? "स्वामीजी" ने जो औरतों के लिये दश पति करने की आज्ञा दी है सो दश के वीश क्यों न आकर जोर लगावें फिरभी पेटमें एक गर्भ के होते हुए दूसरा गर्भ नहीं रह सकता !!! अरी ! और भी इस में एक सवाल पैदा होता है कि, जो नियोगी के सभोग से गर्भ रहा है वह नियोगी को देदेवे यह वात "स्वामीजी" के- "स्री पुरुष से न रहा जाय तो किसी से नियोग करके "उसके लिये पुत्रोत्पत्ति करदे" इसकथन से साफ जाहिर है. अब जरा सोच तो सही कि क्या कोई यह नियमही है कि नियोगी से भोग करनेपर जरूर ही गर्भ रह जावेगा ? अगर फर्ज कर कि रहभी गया तो वो जरूर पुत्र ही होगा ? जो लडकी हो पडी तो फिर ? फिर तो पतिका और नियोगी जी का आपस में जगडा हो जानेका अंदेशा है ! क्यों कि नियोगी को तो "स्वामीजी" ने "पुत्रोत्पत्ति करदे" यही लिखा है और नियोगीजी भी "स्वामीजी" की कलम के मुताबिक उससे पुत्रही मागेगे ! पुत्री को कौन चाहता है ? मगर हां पुत्री की कदर उम्मेद है कि इस हालत में होजावेगी !

दया- (धीरसे) वस ! चुपकर चुपकर ! मुजे मालुम हो गया अब आगे के लिये मैं सोच समज कर ही बोला करुंगी मुजे क्या मालूम कि "स्वामीजी" भी भूला करते-

थे ! खैर और भी कोई ऐसी गलतियें अपने बनाये हुऐ "सत्यार्थ प्रकाश" आदि ग्रंथो में कही कर गये हो तो वे भी वता छोड ताकि मुजे आगे के लिये ख्याल रहे !

नंदिनी– इसवक्त मौका ठीक नही है कि मैं तुजे " स्वामीजी " ने जहा जहां भुलें खाई है और विना विचारे अंड वड लिख मारा है कह सुनाऊं ? क्यों कि यहा इस सभा में कितने एक अधकचे समाजी वेठे हुए है अगर सुनेगें तो झट इस पंथको छोड देंगे फिर हमारा मनोर्थ भी पूरा न होगा ! और फिर ऐसे ऐसे-स्वयंवरभी अपनेको देखने न मिलेगे ! इस लिये फिर कभी निश्चिन्त होकर एकांतमें कहुंगी.

इतनी वात " नदिनी " और "दया" की परस्पर होनेके वाद "नंदिनी" अपने प्रस्तुत विषयको लेती हुई "माया"से) वहन माया !, सुनो पंडित मोहनपालजी "स्वामीजी"के कथनको सुनाते है सुनकर विचारनाकि, मै "स्वामीजी" के कथन को कितनाक मानती हुं और उसपर कितनाक अमल करती हूं ?

पंडित मोहनपाल–("सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ट ११२ को देख मन ही मनमें) अरे ! यह "स्वामीजी"ने क्या लिख दिया है? मेरी तो समझमें हीं नहीं आता? अस्तु ! अव पढकर सुनाये विना तो छुटकारा नहीं ! (प्रकाशमें) लो वहन ! अव सुनो !

"जिस स्त्री वा पुरुष का पाणी ग्रहण मात्र संस्कार "हुआ हो और सयोग अर्थात् अक्षत योनी स्त्री आर "अक्षत वीर्य पुरुष हो उनका अन्य स्त्री वा पुरुष के साथ "पुनर्विवाह न होना चाहिये किंतु ब्राह्मण क्षत्रीय और "वैश्य वर्णो में क्षतयोनी स्त्री क्षत वीर्य पुरुषका पुन विंवाह "न होना चाहिये" (सुनाकर नंदिनी से) वीवीजी ! मुजेही पहले इसका मतलव समजमें नहीं आया तो ऊंचे से क्या सुनाऊ ? मै सच कहता हूं कि " स्वामीजी " ने वाजी वाजी जगह तो ऐसी गलती खाई है कि, कुछ भी मत पूछो ! आप तो लिखकर मर गये मगर आफत हमारी जान को ! जहा कहीं ऐसा ऐसा अपना मन घडत ढकोसला घसीट मारा है वहां वहा हम लोगों को हरएक मजहव (मत) वालों से नीचा देखना पडता है और लजाना पडता है ! मगर तुमको इस वक्त यह विषय चर्चना योग्य नहीं था ! खैर ! जरा सन् १८८७ का " सत्यार्थ प्रकाश " तो लाओ !

नंदिनी– मै क्या "सत्यार्थ प्रकाश" हरवक्त वगलमें दवाये फिरती हु ? यह सन् १८८४ वाला भीतो " माया " से लिया है, इसके पास १८८७ का भी हो तो पूछ देखो !

मोहनपाल–(मायासे) वाईजी ! सन् १८८७ का "सत्यार्थ प्रकाश" यदि यहा तुम्हारे पास हो तो दीजीये !

माया– (हाथसे बताकर) वो देखो सामने आलमारीमें सिर्फ आर्यधर्म (स्वामीजीके बनाये हुए) केही कुल ग्रंथ मौजूद हैं, जो चाहियेसो लीजीये.

नंदिनी–(यह सुन झट जा कर अलमारीमेंसे पुस्तक निकाल पंडितजीसे) पडितजी साहब ! लीजीयेगा !

पं० मोहनपाल–लाओ बहन !(सत्यार्थप्रकाशको हाथमें ले और पृष्ट ११० निकाल कर) " जिस स्त्री पुरुषका "पाणीग्रहण मात्र संस्कार हुआ हो ओर संयोग न हुआ "हो अर्थात् अक्षत् योनी स्त्री और अक्षत वीर्य पुरुप हो "उनका अन्य स्त्री वा पुरुपके साथ पुनर्विवाह न होना "चाहिये किंतु ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्णोंमें क्षत "योनी स्त्री क्षत वीर्य पुरुपका पुनर्विवाह न होना चाहिये " (अपने मनही मनमें) इत्तेरा भला हो ! यह क्या लिख मारा ? जहां देखो वहां नन्ना हीं नन्ना !

माया–(पंडितजीके हृदयगत भावको समझ कर) पंडितजी साहब ! किस विचारमें पड गये हो ? जरा शुद्धिपत्र तो देखो पहला नकार अशुद्ध है !

पं० मोहनपाल–(शुद्धिपत्र देखकर) हां बीबीजी ! ठीक है पहले जो लिखा है कि " न होना चाहिये " उसके ठिकाने " होना चाहिये " एसा ही है (नंदिनीसे) हा लो बोलो बीबी नंदिनी ! इसमें आपका क्या शक है ? और हम यहा पर " स्वामीजी " के कथनसे क्या उलटा करते हैं ?

नंदिनी–(मनहीं मनमें) वाहरे पंडित ! क्या कहना है तेरी पंडिताई का और क्या कहना है तेरी समझ का (प्रगट) पंडित जी साहब ! अच्छा तो क्या आप अभीतक समझे ही नहीं कि, हम "स्वामीजी" के कथन से क्या उलटा करते है और क्या कराते हैं ?

(वीचमें 'दया' धीरे से 'नंदिनी' के कान में) बीबी ! उलटा करना कराना इन के हाथ में नहीं वो तो पैसा करा रहा है ! पैसा तो ऐसी चीज है कि पंडितजीसे जो चाहे सो करावे !

प. मोहनपाल–(दोनो को काना फूसी करते देख) क्यों बीबी ! क्या है ? ऊंचे से कहो न !

नंदिनी–नहीं नहीं कुछ नहीं ! आप अपना कहिये ! कि पूर्वोक्त लेख से विपरीत आप यहां कुछ नहीं करते कराते ?

प मोहनपाल–अरे वीवीजी ! तुमतो वडी ही झझट बाज मालूम देती हो ! इसमें ऐसा कौनसा वडाभारी गुप्त रहस्य है कि, जिसका मैं मतलब अवतक नहीं समझा ! "स्वामीजी" ने ठीक तो लिखा है कि 'जिस स्त्री "व पुरुष का पाणी ग्रहण मात्र संस्कार हुआ हो और "संयोग न हुआ हो उनका अन्य स्त्री पुरुष के साथ "पुनर्विवाह होना चाहिये" इस में "स्वामीजी" ने आगे और खुलासा किया है कि "ब्राह्मण क्षत्री और "वैश्य वर्णों में क्षत योनी स्त्री और क्षत वीर्य पुरुष का "पुनर्विवाह न होना चाहिये" ठीक ही तो है !

नंदिनी–(ताली वजाकर और हँसकर मायासे) वीवीजी साहव ! आप भी क्यों जानवूझ कर चुप किये खडी हो ? हमारा कुछ जोर थोडा ही है होगा तो वही जो तुम्हारे दिल मे वस रहा है मगर सच कहो कि यहा " स्वामीजी " के कथन से विपरीत कारंवाई हो रही है या नही ?

माया–(पंडित मोहनपालसे) पडितजी साहव ! वीवी नदिनी का कहना तो ठीकही है, भले हम करे चाहे किसी तरह ! " स्वामीजी " के कथनमें यह तो साफ है कि " ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य वर्णोंमें क्षत योनी स्त्री और "क्षत वीर्य पुरुपका पुनर्विवाह न होना चाहिये " तो यहां अव आप सोचियेगा कि मैं तो क्षत योनी नहीं हु मगर ब्रह्मानद तो क्षत वीर्य है हा इसमें जराभी शक नहीं ! क्यों कि उसके तो तीन सालका एक लडका है यह सबको मालूम ही है ! (नदिनी और दयासे वडी नरमाईके साथ) वहनजी ! इस वक्त तुम किसी तरह मेरा इसके साथ विवाह हो जाने दो वादमे मै तुम्हारे लिए कुछ इंतजाम जरूर ही करूंगी !

नदिनी–वाईजी साहव ! फिर यूं सीधे रस्ते पर आओ ना ! यू क्यों वार वार वाग देती हो कि मै " स्वामीजी " के कथनपर चलती हूं और यूं कहा है ! त्यू कहा है ! मैं यूं करती हू. मै " स्वामीजी " के लिखे मुताविक यू करूंगी, त्यूं करूगी ! वेशक तुमने इतना तो जरूर

" स्वामीजी " के कहे मुताबिक किया जो कि यह स्वयंवर इन आर्य महाशयों को इकट्ठे करके इन के सामने मन मान पति को पसद कर उसकी परीक्षा ले विवाहकी तैयारी की है !

दया–(बात काटकर बीचमें) जीजी ! " स्वामीजी " ने तो लिखा है कि–" जिस दिन ऋतु दान देना योग्य "समझे उसी दिन " संस्कार विधि " पुस्तकस्थ विधि के "अनुसार सब कर्म करके मध्य रात्रि वा दश बजे अति "प्रसन्नता से सबके सामने पाणी ग्रहण पूर्वक विवाहकी "विधि को पूरा करके एकात सेवन करें पुरुष वीर्य स्थापन "और स्त्री वीर्याकर्पण की जो विधि है उसीके अनुसार "दोनों करें " *सो बहन ! तुम "माया" से पुछो तो सही कि इन को यह विधि विवाहवाले दिन ही करनी होगी ! सो क्या इन्हो ने " स्वामीजी " के कथनानुसार वीर्याकर्पण आदिकी विधि भी सीख ली है याकि नहीं? और " स्वामीजी "का कथन है कि " जिस दिन ऋतु "दान देना योग्य समझे उसी दिन " संस्कार विधि " "पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सब कर्म करके मध्यरात्री "वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके सामने पाणीग्रहण "पूर्वक विवाहकी विधिको पूरा करके एकात सेवन करे" सो ऋतुदान देना " ब्रह्मानन्द "ने किस दिन स्वीकार किया है? और विवाहके अनतर 'माया' के बापके घरपर

---

* सत्यार्थ प्र० पृष्ट ९३.

ही एकांत सेवन करना मंजूर किया है या अपने घर ला कर ? मगर नही " स्वामीजी "ने तो यही लिखा है कि " विवाहकी विधिको पूरा करके एकांत सेवन करे " इस से सिद्ध होता है कि लडकीके पिताके घर पर ही रातके दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके सामने पाणीग्रहण पूर्वक एकांत सेवन करें !

ब्रह्मानंद- (पंडित मोहनपालसे) पंडितजी साहब ! यह क्या इन्होंने आपसमें घसरपसर लगा रखी है ?

पं० मोहनपाल- क्या कहें ? इन्होंने तो " स्वामीजी " का शरण लेकर हम तुम और यहां बैठे हुए कुल आर्य सभासदोंको ही शरमिन्दा करना शुरु किया है ! अगर इनके कहे मूजिब " स्वामीजी "के लेखको माना जावे तो तुमको इस विवाहसे हाथ ही धोने पडते हैं ! इस लडकी (माया) से विवाह करने का तुम्हारा हक बिलकुल नही सिद्ध हो सकता ! क्यो कि " स्वामीजी " का साफ लिखना है कि, द्विजो में क्षतवीर्य पुरुष या क्षतयोनी स्त्री का पुनर्विवाह नही हो सकता और आप के क्षतवीर्य होने में तो शकही नहीं ! " स्वामीजी " के कथनानुसार विधि विधान करना आपको भी मजूर है और मायाको भी मजूर है परतु मुझे जरा कहने में संकोच होता है कि, मै यहां परकिन वेद मंत्रोसे विधि विधान कराऊं ? क्यों कि विवाह और नियोग इन दोकी विधि तो

" स्वामीजी " ने फरमाई है, परंतु विवाह और नियोग से विलक्षण जो इसवक्त होता नजर आता है इस तीसरे प्रकार के संस्कारका न तो " स्वामीजी " ने कहीं नामही लिखा और नाहीं कहीं उसकी विधि ही बतलाई ! यदि अन्यका अन्यही विधि विधान किया जावे तो हम तुम सबको प्रतिज्ञा भ्रष्ट होना पड़ता है ! इतनाही नहीं, किंतु " स्वामीजी " के लेख को भी कलंक लगाने वालों में हम गिने जाते हैं ! क्योंकि " स्वामीजी " ने कुमार कुमारी का विवाह और क्षतयोनी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुषका नियोग यह दोही बताये है, परंतु क्षतवीर्य पुरुष और अक्षतयोनी स्त्रीका तो मेलही नहीं लिखा ! आपही स्वय विचार करलेवें ! क्यों कि आप भी तो दयानदी कहलाते हे ! और "स्वामीजी" के लेख को स्वीकारते हैं ! हा ! अक्षतवीर्य पुरुष और अक्षतयोनी स्त्रीका तो पुनर्विवाह हो सकता है ! बड़े आश्चर्य की बात है कि आजतक किसी भी आर्यसमाजी ने इस बातका विचार नहीं किया ! कितने हीं आर्यों के घरोंमें वैदिक मर्यादा से विरुद्ध इसी प्रकार से विवाह हो चुके है; कितनेक तो मैंने अपने हाथसेही कराये है आप दूर मत जाइये इस सभामें बैठे हुए कितनेही महाशय ऐसे हैं कि जिनका क्षतवीर्य होने पर भी कुमारी कन्या के साथ विवाह हुआ है !

(पडित सुन्दर सहाय जज साहबकी तर्फ इशारा कर के) आप इनसेही पूछ लीजीये !

ब्रह्मानंद–वाह पंडितजी साहव! क्या पूछना है? मेरी मृत स्त्री के फूफ़ाजी लगते है, मै खुद अच्छी तरह जानता हू! आपने खूब याद दिलाया! जबकि इन्हों ने ऐसा काम किया है तो अब हमको डरही क्या है? आप मत घबराइये!

पं० मोहनपाल– वेशक! आपका कहना तो ठीक है, परंतु अन्याय तो अवश्यही है! और साथ में "स्वामीजी" का लेखभी झूठा ठहरता है! या हम तुम "स्वामीजी" के लेखसे विपरीत करने वाले सिद्ध होते है.

जब कि "स्वामीजी" पुकार रहे है कि जैसेके साथ वैसेका ही संबंध होना धर्म है तो विचारीयेगा यहां तो "क्षतवीर्य पुरुष" के साथ कुमारी कन्याका विवाह होता है! इस अधर्म अन्यायसे "स्वामीजी" के लेख को असत्य सिद्ध करना नहीं तो और क्या है? इस वास्ते मै विचारमें पडा पडा घबडा रहा हु! आपको तो सुन्दर स्त्रीकी प्राप्तिकी खुशीमें कुछभी ख्याल नही! मगर लोग तो हमसे ही पूछेंगे कि–पंडितजी साहब! "स्वामीजी" के लेखसे विपरीत (वेदविरुद्ध) यह काम तुम किस लिये करते हो? क्या कोई खीसा गरम हो गया है? इस वातका हमारे पास क्या जवाव है?

और दूसरा एक यह भी प्रश्न है कि "क्षतवीर्य पुरुष" का यदि कुमारी कन्यासे विवाह हो सकता है तो

" क्षतयोनी " स्त्रीसे कुंआरे लडकेका विवाह भी क्यों नही होना चाहिये ?

पुनर्विवाह तो " स्वामीजी " के लेखसे अथवा अपनी मरजीसे आर्य पुरुषोंने मंजूर करही लिया है ! यदि यह ख्याल है कि द्विजोंमे पुनर्विवाह नहीं होना चाहिये, तो बेशक ! नियोग किया जावे, परंतु (जरा अटक अटक कर धीरेसे) अयोग्य काम करना तो अच्छा नहीं है !

नंदिनी– (दयासे) बहन ! सुनती हो ? पंडितजी क्या ठीक फ़रमाते हैं !

दया–इन पंडितों का क्या ठिकाना है ? " स्वामीजी " भी तो पंडित ही थे ! जबकि " स्वामीजी " जैसे महान पंडित गोता खा गये और बिना विचारे सटर पटर लिख गये तो इन विचारे पेटार्थी पंडितों का क्या कहना ? तूं अपने मन में यह समझती होगी कि पंडित जी 'ब्रह्मानद' के साथ मेरा नियोग करा देवेंगे परंतु यह बात स्वप्नमें भी नही समझनी !

नंदिनी–नहीं नहीं पंडितजीका स्वभाव तो बहुत ही अच्छा है, न्यायवान् भी हैं, सत्यासत्य को समझते भी हैं, परंतु ये विचारे क्या करें ? जब अपने घरकी तर्फ ख्याल करते हैं तो दिलमें यही आता है कि इस व्यभिचार-वर्द्धक आर्य पंथको पड़ी के छठे भाग में छोड देवे !

नंदिनी– क्यों वाबुजी ! विचारमें क्यों पड गये ? जैसे हम अवलाओं को डपट कर धक्का देते हो ऐसे ही अब पंडितजी को भी धक्का दें कर क्यों नही वाहर करते ? देखो आप को क्या कहते है ? (पंडितजी से) क्यों पंडितजी साहब ! कभी विवाहित स्त्री और विवाहित पुरुष भी "अक्षतयोनी" या "अक्षतवीर्य" वेदाज्ञानुसार "स्वामीजी" के लेख मूजिब हो सकते हैं ?

पं. मोहनपाल– हां वेशक ! हो सकते है ! इस में क्या है ?

नंदिनी–(दयासे हँसकर) क्यों वहन ! पंडितजी क्या कहते है ? माल्म होता है पडितजीका विवाह वैदिक रीति से नही हुआ ! वरना एकदम ऐसा न कह वैठते ! जरा तू पंडितजी को समझा दे !

दया– क्या समझाना है ? अगर यह समझभी गयेतो कौनसा इन्होंने अमल करलेना है ? तोभी ले तेरे कहनेसे कहती हूं ! (पंडितजीसे) क्यों पंडितजी साहेब ! वेदानुसार "स्वामीजी" फरमाते हैं कि बाल्यावस्थामें तो हरगिज विवाह होनाही न चाहिये और युवावस्थामें विवाहके अंतहीमें स्त्री पुरुषका संयोग होना चाहिये ! वही पूर्वोक्त सत्यार्थ प्रकाशका लेख याद किजिए कि–

" जिस दिन ऋतुदान देना योग्य समझे उसी दिन
" संस्कार पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सर्व काम करके
" मध्य रात्रीं वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सब के
" सामने पाणी ग्रहण पूर्वक विवाह की विधिको पुरा

" करके एकांत सेवन करे पुरुष वीर्य स्थापन और
" स्त्री वीर्याकर्षणकी जो विधिहै उसी के अनुसार
" दोनो करे " (पृष्ट ९३) यह बात ठीक है या नहीं?
हमको तो खुद इस बातका तजरवा भी होचुका है!
क्यों कि " स्वामीजी " के लेखानुसार हमने माता
पिताकी परवाह न करके खुद पसंद किये पतिके साथ
(जैसा के इस वक्त ये बीबी माया कररही है) आर्य वि-
धिके अनुसार विवाह करके संस्कार विधिके लेख मूजिब
उसी दिन पतिसे संयोग किया था ! और "स्वामीजी"
की शिक्षा के अनुसार ही वीर्याकर्षण आदि का काम
किया था जिससे गर्भभी रहा परंतु हमारे मंद भाग्यसे
वह अंदर ही अंदर छण (खिर) गया ! नही मालूम
क्या कारण बना ? परंतु दायी को पूछनेसे मालूम हुआ
कि हमने "स्वामीजी"की शिक्षाके अनुसार गर्भकी स्थि-
तिमें स्वपति से तो संयोग नहीं किया मगर हमारे से
रहा नहीं गया इस लिये किसी दूसरे (नियोगी) पुरुष
से कई दफा संयोग किया, उससे पति के द्वारा
धारण किये हुए प्रथम गर्भको भी नुकसान पहूंचा और
नया गर्भ भी नहीं हुआ! दोनों खोकर बैठना पडा!
पंडितजी साहब! जब विवाह की विधिके समाप्त होते
ही संयोग करना "स्वामीजी"ने कहा है तो अब आपही
सोचें कि विवाहिता स्त्री "अक्षत योनी" और विवाहित
पुरुष "अक्षतवीर्य" किस प्रकार हो सकता है? हां अगर
वेदी में ही पति मरजावे तो बेशक अक्षतयोनि स्त्री

सकती है और वेदीमें हीं स्त्री मरजावे तो अक्षत वीर्य पुरुष हो सकता है परंतु इस में भी विचार करना पडता है कि जब "स्वामीजी" महाराज ने अक्षतयोनी स्त्री और अक्षतवीर्य पुरुष फरमाये है तो वह ठीक "स्वामीजी"के लेखानुसार अक्षतयोनि या अक्षतवीर्य है इस बातका निर्णय किस तरह हो सकता है? क्योंकि विवाह होने से प्रथम की अवस्था में तो साफ ही रहे हों ऐसा कोई निश्चय नहीं हो सकता। इस लिये इस बात को यहा अधिक न लंबाकर इतना ही कहना ठीक हो सकता है कि कन्या या कुमार के 'अक्षतयोनी' या 'अक्षत वीर्य' के होनेका निश्चय किये बादही विवाह किया जावे तो वेदानुकूल "स्वामीजी"के लेख को आदर देने वाले हम तुम आर्य सच्चे आर्य कहे जा सकते है वरना नाम धारी आर्य मात्र ही समझना चाहीए! (मायाकी तर्फ ख्याल करके) क्यों बहिन! मैंने जो कुछ कहा ठीक है या कि नहीं?

माया—बेशक! आर्य धर्म पालने वाले उत्साही प्राणियों को तो ऐसाही करना योग्य है!

दया—(जरा हँसकर माया से) तो बहन! तू ठीक 'अक्षतयोनी है इस बातकी परीक्षा दे सकती है?

माया— (मनमें शरमिंदी होकर) क्या तेरी अकल ठिकाने नहीं है? ऐसे सुशिक्षित (इल्मदार) महाशयों की सभा में विना विचारे बोलते तुझे शरम नहीं आती?

नन्दिनी–बहन इस में शरम की क्या बात है? यदि शरमकी बात होती तो अपने परमब्रह्मचारी "स्वामीजी" महाराज ही अपने पुस्तक में ऐसा क्यों लिखते? इस वास्ते शरमका नाम लेकर "स्वामीजी"के वचनों का अनादर करना ठीक नहीं है! जब कि तू ने "स्वामीजी"के कथनानुसार मन पसंद पति "स्वामीजी"के वर्णन किये– " परस्पर फोटू दिखाना " " जीवन वृतांत कहना " "गुह्य बातोंको लिखकर पूछना" वगैरह वगैरह स्वीकार कर लिया है तो अब अपनी इस बात के जाहिर करने में तुझे क्यों शरम आती है ? अगर मुख से कहना ठीक नहीं समझती हो तो कागज पर लिख दे ! परन्तु "स्वामीजी"के कथन का अनादर करना उचित नहीं है आगे तेरी मरजी!

ब्रह्मानन्द–पंडितजी साहब ! यह क्या बनता है ? तुमतो हमारा हक खोने लगे थे परन्तु इन दया और नन्दिनीने तो हमारा ही हक साबत करना शुरू किया है (दया और नन्दिनीकी तर्फ इशारा करके) वाह ! तुमने खूब " स्वामीजी " के शास्त्रोंका अध्ययन किया है जितनी बाते तुमको याद और ख्याल में हैं पंडितजी बिचारोंके तो स्वप्नमें भी इतनी नहीं होंगी ! (पंडितजीसे) अच्छा पंडितजी साहब ! इस टटेको छोडो इसका तो अतही आना मुश्किल है अब जो अपना फर्तव्य है सो करो !

हरंदत्त– (इस कार्रवाईको देख कर और सुनकर "माया" का पिता ' हरदत्त ' अपने अंदरही अंदर बडा क्रोधित हुआ ! और मनही मनमें धिक्कार है इस (आर्य कहना तो ठीक नहीं) अनार्य धर्म पर ! और इसके चलाने वाले पर ! और लख लानत है इन वैठे हुए बड़े बड़े महाशय नाम धारियो पर ! इससे तो बेहतर था कि इस हरामजादी " माया " को किसी भंडलोके हाथ दे दिया जाता; मगर इतनी बेशरमी तो भाडोंमें भी नहीं होती ! (शारदाचद्रसे) भाई साहब ! मेरेसे तो यहां अव वैठे वैठे यह कार्रवाई नहीं देखी जाती ! अफसोस कि आपभी बुड्ढे होकर अपने लडकेको इस कलयुगा नंदी पंथसे न हटाकर वैठे वैठे हंसते हो ! शरम ! शरम ! ! शरम ! ! ! वस अव जलदीसें इस मामलेको यहां तै करदो वरना अव मेरे पैरसे खास विलायतका वना फुलवूट उरता है और अभी इन पंडितजी, दया, नंदिनी, माया और साथही ब्रह्मानंद और सभासदोंके सिरपर फूलोंकी वर्षा करता है ! मैने आपको जता दिया है लो अव इनको वोलनेसें जलदी वंद करदो वरना मै अकेलाही (वूट उतार कर) सवको पान वीड़ी देकर विदा करता हूं !

शारदाचंद्र– (हरंदत्तका हाथ पकडकर खडे हुएको वैठा कर) हैं ! है ! एक दम ऐसा साहस मत करो ! आप मुझे कहते है कि " ब्रह्मानन्द " को इस कल्युगा नंदी पथसे क्यों नहीं हटाते? सो भाई साहव! पहले जरा आप

अपनी लडकी की तर्फ ख्याल कीजीये ! पीछे मुझे समझा इए ! आपके पिता (चाचा) भाई वगैरहको आप क्यों नहीं समझाते ? अच्छा ! अब सबर करो ! जो होना था सो हो लिया ! अब आप चुप करके " माया " को घर ले जाओ ! और मैं इन लोगोंको समझाकर रवाना करता हूं ! (जज साहब और युगलकिशोरको पास बुला कर) अब आप लोग इस वक्त रईसी इज्जत को लेकर चले जाईयेगा वरना यहा अभी रंग बिरंगी होली खिल जायेगी ! (अपने बेटे ब्रह्मानंदसे) अबे ! इधर देख ! (हाथ लम्बा करके) घरको चला जा !

ब्रह्मानंद– (क्यों ? बस क्या इमतिहान होलिया ? मैंने तो अभी कई एक बातोंकी परिक्षा करनी है ! आप अभीसेही कहते है कि घर चला जा ! मैं अपने दिलमें यही समझ रहा हू कि आजही विवाह हो जाय तो " स्वामीजी " के कथनानुसार सबके सामने से इसको एकातमें ले जाऊ और " स्वामीजी " का हुकम बजाऊं ! कोई ऋतुदान देनेके लिये मूहूर्त देखनातो लिखाही नहीं है अगर लिखा है तो बताओ ?

(मायासे) क्यों ? तुमको तो तसल्ली होगई मगर तुम्हारी तर्फसे मुझे बिलकुलभी तसल्ली नहीं हुई ! तुम आर्य धर्मसे बिलकुल अनभिज्ञ और कच्ची हो ! तुमको " स्वामीजी " के कथनका बिलकुल पास नहा है ! मगर खैर तुमने मुझे इतने आर्यसभासदोंके सामने

मंजूर किया है इस लिये मै भी आगे कुछ नहीं कहता और पूछता ।

माया– (धीरेसे वसवस! अब आप कुछ भी मत बोलो देखो जरा मेरे बापकी तर्फ! अगर कुछ और कहा सुना गया तो यहां पर कुछ और का और ही न बन जाय! जो होगया सो ठीक है आप के साथ विवाह होने पर मेरी सबही कचास निकल जायगी अब तो आप कुछ मत बोलिये चुप करके सभा बरखास्त करने की तदबीर सोचिये। मुझे अपने बापको सकल देखकर बहुत डर लग रहा है और दिल टुकड़ टुकडे होता जाता है ! देखो मेरा बदन कैसे काप रहा है इस वक्त मेरा दिल बिलकुल काबूमें नहीं है मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि यह आपके साथ आखरी मेला है क्यों कि घर जाने पर मेरे साथ मेरा बाप न जान क्या करेगा ? यह तो मुझे पक्का यकीन है कि आज घरमें जो आर्य धर्मके ग्रथ हैं वो तो राख हुए बगैर बचते नजर नहीं आते !

(बहुतही उदास होकर अपने मनही मनमें) हायरे! मुझे क्या होगया ? यह मैने क्या किया ? अब मै अपनी जान कैसे बचाऊगी ? अरे रे ! धूल पडो ऐसे आर्यधर्म पर ! हायरी मा अब मैं क्या करूं ? अगर मेरी जान बचजावे तो धूलगेरूं "स्वामीजी" के कथन पर और ऐसे बेशरमी भरे ग्रंथों पर ! हाय हाय ! आजकी कार्रवाईको शहरकी औरतें सुनकर क्या कहेंगी ? मै उन्हें

क्या मुंह दिखाऊंगी ? हायरे ! न जाने मेरी अकल पर क्या परदा पडगया ? हे ईश्वर ! अवतो मेरी लाज तेरे ही हाथ है ! (ऐसे विचार करती हुई रोने लगी)

दया और नंदिनी– (हैं ! हैं ! वाईजी ! यह क्या हुआ ? क्यों रोती हो ? (हाथसे पकड कर धीरज देती हुई) अजी तुम ऐसी समझदार होकर यह क्या करने लगी ? क्या कोई हमारी वात चीतसे दिल दुखा ? या " ब्रह्मानंद " ने कुछ ऊंचा नीचा कहा ? याकि " मुझे उत्तर नही आया " इस वातका अदर दुःख पैदा हुआ ? कहो तो सही वात क्या है ?

पं० हरदत्त– (दया और नदिनीको ऊंचे आवाजसे) अरे ! तुम हट जाओ इसके पाससे ! और रहने दो समझानेका ! मेरी लडकी है मैं आपही समझा लूंगा ! (मायासे लाल आंखे करके) एं ! ये कैसी ऊ ऊ और चू चूं लगाई है ? जरा ठहर जा ! अभी घर चलके तेरी चतुराई वतलाउगा ! जिसने तेरेको पढाई है उसके भी धुर्रे उडाऊगा ! क्या करलेगा मेरा भाई और चाचा.

जो विचारी पूर्व किये पाप कर्मसे पतिके मर जानेपर दुःखी दीन मीनकी तरह अधमरी हो तडफती है उन ऐसी अवलाओंको दुसर्मे धीरज देनेके वदले कलयुगा नदी ऐसा उपदेश देते फिरते ह कि जिनके वाक्योंको सुन सुन कर वाज वाज पतिव्रता सतियोंके (जिन्होंने अपने पतिके अलावा जगतभरके पुरुषोंको पिता, पुत्र

और भाईके सदृश समझा है) हृदय टुकडे हो जाते हैं !
इन "दया" और "नंदिनी" जैसीयोंने तो ब्रह्मचर्यको तो एक पाप समझ रखा है ये तो दयानद सरस्वतीके कथनका सहारा ले, दरबदर खराब हाता फिरती है ! और विचारे अन्य भोले जीवोंको भी नरकका रास्ता वतला दुःख जालमें डाल हाल वेहाल करनेकाही पेशा पकड रखा है !

क्या कोई है इन सभासदोंमें वैठा हुआ जिसने अपनी मा, वेटी, बहेन, बुआ, मासी, चाची, ताई वगैरह किसीकोभी दूसरा पति करलेनेकी इजाजत दी हो ? या स्वय जाकर उसके लिये कोई दयानदी पुरुप ढुढ लाया हो ? या अपनी औरतको यह इजाजत दी हो कि–जा दयानदके कथनानुसार दूसरा खसम (नियोग) करके पुत्रोत्पत्ति करले ! और आजतक किसी दयानंदिनीने ऐसा किया भी कि ? जिसने दश खसम किये ! या दश लड़के पैदा किये ? और पति और नियोगी दोनोंने मिलकर उन लडकोंके हिस्से किये ! याने वाट वाट कर लिये ?

(हरदत्तको इस तोर पर वोलते हुए देखकर सभासद तो खिसकने लगे एक के वाद दूसरा दूसरेके वाद तीसरा वस उस जगह (स्वयवरमें) गिनतीके ही आठ दश जने रह गये ! या मू लपेटकर रोती हुई " माया " !)

शारदाचंद्र– (प० हरदत्तसे हसकर) भाई साहब! अब शांति करो! जो होना था सो होगया! अब आगेके लिये सोचो क्या करना चाहिये? यहतो तुम जानते ही हो कि, हमारे घरमें आर्यधर्म किस खेतकी मूलीका नाम है सो क्या छोटे क्या मोटे कोई भी नहीं जानते! हा इस "ब्रह्मानद" को जरा बाहर रहनेसे कुछ कुछ हवालगी है सो सिर्फ जबतक मैं कहता नहीं हू वहा तक ही! वरना कहोतो अभी ही हटा दूं!

(दूरसेही खडे खडे, रोती हुई "माया" को पुचकार कर) बेटा! चुपकरो! मतरोओ! उठो और मत डरो! मैने समझा दिया है तुम्हारे पिताजीको! मजाल है कि वो तुम्हें कुछ कहें! उठो उठो! बस! चुपकर जाओ!

(अपने बेटेसे) अरे "ब्रह्मानन्द"!

ब्रह्मानन्द– जी हा!

शारदाचंद्र– बतला तो अब तेरी क्या मनशा है?

ब्रह्मानन्द– जो आपकी मनशा सोही मेरी मनशा है!
पंडित 'हरदत्तजी' की क्या मनशा है?

प० हरदत्त– (ब्रह्मानन्दसे) भाई! मेरी मनशा क्या पूछते हो? तुम्हारे "स्वामी दयानन्द" के उपदेशको सुनकर मेरा दिल तो जल भुन कर खाक हो गया है! क्या करु? आपके पिताजीसे जबान कर चुका हु और

अव वात भी वाहर निकल गई है इस लिये लाचार हूं वरना इस "माया" को ऐसे माया जाल में फँसाता जो ये भी सारी उमर "वावा दयानन्द" को ही रोती पीटती रहती! औरतो कुछ नही मगर मुझे इस वातका वडा ही ख्याल है कि मैतो इसे आपको दे चुका लेकिन कहीं ये आप के यहां जाकर, आपकी इज्जत में वट्टा न लगा वैठे !

शारदाचन्द्र– अजी नही नही ! आप क्या वात करते हो? आखर तो पढी लिखी और समझदार है ! वस अव आप इसे ज्यादह कुछ मत कहियेगा !

पं हरदत्त– हां अगर ये इस ऊत पंथ से वाज आजावे तो मुझे कहने की कोइ जरुरत नहीं ! (मायासे डाट कर) ले अव चुप होती है या कि अच्छी तरहसे चुप कराऊ?

शारदाचन्द्र– लीजिये साहव अव जाने दीजिये ! अव आप ज्यादह मत डपटिये और घर ले जाइये ! अव आपने व्याह (साहे) का दिन निकल वा भेजना ताकि हम भी अपना इन्तिजाम करें ?

पं० हरदत्त–अच्छा साहिव ! मै कलरोज आपको पता दूंगा अव मैं जाताहू मगर यहां जो आज कार्रवाई हुई है उसे आपने किसीके सामने प्रगट मत करना ! वरना इसमें उलटी हमारी तुम्हारी ही वदनामी और नमोसी है ! अच्छा लीजीये अव मुझे इजाजत है ? नमस्ते ! जाता हुं !

शारदाचन्द्र–वाह साहब वाह ! जिनके सिरपर अभी जूत लगानेको तैयार हुए थे उन्ही की दुम पकडे हुए अभीतक चलते हो ? देखना दुलत्तेसे बचना ! क्या नहीं मालूम के यह जितने झगडे नजर आते है वे सब इस नई नमस्ते के ही है ! मेरी तो सबसे प्रणाम करनेकी आदत है सो लीजिये साहब–प्रणाम ! मैं भी जाता हु.

प० हरदत्त– (जब सब लोग चले गये तब ‘ शारदाचद्र ’ से) देखिये साहिब ! मै तो आजसे इस आर्य पथको मानना तो किनारे रहा परंतु नाम तक भी न लूगा ! अफसोस ! इसका नाम धर्म है ? भाई मुझे क्या मालूम कि इस मतमें ऐसी पोलपोल चलती है ! न मालूम (पास खडे हुए ‘ ब्रह्मानंद ’ की तर्फ हाथ करके) इन्हों ने क्या समझकर यह हठ पकडा था कि मैं आर्य रीति से (स्वामीजीके लिखे मुताबिक) सब काम करूगा ? क्यों ? अबी भी यही विचार है ? कुछ कसर हो तो पूरी करलो ! बडे शरमकी बात है कि तुम पढे लिखे दाना होकर ऐसा काम करनेको तैयार हुए ! कुछ तो अपनी इज्जतका ख्याल किया होता ! (शारदाचन्द्रसे) खैर जो होना था सो हुआ अब मैं घर जाकर शीघ्रही किसी पडितको बुलाकर विवाहका दिन नियत करके आपको खबर दूंगा, विवाह सब उसी रीतिसे होगा जैसे अपने सबके होता आता है, अगर भाइ वगैरह मेरे सामिल न होंगे तो मत हो ! लेकिन एक बात है

कि आप जानते हैं मेरे लडका नही है बस जो कुछ समझो, यही दो लडकियां है, इस लिये मैरा विचार है कि इनका विवाह खूब धूम धाममें करना. आपतो "ब्रह्मानंद" का यह दूसरा विवाह समझ कर अगर यूहीं साधारण फेरे फिरा लेनेका विचार रखते हो सो ठीक नही ! इस समय मेरे कहने से आपको जरुर ही धम धाम करनी पडेगी, और वरातमें नाच वगैरह के लिये एक दो तायफे साथ लानेही पड़ेंगे ! बस मै अब अपनी मरजी के मुताबिक विवाह करुंगा, मेरे घरमें सबके विवाह में ऐसा होता आया है, अगर ये अब समाजी बन नई रोशनी के चादनेमें चलने लगे तो क्या हुआ ? बस देख लिया इनका समाजीपना ! आपसे मैं हाथ जोडकर प्रार्थना करता हू कि आप मेरी यह बात अवश्य ही मंजूर करें.

शारदाचंद्र– भाई साहब ! (हाथ पकडकर) आप यह क्या करते है ? मुझे आप जैसे कहें वैसे करने को तैयार हूं, मगर वरातमें नाच (तायफे) लानेके लिये मैं आपसे विरुद्ध हूं, क्यों कि मे इसमें नुकसानके सिवाय कुछ फायदा नहीं समझता ! और मै इस बातका पुरा विरोधी हू, यह तो आपको बात तीन काल भी नहीं मानुंगा ! हा आप कहें तो लखनऊ के भाड तो जरूर बुलवालूं (वह भी आपको खुश रखनेके लिये) मगर रंडियोंको वरातमें लानेके लिये आप न बोलें !

पं० हरदत्त– अच्छा तो यूंही सही ! आप जिसमें खुशहों वह मैं मानने को तैयार हु, मगर वरात खूब धूमधामसे आनी चाहिये !

शारदाचंद्र– आपके सगे सबंधी आर्य समाजी इसवातमें आपसे विरोध करेंगे तो ?

पं० हरदत्त– अजी आप भी भोली बात करते हैं ! किसी की मजाक है ? अगर करेंगे तो अपने घर बैठो ! मुझे कुछ परवाह नहीं !

शारदाचंद्र– अच्छा तो ठीक !

(इतना कहकर अपने अपने घरको गये. " हरदत्त " ने भी विवाह का दिन निकलवाकर " शारदाचंद्र" के घर भेज दिया. दोनो घरों में विवाहकी तयारिया होने लगी. "शारदाचंद्र" ने अपने बडे लडकोंकी सलाह लेकर लखनऊ से बढिया भाड बुलवाये ! खूब धूमधाम से संवत १९४४ वैसाख वदि छठ के दिन बरात " पं० हरदत्त" के घर पर पहुची.

"माया" के दिलसे समाजी ख्याल उसी दिन से ऐसे निकल गयेथे जैसे किसी के शिर भूत आता हो और वह उसे छोडकर भाग जावे ! अपने कमरेमें बाबाजी की फोटो लगी हुईथी वह भी उतार कर सुबह कुडा लेने आई हुई भंगन के टोकरे मे फेंकदी और जितने समाजी पुस्तक थे वे सब अपने दादा "कीर्तिप्रसाद" के सामने फेंक दिये. यह कार्रवाई देख "कीर्तिप्रसाद"

बहुत ही चिढ गये थे मगर करही क्या सकते थे ? "हरदत्त" ने भी खुबडी आडे हाथ लिया था. जिस दिन बरात आई "कीर्त्तिप्रसाद" तो उसी दिन किसी कामका बहाना निकाल कर मेरठ चले गये ! इधर बरातमें "शारदाचद्र" के सब सगे संबन्धी जज साहब और 'युगलकिशोर' वगैरह आयेथे मगर "विश्वंभरनाथ" भी बरात में जाने के लिये रोने लगा परतु अपने बापके विवाहमें लडका नहीं जा सकता इस लिये "युगल किशोर" ने बरात में साथ न जाने क इरादे से "शारदाचद्र" से कहा कि, लो मै "विश्वभरनाथ" को रख लूंगा ये यहा औरतो से किसी से नहीं रहेगा अगर रह गया तो मै कल आजाऊगा. 'शारदाचंद्र" ने "युगल किशोर" का दिली इरादा जान लिया मगर बोलने में कुछ सार न समझ उन्हों ने भी साथ चलने के लिये आग्रह न किया. "युगल किशोर" "विश्वभरनाथ" को गोद में ले तमाशा दिखाने के बहाने से अपने घर ले गये ! उधर जब बरात दरवाजे पर पहुची तब औरतें खुशी में आकर तरह तरह के गीत गाने लगी. एक औरत ने दरवाजे पर आये हुए दुलहा को अपनी तर्फ मुखातब करके नीचे मुताबिक मुबारक बाद देना शुरु किया—

"हमें मालूम है सब कुछ, नहीं मालूम क्या तुमको ।
"हुए बेशर्म थे जिसदिन, नहीं मालूम क्या तुमको ॥ ?
"करूंगा आर्य रीतिसे, विवाह अपना मैं ये हट था ।

"धर्म क्या चीज है असली, नहीं मालूम क्या तुमको ॥ २
"दयानन्द नाम तो था ठीक, मगर सब काम था उलटा।
"सभी धर्मोंकी की निन्दा, नहीं मालूम क्या तुमको ॥ ३
"धर्म भारत किया गारत, उलट कर वेद मन्त्रोंको।
"लिखे औरतको दश खाविन्द, नहीं मालूम क्या तुमको॥४
"बचो बच्चे! हटो इससे, धर्म उसका है दुःख दाई।
"किया अंधेर "स्वामी"ने, नहीं मालूम क्या तुमको ॥५
"पढा करतीथी जब "माया", विनिर्मित ग्रंथ "स्वामी"के।
"बकी थी बेहया होकर, नहीं मालूम क्या तुमको ॥ ६
"फक्त पढने से ग्रंथोंके, बनी बेशर्मथी जब ये।
"हुई नफरत है अब उनसे, नहीं मालूम क्या तुमको॥ ७

(बरात को यथा योग्यस्थान में उतारा दे दिया गया, नियत लगन के समय में वरको विवाह मडप में बुलाकर सनातन धर्मकी रीति से बडे आनन्द पूर्वक विवाह संस्कार किया गया! विवाह के अगले दिन दुपहेर के एक बजे जहा बरात ठहरी थी वहां महफल लगी. तमाश बीन लोगो से मकान गचा गच भर गया लडके और लडकी वालों के भाईबंद सब ही मौजुद थे यह ठाठ देखकर)

प० हरदत्त- (शारदाचद्रसे) देखिये साहब! क्याही महफल लग रही है, मगर बिना वेश्या के नाच के यह एसा है जैसे स्त्री सब श्रृंगार करले ओर कपडे न पहने! क्या करु आप मानते नहीं है वरना मै अभी अपनी तरफसे एक तायफा तो जरूर ही मंगालू!

शारदाचंद्र- (हरदत्तकी अत्यंत अभिलाषा देखकर) अच्छा भाई साहब ! अगर आपकी यही इच्छा है तो लो अभी किसीको भेजकर मंगवाता हूं ! बोलो किसे बुलाया जावे ?

पं० हरदत्त- (खुश होकर) बस बुलाना हो तो " आफताब " को ही बुलाईए ! चालीस रुपयेकी जगह पचास सही मगर लोग तो खुश होंगे और कहेंगे तो सही कि किसी के विवाह में रंडी आई थी !

(यह सुनकर "शारदाचद्र" ने एक अपने खास आदमी को भेजकर " आफताब " को बुलवा मंगाया, मगर " आफताब " के आने स पहले दो भाट कहीं से आ पहुंचे उन्होंने आते ही)

भाट- (कवित्त)

जय हो जजमानकी बात करुं ज्ञानकी
ध्यान दे सुनिये कलयुगकी कमाई है ।
दयानद सरस्वतीने वेदके प्रमाणसे ।
नई एक रीत मत आपने चलाई है ॥
सुता सुत जायवेको उत्तम प्रकार एही ।
एक दो तीन पति करो सुखदाई है ॥
एकादश पतिलों बनाय उपजावे पुत्र ।
वेदको प्रमाण दोष दीखत न भाई है ॥

(यह सुनतेही महफलमें बैठे हुए लोग एकदम हसपडे लेकिन दश बीस जो समाजी महाशय बैठे थे वे जरा हिचकिचाये मगर करही क्या सकते थे ? इतनेमें-

शारदाचन्द्र– (भाटसे) अरे भाई ! तेरा क्या नाम है ? और कहासे आया ?

भाट– (दांत निकालता हुआ आगे बढकर दोनों हाथोंसे जुहार करके) हजूर ! मैं " बिजनोर " से आया हूं ! मेरा नाम " कपोल कल्पित " पाडे है ! जजमानकी जय रहे ! (बीचमें बैठी हुइ " आफताब " (वेश्या) को दोनों हाथ जोड कर)

हे स्वर्गकी सीढी ! लक्ष्मी सहोदरे ! हे सर्व प्रिये ! मैं लाडु भट्ट आपकी क्या स्तुति कर सकता हू ! हे धर्म प्रचारिणि ! प्रत्यगालिंगनीरभे ! आपका अनुकरण करानेके लिये भारत वर्षकी स्त्रियोंका पतिव्रता धर्म भ्रष्ट करनेको हमारे बाबाजीने बडे प्रयत्नसे ग्रंथ बनाया है वह आपको मिला कि नहीं ? अगर न मिला हो तो लादूं ?

हे देवि ! आपके समान जगतमें परोपकारी मुझे तो कोई नही जान पडता ! हे सभा मंडपकी मन मोहिनि ! धन्य है आपको ! आपके दर्शनसे आज मेरा जन्म जन्मका धर्म कर्म सफल होगया ! (सभासदोंकी तर्फ एक हाथसे " आफताब " को बताता हुआ)

" जात्यन्धाय च दुर्मुखाय च जरा–
जीर्णाखिलाङ्गाय च ।
ग्रामीणाय च दुष्कुलायच गल–

स्कुष्टाभिभूताय च ॥
यच्छन्ती सुमनोहरं निजवपु-
र्लक्ष्मीलवश्रद्धया ।
पण्यस्त्री सुविवेककल्पलतिका

स्वस्त्रीषु रज्येत कः ? ॥ १ ॥ " (१) (ब्लाकटानंद) वाह ! वाह ! क्या कहना है ? शास्त्र कारकी बलिहारी जाऊं ! कहीं पाऊं तो सीस नवाऊ ! गुन गाऊ ! मर जाऊ ! तौभी पार न पाऊ ! जजमानजी ! आज आपका बडाही पुण्यका उदय है ! देखो तो एक कविने क्या ही अच्छा कहा है—

" यवनी नवनीतकोमलाङ्गी
शयनीये यदि नीयते कथ चित्
अवनीतलमेव साधु मन्ये
नवनी माधवनी विनोदहेतुः ॥ "

अर्थात्–यवनी वेश्या नवनीतके समान कोमल अगों वाली

---

(१) अर्थात् जन्मके अधेको, वदसूरतको, सार अगोंसे जीर्ण शिथिल अग वालेको गंवारोंको, दुष्ट कुल वालोंको, गलित कुष्ठरोग वालोंकोभी तथा और भी प्रत्येक पुरुषको थोडासा धन लेकर अपना मनोहर स्वर्णके समान अगको केवल परोपकार और दया करके ही अर्पण–करदेती है ऐसी कल्प लतिका वेश्याको छोडकर दूसरेमें कौन मूर्ख चित्त लगावे !

अगर भाग्य वश शयन कालमें किसीको मिलजाय तो उसी समय उसका पृथ्वीतल पर जन्म होना सफल होता है क्योंकि वह इद्राणीसे भी अधिक सुख देने वाली होती है !

(अपने मनमें) हाय हाय ! पापी पेटके लिये मैं इनके गुन गाउ ! राम राम यह तो कभी न होगा !

(शेर)–" जो फसे फन्देमें इनके वो गये शुभ कामसे ।
दीनसे औ धर्मसे औ शहर जगल ग्रामसे ॥
है वही मूरख जो घिसते चाम देखो चामसे ।
जायगे अग्निमें डाले जो विमुख है रामसे ॥
धन वो देकर रडियोंको बात अभिमानी करें ।
पापके भागी है वो जो धर्मकी हानी करें ॥
फिर उसी धनको लेके रडियां कुर्बानी करें ।
मांस औ मदिरा मगा भडुवोंकी महमानी करें ॥"

हत् तुमारी ! रडियोंको धन देनेका अंतमें यही फल ! छिः ! छिः ! कहा आ फसा !

(प्रगट सभासदोंसे) भगवान् आपका तप तेज प्रताप बढ़ावे ! तो यह भाट भी कुछ पावे ! जय हो ! (इतना कहकर बैठ गया तब दूसरा भाट)

गट्टूलाल–"सत्य बराबर धर्म नहीं, नहीं झूठ सम पाप ।
सत्य धर्मका मूल है, झूठ पापका बाप ॥ "
" कोई ले निरूक्त नाम विधवा नियोग करे

वहां भी परंतु नहीं लिखा ऐसा रूल है ।
कोई ले निघन्टु नाम विधवा विवाह करे
वहाभी न लिखी कही मित्रो ! ऐसी भूल है ।
कोई लेके व्यास नाम विधवाको वेटा देवे
वो भी गप्प क्यों कि नहीं वेद अनुकूल है ।
न मालूम सेठ और वाव क्यों प्रमादी हुए
विधवा विवाह नहीं ईशको कबूल है ॥
विधवाके प्यारे वावू कामसे मुदार हुए
वने है वेकारे नारी विधवा निहारके ।
लाते दरवार करें विधवा विचार होवे
विधवा नियोग वावू रोवे चीख मारके ।
होवते वेहाल हाल विधवाका देख देख
विधवा नियोग छापे वीच अखवारके ।
विधवाके भक्त वावू भोगोंमें आसक्त हुए ।
विधवाको कचनी वनावें ये पुकारके ॥
विधवाके प्रेमी वावू विधवाका जाप जपे
विधवाकी सध्या करें भक्त निराकारके ।
रात दिन सदाकाल विधवाको यादकरे
देखो वावू ध्यानी शुद्ध ब्रह्म निराकारके ।
रूल व्यभिचारके जो नारीके विगार वाले
देखो सेठ ज्ञाता वने ब्रह्म निराकारके ।
न मालूम विधवाके वने क्यो ये वाव वैरी
विधवाको कंचनी वनावें ये पुकारके ॥
माता स्वसा वेटी बैठी विधवा अनेक घर

क्यों नहीं कराते पति वाको गप्प मारके ।
माता आदि वावू और सेठका सियापा करें
वावू सेठ वके व्यर्थ बीच जा बजारके ।
घरोंमें अघेर सेठ विधवासे शादी करें
कामके अधीन वैठे खाक सिर डारके ।
पतिव्रता धर्म न सुनावें सेठ विधवाको
विधवाको कचनी वनावें ये पुकारके ॥
एक पति छोड पति दूजेका जो नाम लेवे
जान लो वो नारी ठीक वेश्या है वजारकी ।
पति मरे वाद पति दूजेकी जो इच्छा करे
पूछ विना मानो उसे गर्दभी कुम्हारकी ।
रोगी पति त्याग जो अरोगी दूजा पति करे
जान लो वो वेटी किसी ढेढ़ या चमारकी।
मनूका सिद्धांत नारी दूजा न वनावे पति
आज्ञा है ये ठीक शुद्ध ब्रह्म निराकारकी ॥ *

(ज्यों ही भाट इतना कहकर चुप हुआ त्योंही एक महाशय महफलमें से उछल कर आ खड़ा हुआ और बोला) अरे ओ ! वट्ट के भट्ट ! चुपकर इन चिकने चुपड़े ववारों से क्या भारत को रहासहा भी गारत किया चाहता है ? भाड में जाय यह तेरी कविता और चुल्हे में पडे तेरी यह विरुदावली ! तेरे जैसे झूठे खुशामदीयोंने ही देश घातक धर्म नाशक पाखडियों को

---

* स्वामी आलारामसागर सन्यासी । (मनहरछंद)

प्रशंसा के वैलून में चढाके देशका सत्यानाश करना शुरु किया है ! (इतने में)

शारदाचंद्र– (आफतावसे) क्यों ? अव क्या देर है ? उठो ! होने दो ! हां !

आफताव– (खडी होकर दोनों हाथों से सबको सलाम कर वडी सुरीली अवाजसे गाने लगी)

"ये कैसा कलयुग का दौर आया,
"कि सत मिटाया असत वढाया ।
"उडाया धर्म और कर्म सारा,
"अधर्म वृद्धि में मन लगाया ॥ १

(१) "जो मांस संयुक्त भात खाये,
"वो वीर वेदज्ञ पुत्र पाये ।
"कोई समाजी हमें वताये,
"किसीने इसको भि आजमाया ॥ २

(२) "उदर में सुत होवे जव कि मांके,
"तो वस्त्र वालक को तर पिन्हाके ।
"खिलावे जंगल में वाप जाके,
"वचन असंभव ये क्या सुनाया ॥ ३

(३) "जो घी मृतक के समान पाओ,
"तो अपने मुरदे को तुम जलाओ ।

---

(१) संस्कार विधि सं० १९३३ पृष्ठ ११
(२) " " " ४१

"नहीं तो जगलमें छोड आओ,
"ये कर्म अनुचित तुम्हें सिखाया ॥ ४

(४) "तुम्हारा ईश्वर है दुःख भोगी,
"कभी वो होता हो स्यात रोगी ।
"कब उसकी दुखों से मुक्ति होगी,
"गुरुने यह भी तुम्हें बताया ॥ ५

(५) "गुदाकी और लिंग की भी शुद्धि,
"करे गुरु क्या कहा है बुद्धि ।
"प्रगट है स्वामीजीकी अशुद्धि,
"ये हास्य वेदोंका भी उडाया ॥ ६

(६) "जो चाहे शूरोंसे अपनी रक्षा,
"तुम्हारी रक्षा वो क्या करेगा ।
"कहो तो ईश्वरको भय है किसका,
"ये दोष उसको वृथा लगाया ॥ ७

(७) "वह नील गाओं के वधकी आज्ञा,
"यजु की व्याख्या में जो न लिखता ।
"कहे तो कोई बिगाड क्या था,
"ये पाप भारी वृथा कमाया ॥ ८

---

(३) संस्कार विधि १९३३ पृष्ठ १४१
(४) दयानन्द. यजुर्वेद भाष्य पृष्ट ४३५
(५) " " " ५००
(६) दयानंद यजुर्वेद भाष्य पृष्ट ६३५
(७) " " " १३६३

(८) "सुअर की उपमा जो नृपको दी है,
"किसीने मित्रो कभी सुनी है।
"ये उस के अज्ञान की ध्वनी है,
"जो मूं में आया सो कह सुनाया ॥ ९

(९) "कहो तो बकरे का दूध और घी,
"किसी मनुजने सुना कहीं भी।
"ये स्वामीजीकी थी तीव्र बुद्धि,
"यजुकी व्याख्या में जो छपाया ॥ १०

(१०) "लिखा वृपभ से है भोग करना,
"गुरुकी आज्ञा पै ध्यान धरना।
"जरा तो ईश्वर से मनमें डरना,
"ये कैसा अज्ञान उर में छाया ॥ ११

(११) "जो चेले स्वामीजीके कहावें,
"वह पालें उल्लू गधे बढावें।
"लिखा गुरुजीका हम दिखावें,
"सवक ये कैसा तुम्हें पढाया ॥ १२

(१२) "कहै वह शंकर की मृत्यु जैसे,
"लिखी नहीं दिग विजय में वैसे।
"किया है भापण अनृत ये कैसे,
"कि उनको जैनों ने विप खिलाया ॥ १३

---

(८) दयानंद यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ १६८०
(९) " " " ७४ अध्याय २९
(१०) " " " ११९ अध्याय २१
(११) " " " ३३१ अध्याय २४
(१२) सत्यार्थ प्रकाश सन् १८८४ पृष्ट २०७

(१३) "लिखा है मुक्तिको जहल खाना,
"समान फांसीके उसको माना।
"समझ ले मन में जो होव दाना,
"ये कैसा वे ताल गीत गाया॥ १४

(१४) "कहे वह मुक्ति से लौट आना,
"न व्यास के भी वचन को माना।
"विरुद्ध वेदोंके है ये गाना,
"लिखेको अपने भी वो भिखरा॥ १५

(१५) "लिखे हैं सौ वर्ष के भी जो दिन,
"जरा समझ कर उन्हें तूं गिन।
"थी बुद्धि स्वामीजीकी परिछिन्न,
"कि योग्या लाखों का स्वामी माना॥ १६

(१६) "ध्रुवा है पृथ्वी ये वेद गावें,
"विरुद्ध इसके तू क्यों बतावे।
"अनृत मे कोई भी डर न लावे,
"कभी न झूठे ने स्वर्ग पाया॥ १७

(१७) "गुरुओं लोगोंको लिए डुबावे,
"निराहि करें तथा बतावे।

"जरा तो लज्जासे मुं छिपावे,
"कि मनको हड्डी में स्थिर कराया ॥ १८

(१८) "पति से पहिला हो गर्भ जिसको,
"नियोग फिरभी विहित है उसको ।
"कहूं समंजस मैं कैसे इसको,
"महा असंभव वचन सुनाया ॥ १९

(१९) "पति हो जिसकाकि दुःखदाई,
"उसे नियोग विधि विहित बताई ।
"यही है स्वामीजीकी बडाई,
"कि दुःख अबलाओंका मिटाया ॥ २०

(२०) "किसी का पति जो विदेश जाये,
"नियोग करके वह सुत जनाये ।
"ये धर्म कैसा गुरु दिखाये,
"कहो तो शिष्यों के मन भी भाया ॥ २१

(२१) "है सब मनुष्यों से ग्राह्य नारी,
"तो फिर न वर्जित रही चमारी ।
"ये कैसी कलयुगकी आई वारी,
"कि धर्म और कर्म सब मिटाया ॥ २२

---

(१७) सत्यार्थ प्रकाश सन् १८८४ पृष्ट १८८
(१८) " " १२०
(१९) " " ११९
(२०) " " " ११९
(२१) " " " ९७

(२२) "न कोई ईश्वरका है विजाती,
"ये गाई वे ताल क्या प्रभाती ।
"बने हो शकर के तुम घराती,
"तो उनसे फिर द्वेष क्या बढाया ॥ २३

(२३) "जो ग्रंथ भाषाके सब हैं मिथ्या,
"तो होवे 'सत्यार्थ' कैस सच्चा ।
"जरा तो मन में तुं अपने शरमा,
"तेरे वचन से तुझे-हराया ॥ २४

(२४) "किया है कैसा नियोग जारी,
"कि भोगे दश मर्द एक नारी ।
"है स्वामीजीकी ये होशियारी,
"कलंक वेदोंके सिर लगाया ॥ २५

[ब्राह्मण सर्वस्व]

('आफताब' के इस गीतको सुनते ही सब समाजी महाशयों के चेहरे फक्क पड गये ! और इधर उधर झांकने लगे ! मगर उस परी के जादु जमाल व हुसने कमाल के सामने ऐसे मोहनी माया में दबे हुए थे कि कुछ कहने की बात नहीं थी ! बुद्धिमान ताड गये कि हा खूब चोट लगाई ! इतने में कोट पतलून चढाये,

---

(२२) सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २४५
(२३) " " " ७१४
(२४) " " " ११८

अजी सुनिये ! मै किसीके वाराजान बांके पठानकी लौंडी या गुलाम तो हूं ही नही जो तुम्हारे दवानेसे अपना नाम डूवाऊं ! मैंने वडे वडे शहजादे नवावजादोंकी वड़ी वड़ी महफलोंमें गाया तोभी अपनी खुशीकी चीज गाई है मगर खैर क्या मुजायका है अवके पूरी पूरी सची सची ही कैफियत गाऊ चाहे कुछ हो ! वहुत करेंगे तो मं वना लेंगे वस हद है !

(गाना)

"कहां सभा और समाज किसका,
आया ये कलयुगका राज क्या है ?
"नया जमाना नई है रंगत,
कलतो क्या था औरआज क्या है ?
" अंगरेज लोगोंकी करके नकलें,
वनाई क्या क्या अजीव शकलें ।
" है कोट पतलून बूट कालर,
चुरट मुंहमें मिजाज क्या है ? "
" टकोर तवला औ हारमोनियम्,
न संध्या वंदनकानाम नेस्त ।
"आप साहिव ये वीवी मेंम,
ये चक्की चरखा रिवाजक्या है ? ॥
"कहातो होटल औ कहा अग्निहोतर,
इधर है व्हिश्की वराडी वोतल ।

"सुनावे खबरें क्या आके लोकल,
नजरमें अरशोंमें राज़ क्या है ? ॥
"जले हैं भारतके भाग यारो,
हुए जो ऐसे नमूने पैदा।
"वर्ण व्यवस्थाको तुम ही तोडो,
तुम्हारे शिरपे ये ताज क्या है ? ॥
"गई है विद्या अविद्या छाई,
धर्म कर्मकी हुई सफाई।
"पढे लिखे नहीं एक अक्षर,
कहें मनूजी महाराज क्या है ? ॥
"उलटे मन्त्रोंकी लेके आशा,
बनाई मर मरके पोथी भाषा।
"कहा वशिष्ट और व्यास आदिक,
कहा " स्वामी " समाज क्या है ? ॥
"हुई है विधवासे क्या अवज्ञा,
कि कैद ग्यारां खसमकी ला।
"करे जो दिन भरमें ग्यारां ग्यारां,
तुमको इतराज आज क्याहै ? ॥
"कहां पतिव्रत कहा ये व्यभिचार,
रहे न वरकी जरूर दरकार।
"नशस्त बाजार क्या है बदकार,
तो बेचारा अजूद बाज क्या है ? ॥

"पढेगी शाला जबकि बाला,
अंगरेजी सीखेंगी सारी चाला।
"करेंगी शेकहैन्ड आज हमसे,
तो वरकी कन्या मौताज क्या है ? ॥
"कहा तो वेद और कहां ये वदर,
हमारे भाई बन कलंदर।
"चुनाव चाहें न चाहें इनको,
जरातो चेहरेपै लाज क्या है ? ॥
"बवाय ताऊन है समाजी,
बचो बचो तुम रहोगे राजी।
"सिवाय खारज अज खानदाके,
और दीगर इलाज क्या है ? ॥

इसको सुनते ही महाशयोंकी अकल चकराई, सोचने लगे कि, देखो राडने कैसी वजहकी गजल गाई है जो मारे शरमके गर्दन झुकानी पडी ! लेकिन जो बीचमें सनातन धर्मी वगैरह लोग बैठे थे वे तो खूबही खुश हुए ! इतनेमें बीचमेंसे एक मशखरा बोल उठा)

धन्यरी माई ! आफताब बाई ! बडे भाग्यसे तू यहा आई ! इनकी सफल हुई कमाई ! तमाशबीनोने जीतेजी मुक्ति पाई ! है तु किसी अगले जन्मके सन्तकी जाई ! तैने फेरी धर्म दुहाई ! इनकी सची भागवत सुनाई ! ये करते अकलके अंधोंकी ठगाई ! तैने जग कीर्ति फैलाई ! अरी वाहरी मेरी ताई ! अशराफोंकी भौजाई ! तेरी जय करे ज्वाला माई !"

यह सुन साराही मैफलका मकान गूंज उठा ! इतनेमें भाडोंका लश्कर भी बरसाती मींढकोंकी तरह, तरह तरहकी बोलिया बोलता हुआ आ निकला ! और तालियां बजाने लगे फटा फट् फटा फट् ! कोई किसीकी रोडे मोड खोपडीपर चपतका चांटा जमाता था चटाक ! कोई दूसरेके सिरपर फटाहुआ बास फटकारता था फटाक ! कोई बोलता था ! कोई हसता था, कोई हिंन हिनाता और कोई गधेकी तरह रेंकता था ! कोई म्यांऊ कोइ फुस ! गरज तरह तरहके कतूहल करते करते उन्होंने एक नकल करनी शुरू की.

एक भाड सिरसे पावतक रोडमोड (जो सबका उस्ताद था) कमरमे लंगोट ऊपरसे एक भगवें रंगकी चद्दर ओढे हुए सबके बीचमें एक फुटे हुए तेलके पीपे (टीनका कनस्टर) को मुंधा कर, उसपर महफलकी तरफ मूं करके बोला—

उस्ताद– कढी विगाड यार निखट्टू है बस नाम हमारा ।
सबके सब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥
उस्ताद– उमरा जो कहे राततो मैं चांद दिखादूं ।
खुशामदसे भरा हुआ है ये जाम हमारा ।
सबके सब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा।
उस्ताद– महफल में अमीरों की हा में हा करू ।
इन उल्लुओं मे नाम है सरनाम हमारा ।

पीकदान चपर गट्टू है बस नाम हमारा ॥
दीन इमान वेच वजर वट्टू है नाम हमारा ॥
सबकेसब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥
उस्ताद्– गप्पें इधर उधरकी उडाते है हम सदा ।
यक झूठ यही दोस्त है गुलफाम हमारा ।
करते है खुशामद हम आमद इसीसे है ।
इन मशखरों में पंडित है नाम हमारा ।
फंदेमें मेरे आन के लाखों फंसे है काग ।
इस हाल मे गुलशन में विछा दाम हमारा ।
अजब सांड निखट्टू है बस नाम हमारा ।
सबकेसब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥
उस्ताद्– दीनो इमान जर है रामो रहीम जर ।
मादर पिदर बिरादर है दाम हमारा ॥
जरके लिये अदालतमें झूठ बोल दूं ।
जरका गवाह नाम है सरनाम हमारा ॥
हिन्दू से नहीं काम न इसाकी कौम से ।
जर वालों की चौखट पे है विश्राम हमारा ।
अल्लाह जर खुदा है कावा है जर नबी है ।
बस जर यही है दीन और इस्लाम हमारा ॥
कपडा कहींसे खाना लाते है मागकर ।
बस है यही रोजगार सुबह श्याम हमारा ॥
सबकेसब –यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥
[ड्राफ्टानद]

(इतना कहकर जो सब भाडोंका उस्ताद था वो ही खडा हो कर एक दास्तान बयान करनेके लिये महेफल-में तमाशबीनोंका ध्यान अपनी तरफ खैंचता हुआ बोला)

"जनाब ! जरा कान लगाकर सुनिये !"

एकभांड- (उठकर उस्तादके मूंके साथ अपना कान लगा कर खूब ऊंचेसे जी हा ! सुनाईए !

उस्ताद- (हाथसे परे ढकेलकर) अरे मूर्ख ! ये क्या करता है ? मूंके आगे कान लगाता है ! (लोग हंसते हैं)

भांड- (धक्का लगनेमे जान बूझकर लोगोंपर गिरता हुआ) या खुदा ! कर खैर ! अजी आपनेही तो कहा कि कान लगा कर सुनिये !

उस्ताद- मूर्ख ! तुझको किसने कहा ?

भांड- तो किसको कहा ?

उस्ताद- इन सब सभासदों को !

भांड- अच्छा ! तो मैं ध्यान लगाकर सुनता हु (लोगोसे) आप कान लगाकर सुनिये ! (सब लोग हंसते हैं)

उस्ताद- जनाब ! शहर जालंधरमें "लाला घटनाथ रगजी" बडे पैसे वाले मालदार आसामी थे ! उनका एक लडका "अमरनाथ नगजी" बीस बाइस बरसकी उमरका जवान एकका एकही था ! उससे एक दिन किसी बातके लिये "घटनाथ" से बोल चाल होगई, वोभी बीजी मूंजकी रस्सीके, बडे भाई ऐंठवा मिजाजीके पुतले थे !

बस फिर क्या था ? अपने बाप " घन्टनाथ " से गुस्से होकर भाग निकले ! और शहर पूनेमें जाकर एक आर्य विश्रांति होटलके बबरचीकी जगह तीस रुपये महीनेपर नौकर होगये. इधर " घन्टनाथ रंगजी " की उमर पचपन वर्षसे ऊपर हो चुकी थी अपने मनमें विचारने लगे कि-" हे निराकार ! तेरी मूर्तिके देखनेसे मेरी आधी व्याधी और उपाधी सबही दूर होगई है. मगर सृष्टि की आदिमें अनेक जवान स्त्री पुरुषोंको पैदा करने वाले ! निराकार ! अबमें क्या करू ? मेरा लडका तो भाग गया ! और घरमें दौलत बे शुमार है इसका मालिक किसको बनाऊं ? हे अमूर्त्त ! तूने स्वयं आ आकर अपने सेवकोंकी खबर ली है मैं तो तेरा पक्का सेवक हूं !

" घन्टनाथ " की इस प्रार्थनापर " निराकारजी " को भी चिन्ता हुई कि बेशक ! कोई उपाय अवश्यही करना चाहिये ! तब "निराकार" ने आकर "घन्टनाथ" के अंदर प्रेरणा की, कि यतीमखानेमें " उत्तमकुल भूषण " चमारकी लडकी सुकन्या " गिदौडी " बाईके साथ विवाह कर ! उससे जो पुत्र होगा वह इस जायदातका मालिक बनेगा ! बस फिर क्या था "घन्टनाथ" ने लोहेकी अलमारीसे एक थैली निकाल उ..का मूंह खोल रूपचद मनीरामकी सुरीली आवाजसे लोगोंके दिल अपने काबूमें करलिये और घटोंके अंदरही "घन्टनाथ" " गिदौडी " बीबीको व्याह लाये ! जब " गिदौडी बीबी " घर आई तो झाड, फानुस और तरह तरहके

फरनीचरसे सजे हुए मकानकी शोभाको देख साक्षात् अपने आपको स्वर्गलोकमें आगई मानने लगी

मगर ज्यों ही " घन्टनाथ " एक हाथमें लाठी लिये, दूसरा हाथ टेढी कमरपर रखे हुए, माथेमें रुईके समान सफेद बालोंको बिखेरे हुए, बिना दांतोंके जबाडे (मुंह) को हिलाते (मानो सुपारी ही खारहे हों) खों खों करते हुए " बीबी गिदौडी " के सामने आकर खडे हुए, त्यों ही " गिदौडी बीबी " के तो प्राण खुश्क होने लगे ! विचारने लगी कि हाय ! हाय ! क्या यही मेरा पति है ? इतनेमें " घटनाथ " ने बीबीको पकडनेके लिये हाथ लवाया त्यो ही " गिदौडी बीबी " तो पीछे पैरों हटती हुई, दोनों हाथ ऊचे करती हुई म फाडकर चिल्लाई कि हाय हाय ! दौडो दौडो मुझे इस राक्षससे बचाओ बचाओ ! खा'ली ! खा'ली ! ! (भाड इतना कहते पीछे भार पीठ चूतडोंके बल गिरा यह देख सारी महफल हस पडी आखर उठकर फिर आगे बोला)

जनाबमन् ! जब " घन्टनाथ " ने "गिदौडी बीबी" को इस तरह चिल्लाते देखा तो दोनो हाथ जोडकर गिड गिडाते हुए और कापते हुए बोले-चु-चु-चु-चुप चुप-चुप को-को-कोई सु-सु-सु-सुनेगा सुनेगा दरमत दरमत तू मडा प्याडी प्याडी मे कु-कुस नहीं क-क कहेता मै जा-जा ता हू ! इतना कहकर " घट नाथ " नीचे चले गये ! "गिदौडी बीबी" सोचने लगी कि हे, ईश्वर ! त बडाही दयालु है जो आज मुझे

यमराजके हाथसे बचाया! खैर बात क्या इसी तरह रोज मर्रा "घंटनाथ" की "गिदौडी बीबी" के साथ गुजरती रही! होते हवाते एक सालके बाद "घंटनाथ" की घंटी बंद हो गई और प्राण पखेरू उड गये! तब "गिदौडी बीबी" ने भी जो तर तर माल था वह तो अपने कबजे किया, और मकानको ताला लगाकर अपने भाई "कुल कलंक" मूज कीपर (मोची) के पास शहर पूने में पहुचा और आनन्दसे रहने लगी. जब दो तीन महीने बीत गये तब एक दिन अपने भाई "कुलकलंक" से कहने लगी कि भाई! मुझ से तो अब रहा नहीं जाता इस लिये "स्वामीजी" के कहे मुताबिक कोई अच्छा आर्य पुरुष मिले तो उसके साथ नियोग करलूं! "कुल कलंकजी" तो थेही "स्वामीजी" के पूरे भगत अपनी बहन से कहने लगे कि, एक मेरा मित्र यहां पर है, उसने मुझसे कहाथा कि, अगर कोई नियोग करनेकी इच्छावाली स्त्री हो तो, मुझे कहना! सो बहुत ही अच्छी बात हुई कि तुमने ही यह बात कही. गरज अगले दिन जाकर "अजरनाथ नंगजी" के साथ बातचीत करके "स्वामीजी" के लेखकी जय बुला दी, मिया बीबी राजी तो क्या करे काजी! कलयुगका जमाना बड़ा ही सस्ता टके सेर खाजा टके सेर भाजी! बापकी औरत और दौलत दोनो बेटेको स्वयं आ मिली! किसमत नाम इसका ही है! मगर न "गिदौडी बीबी" को यह खबर कि, ये मेरे ही खाविन्दका लडका है! और न "अजर

नाथ नंगजी" को यह खबर कि, ये मेरे ही बाप की बीवी है! आखिर एक साल के बाद "नगजी" की मेहरबानी से "गिदौडी बीबी" को पुत्र फलकी प्राप्ति हुई, उसका नाम उन्होंने "जगत उजागर" रखा एक दिन आनंदमें बैठे हुए "नगजी" अपनी स्त्री "गिदौडी बीबी" से कहने लगे कि-प्रिये! अगर तुम्हारी मनशा हो तो चलो मैं तुम्हें अपने देशको ले चलू, क्यों कि वहा मेरा घरबार बाग बगीचा सब है, और मेरा बाप भी बुड्ढा है! वह मेरे वियोगसे बडाही दुःखी हो रहा होगा! बीवीने पूछा कि, तुम्हारे बापका क्या नाम है? "नंगजी" बोले प्रिये! उनका नाम "चंदनाथ रंगजी" है. यह सुनते ही "गिदौडी बीबी" का चेहरा सफेद पूनी हो गया! विचारमे पडी कि, हाय हाय ये क्या आफत? फिर बोली कि, भला! किस शहेर में? "नंगजी" बोले कि, शहर जालधरमें! इतना सुनते ही बीबीजी तो चिल्ला उठी कि, हाय! हाय! मैं उन्ही की तो औरत हू और यह माल जर जेवर सब उन्हीकी कमाई! जब वो मर गये तब मै भाग आई! "स्वामीजी" की दुहाई! मैं तो ठगाई सो ठगाई! मगर तुमने मुझ (अपनी) अम्मा के साथ करके सगाई! कहो तो कौन सी डिगरी पाई? अब तुम्हें अम्माके खसम कह कर पुकारूं या अम्मा के सपूत? यह सुन "नंगजी"! के भी हाथ पैर कॉपने लगे और बोले कि, अरी बीबी माई! यह हुआ सो हुआ! मगर अब यह कहे कि, ये जो तेरी

कूख से "जगत उजागर" पैदा हुआ है यह मेरा कपूत? या मेरे बापका सपूत? बीबीजी बोली कि, ना ना न तेरा पूत न सपूत! यह तो उसी समाज का भूत है जिसने तेरे साथ मेरा नियोग कराया! इस नकलको देखकर तमाम महफल हँस हँसकर लोटपोट होने लगी। इतने मे एक बुड्ढा मुकडे मूंका भाड उठकर दाढी मरोडता हुआ इस दास्तान सुनाने वाले "उस्ताद" से बोला कि हूँ! नकल करी अपनी भांडकी!

"अम्माने बेटे के साथ नियोग किया तो कौन सा गजब किया?" जब "स्वामीजी" की आज्ञा है तो फिर मां बेटा क्या? और जात पांत, कोली, चमार क्या? कई मुसलमान समाजी आर्य हो गये! यह सुन दूसरा भांड बोला कि, अरे कई मुसलमान क्या सैकडों रावल समाज के अग्निकुंडका धुआ सूघ सूंघ कर आर्य होगये! तीसरा बोला कि हैं! सचमुच! तबतो–गजब टूटा! गजबटूटा! गजबटूटा! चोथा बोला–धर्मलूटा! धर्मलूटा! धर्मलूटा! पाचवेंने कहा–कर्मफूटा! कर्मफटा! कर्मफूटा! छठा बोला अजब झूठा! अजब झूठा! अजब झूठा! सातवा बोला तबतो ढोल फूटा! ढोल फूटा! ढोल फूटा! इस तरह कहते हुए एक के पीछे एक करके सब चले गये! लडकी वालेकी तर्फमे आए हुए सब लोगोंको पान सुपारी दिया गया और महफल बरखास्त हो गई॥

तीसरे दिन विदा होने के समय दहेज वगेरह देकर "ब्रह्मानंद" को चौक में एक पाटले के ऊपर बिठा-

कर तिलक किया। इतनेमें " ब्रह्मानंद " के चारों तरफ खडी हुई बहुतसी औरतों मेंसे " माया " की मामीने कहा कि " अपने यहां " छन " बुलानेका रिवाज है सो तो बुलवाओ ! इतना सुनतेही पास में खडी हुई एक लडकी)

चपा-(ताली बजाकर)

" छन पकाऊं छन पकाऊ, छन पकाऊ भाजी।
अम्मा इसकी दया नंदिनी, ये है आर्या पाजी।

यह सुनकर तमाम औरतें हस पडी, अपनी हांसी हुई जान कर कुछक क्रोध पूर्वक ऊंचेसे)

ब्रह्मानद-"छन पकाऊ छन पकाऊ छन पकाऊ रूठा।
" जिस पथमें तू है चलती, बिलकुल है वो झूठा ॥ "

चपा- वस ! घबराओ मत ! लो ! लो ! सुनो !
" आस कदम पास कदम, बीच में तू देख।
" एक जनी को ग्यारा धग्गड, यह स्वामीजीका लेख ॥
" वाह तेरा पथ वन्ने ! वाह तेरा पथ ! "

ब्रह्मानद-(हसकर) अरी ! वाह !
" छन पकाऊ छन पकाऊ, छन पकाऊ वाजी ।
" स्वामजीके मतसे जानी, बहुती रांडे राजी ॥
" तू तो मान या ना मान ! "

(एक स्त्री चपासे बोलीकि अरी जाने दे, चुपकर ! इसके साथ वहसना निकम्मा है. यूंही कोई अनघड पथ्थर फेंक मारेगा)

एक लडकी हुई जिसका नाम " शंका " रखा. "विं-श्वंभरनाथ " पर " माया " का जो प्रेम था वह अपने पुत्र " श्रीनाथ" के हुए बाद दिनपर दिन कमती होता चला जाता ही था; लेकिन पुत्री होनेके बाद बिलकुल ही चलागया. सिर्फ पतिके डरसे स्नेह दिखलाने मात्र रखती थी. इतनेमें " ब्रह्मानन्द " की कानपुरसे बदली होकर ' काल्पी ' जाना पडा, तब " शारदाचद्र " ने लिखा कि " विश्वभरनाथ " को नौवा वर्ष शुरू हो गया इस लिये यहा आकर उसके यज्ञोपवीत डाल जाओ अपने पिताकी आज्ञासे पन्द्रह दिनकी रजा लेकर अपने घर आकर " विश्वंभरनाथ " का यज्ञोपवित किया और फिर साथही वापस लेगया. "शारदाचद्र" ने " विश्वं-भरनाथ " की पढाई के संबधमें " ब्रह्मानद " से बहु-त कुछ बुरा भला कहा, मगर " ब्रह्मानंद " ने एक बात परभी ध्यान न दिया ! जब " ब्रह्मानंद " काल्पी के स्टेशनपर तबदील होकर आये तो यहा के स्टेशन मा-स्टर पडित "मुरारीलाल" बडे लायक और दयालु थे. उन्ही के हाथ नीचे " ब्रह्मानद " को काम करना पड-ताथा ! १०-१२ रोजके बाद " प० मुरारीलाल " ने " विश्वभरनाथ " को अपने लडके " जयनारायण " के साथ खेलते देखकर अपने मकानपर बुलाया ! (स्टे-शन के पीछे ही स्टेशन मास्तरका बंगला था, और उसी के साथमें एक दूसरा बगला था, जिसमे " ब्रह्मानद " तथा और दो बाबू रहते थे.)

पं०मुरारीलाल–(अपनी स्त्री " पद्मा " से " विश्वम्भरनाथको बता कर) देखा! यह नव सालका हूआ है, मुझे इसको देखकर बडी ही दया आती है कि, यह इतना बडा हुआ मगर इसके बापको न जाने क्या बेवकूफीका परदा पडा है? जो पढनेसे रोकता है! मुझे तो कल रोज मालूम हुआकि यह बात इस तरहसे है.

पदूमा–अजी आप क्या कहते हो! इसमें " ब्रह्मानद " की बेवकूफी है या नहीं यह तो परमात्मा जाने! मगर इसकी जो मतरेइ मा है वोही इसकी शत्रु बन रही है, आपको क्या मालूम? वो बाजुआनी इसके साथ क्या क्या सळूक करती है मुझे! तो मिसरानीने उसके मिजाजका सारा किस्सा सुनाया है यह तो खैर, लेकिन परसोंका जिकर है कि, अपना "जयना" और ये दोनोंहीं इन्हीं के सहन (बगलेके आगे) खेल रहे थे कि, इतनेमें इसकी माने इसे कहाकि, अरे बच्चन! ले " श्री नाथ " को लेजा, और अपने आपाके पास (दफतर) में छोड आ, इसने पासमें खडे हूए घरका कामकाज करनेवाले कहारके लडकेसे कहाकि, जा बे! इसे छोड आ, वह भी इतना कहनेपर झट उसे उठा कर दफतरमें ले गया, लेकिन न मालूम उस वक्त इस ऊपर इसकी माको ऐसा क्रोध आया कि रोटी खा रही थी, एक हाथमें अचारकी मिरच लिये हूए एकदम उठी और जहा यह खेलता था वहा आकर, एक लात इसको पीठमें मारी और झुझला कर, हाथसे पकड थप्पड मा-

रती हुईने वह अचारकी मिरच इसकी आंखमें धुंस दी यह कारवाई देख अपना "जयना" तो भाग आया. और मैं ऊचे ऊचेसे इसका रोना सुन कर वहा गई जाकर देखं तो ये मछली की तरह तडफ रहा था. मैंने उसे मना किया और उसके हाथसे इसे छुडाया! मैंने और मिसरानीने मिलकर इसकी आंख धोई मगर आख बिलकुल न खुली तब इसके बापको बुलवाया. उसने आकर पछा कि, क्या हुआ ? तो बोली कि, क्या करू कहना नहीं मानता था इस लिये आख में जरा लग गई ! उस वक्त इसके बापने कुछ डपटा. और रोते हुए इसको हस्पतालमें ले गया, वहा डॉक्टरने आख धोई. अपना "जयनारायण" भी साथ गया था उसने मुझसे आके कहा कि, अम्मा ! "विश्वभरनाथ" की आखम से डॉक्टर साहबने मिरचके तीन बीज साबत निकाले. आंख सूजकर लाल हो गई सो तो अभीतक भी लाल हो रहा है. अब आपही विचार कीजीयेगा कि, जहा यह हाल है वहां इसका सहाई शिवाय दव क और कान हो सकत है इतना घमंड तो मैंने किसी औरत म नहा देखा, आज इतने दिन यहा आये को हुए सीध मु बातभी नही ! मैंने बुलाया और वहा गई तो बोली !

लालके प्यार से एकदम सिसक सिसक कर रोने लगा) है! हैं! बेटा! क्यों ? क्यों ? (पुचकार कर) मत रोओ ! जानेदो गई गुजरी बातको ! भला यह तो कहो कि, तुम्हारा बाप तो तुम्हें प्यार से रखता है ?

विश्वभरनाथ– (रोना बंद करके) जीहा !

मुरारीलाल– तुम्हे पढाता क्यों नहीं ?

विश्वंभरनाथ–यह मैं नहीं जानता !

पं० मुरारीलाल–तुम्हारा मन पढनेके लिये करता है ?

विश्वभरनाथ– जी हा !

पं० मुरारीलाल– (तरस खाकर) अच्छा तो तुम यहा खेलनेके बहाने हमारे " जयनारायण " के पाससे पुस्तक लेकर पढा करो ! तुम्हारे बापको तो बहुत समझाया मगर न जाने उनके दिलमें क्या बैठ रही है ! सारा जहान तो पढने पढानेको अच्छा समझता है देखो जो तुम्हारा बाप पढा हुआ है तो ९० रुपये महीना पाता है; और जो नहीं पढे वह देखो कुली (मजूरों) का काम करते हैं. मैं भी पढ गया तो आज १२५ रुपया महीना पाता हूं. इस लिये पढनाही अच्छा है, तुम जब तक यहा हो वहा तक रोज मे जिस वक्त " जयनारायण " को पढाता हूं उस वक्त आकर थोडा थोडा पढा करो !

रती हुईने वह अचारकी मिरच इसकी आंखमें धुस दी यह कारवाई देख अपना "जयना" तो भाग आया. और मैं ऊचे ऊंचेसे इसका रोना सुन कर वहां गई जाकर देखं तो ये मछली की तरह तडफ रहा था. मैंने उसे मना किया और उसके हाथसे इसे छुडाया! मैने और मिसरानीने मिलकर इसकी आंख धोई मगर आंख बिलकुल न खुली तब इसके बापको बुलवाया. उसने आकर पूछा कि, क्या हुआ ? तो बोली कि, क्या करू कहना नहीं मानता था इस लिये आख में जरा लग गई ! उस वक्त इसके बापने कुछ डपटा. और रोते हुए इसको हस्पतालमें ले गया, वहा डॉक्टरने आख धोई. अपना "जयनारायण" भी साथ गया था उसने मुझसे आके कहा कि, अम्मा! "विश्वंभरनाथ" की आखम से डॉक्टर साहबने मिरचके तीन बीज साबत निकाले. आख सूजकर लाल हो गई सो तो अभीतक भी लाल हो रहा है. अब आपही विचार कीजीयेगा कि, जहां यह हाल है वहां इसका सहाई सिवाय दब क आर कान हो सकत है इतना घमंड तो मैंने किसी औरत म नहा देखा, आज इतने दिन यहा आये को हुए सीय मु बातभी नहीं! मेने बुलाया और वहा गई तो बोली !

पं० मुरारीलाल– (विश्वभरको हाथ से खींचकर अपनी गोदमें लिया) क्यों ? (अपने सा र बाता हुइ बातको सुनकर 'विश्वभर' का दिलभर-आया था, मगर मुरारी-

लालके प्यार से एकदम सिसक सिसक कर रोने लगा) है! हैं! बेटा! क्यों ? क्यों ? (पुचकार कर) मत रोओ ! जानेदो गई गुजरी बातको ! भला यह तो कहो कि, तुम्हारा बाप तो तुम्हें प्यार से रखता है ?

विश्वभरनाथ- (रोना बंद करके) जीहा !

मुरारीलाल- तुम्हे पढाता क्यों नहीं ?

विश्वंभरनाथ-यह मैं नहीं जानता !

पं० मुरारीलाल-तुम्हारा मन पढनेके लिये करता है ?

विश्वभरनाथ- जी हा !

पं० मुरारीलाल- (तरस खाकर) अच्छा तो तुम यहां खेलनेके बहाने हमारे "जयनारायण" के पाससे पुस्तक लेकर पढा करो ! तुम्हारे बापको तो बहुत समझाया मगर न जाने उनके दिलमें क्या बैठ रही है ! सारा जहान तो पढने पढानेको अच्छा समझता है देखो जो तुम्हारा बाप पढा हुआ है तो ९० रुपये महीना पाता है, और जो नहीं पढे वह देखो कुली (मजूरों) का काम करते हैं. मैं भी पढ गया तो आज २२५ रुपया महीना पाता हू. इस लिये पढनाही अच्छा है, तुम जब तक यहा हो वहा तक रोज मे जिस वक्त "जयनारायण" को पढाता हू उस वक्त आकर थोडा थोडा पढा करो !

विश्वंभरनाथ–बहुत-अच्छा! मगर मेरे बापको खबर होने न पावे!

प०मुरारीलाल– नहीं नहीं! इस बातसे बिलकुल बेफिकर रहो! (अपने लडकेसे) जयना! तेरे पास प्राइमर है?

जयनारायण– जी हा है!

पं० मुरारीलाल– लाओ! (जयनारायणने निकाल कर दी, विश्वभरसे) यह लो! इंगलिशमें ये २६ अक्षर होते है आज इन्हें याद करो और अच्छी तरहसे पहचानो!

विश्वंभरनाथ– इन अक्षरोंको तो मै पहचानता हू, और याद भी है।

प० मुरारीलाल–अच्छा–यह किससे सीखा?

विश्वंभरनाथ–तीन चार दिनसे "जयनारायण" से ही सीख रहा हू, हिन्दी के अक्षरभी सीख लिये है, और बाराखडी भी याद करली है!

पद्मा– (प० मुरारीलालकी स्त्री, विश्वभरके माथेपर हाथ फेरती हुई बोली) बच्चू! तुम इसी तरह रोज "जय नारायण" के पास पढा करो! मै उम्मेद रखती हू कि, यह प्राइमर दो महीनेमें पूरी हो जायगी! और हिन्दी तो मै तुझे बचवाया करूगी

(इस प्रकार "विश्वभरनाथ" पर प० मुरारीलाल और उनकी स्त्री "पद्मा" दोनोही अपने पुत्रके समान स्नेह करने लगे! एक डेढ महीनेके अदर "विश्वभर-

नाथ " को हिन्दी बांचना आ गया. एक दिन दुपहरके समय "पद्मा" ने विश्वभरनाथको बुलाकर अपने पास बिठाकर एक पुस्तक हिन्दीकी हाथमें दी)

पद्मा–लो ! इसमेंसे कुछ पढ कर सुनाओ !

विश्वभरनाथ–(पुस्तक हाथमें ले कर) हां लो ताईजी ! सुनो–
" संसारमें किसी मनुष्यको बिलकुल तुच्छ या शक्ति
" हीन कभी नहीं समझना चाहिये. हर एक मनुष्यमें
" इतनी शक्ति होती है कि, किसी न किसी समय या
" किसी न किसी काममें तुम्हारा मतलब उससे निकल
" सकता है, पर जो तुम ऐसे मनुष्यका एकदम तिर-
" स्कार करोगे तो वह कभी तुम्हारे काम नहीं आवे-
' गा, तुमने किसीके साथ बुराई की होगी तो उसे
" वह प्रायः भूल जायगा, पर जो तुमने उसका तिर-
" स्कार किया होगा तो वह उसे कभी नहीं भूलेगा ।"

(विश्वभरनाथ तो अंदर यह पढकर सुना रहा था मगर होनहार "विश्वभरनाथ" की सतेरेई मां "माया" गोदमें अपनी लडकी "शका" को लिये हुए उसी कमरे के बाहर आ खडी हुई, और जो कुछ "विश्वंभरनाथ" ने पढा वह सब कुछ सुना. यह सुन कर

माया–(अपने मनही मनमें) है ! इसे किसने पढाया ? और इसे डेढ दो महीनेके अंदर ही इस प्रकार तडातड पढना एकदम कैसे आ गया ? क्या ये आपसे निडर हो गया ? मालूम होता है कि, इस बाबुआनी ने ही

अपने बेटे " जयनारायण " के साथ प्राइवेट पढा कर इसे ऐसा बना दिया ! (इस प्रकार विचार करती हुई अपने कमरे में चुपचाप वापस चली गई और ऊंचेसे " विश्वभरनाथ " को) अरे बच्चन!

विश्वंभरनाथ– हा जी ! ये आया ! (पुस्तक छोडकर सामने आकर खडा हो गया) क्या है ?

माया–क्या कर रहा था ?

विश्वभरनाथ–करना क्या था ? कुछ नहीं ! खेलता था !

माया–अरे क्यों झूठ बोलता है ? खेलता था ? मुझे क्या ? जो कुछ तूं अभी वहा कर रहा था सो तेरा 'आपा' (बाप) स्वयं देख गया और सुन गया है मै तो जानती ही हूं ! देख आज तेरी कैसी चमडी उडरती है !

विश्वभरनाथ– (कुछक साहस और क्रोध पूर्वक)
.. Never mind It matters very little
(कुछ परवाह नहीं !)

माया–अरे ! गजब ! मैनेतो हिन्दी ही बाचते सुनाथा, मगर साथ में इगलिशभी ! (हाथसे अपनी तरफ खींचकर कुछक प्यार पूर्वक) सच कह, तू किससे पढता है ? और कौन पढाता है ? मै तेरे आपाको निकुल भी जिकर करूं तो मुझे तेरी ही सौगन्द है !

विश्वंभरनाथ–(हाथ छुडा कर) बस ! तुझे क्या ? तू आपाको कह कर जो कराना हो सो करा लेना !

(इतने में "ब्रह्मानंद" आ पहुंचा और "विश्वंभरनाथ" के पढने की बात को सुनकर एकदम क्रोधमें आकर उसको मारता हुआ "माया" से)

ब्रह्मानंद- देखरी! तेरी जान ले डालूंगा! अगर जब तक मैं न कहु वहां तक इसे खानेको दिया, या घरसे बाहर निकलने दिया! फिर देखूं कि, यह किससे और कैसे पढता है? (इतना कहकर पैर में पडे हुए बूट सहित "विश्वभरनाथ" की पीठ में एक लात मारी. "विश्वभरनाथ" के रानकी आवाज सुनकर)

प० मुरारीलाल-(वहां पर आकर ब्रह्मानंद से) क्यों इस बच्चेको पीटते हो?

ब्रह्मानंद-अजो! बडा ही शैतान हो गया है!

प० मुरारीलाल-शैतान बनाने की घूटी तो तुम खुद हमेशा देते हो! अफसोस कि, फिर शैतान पना करने पर पीटते हो? सच मुच मुझे मालूम होता है कि, वर्तमान आर्यसमाजके पिता "स्वामी दयानंद सरस्वती" जीने अपने दिलमें यही जाना होगा कि, मेरी पदवी को संभालने वाला "ब्रह्मानंद" हो ही गया है इसी लिये वो मर गये! क्योंकि प्रायः उनका भी यही हाल देखा अपने ही कथनको आप ही मथन कर खंडन करना! जैसे "स्वामीजी" की आदत थी कि, सरासर झूठी बातको भी सच्ची करनेके लीये एसा तर्क घड मारते कि, सच्चे को भी झूठा कर डालते! मगर

अंत में झूठ का झुठ निकले विना नहीं रहता! सो भाइ साहब! तुम उन्ही के भाइ बडे मिया अमीरअली के बबरचीकी तरह तो मत करो।

जैसे "अमीरअली" नामके एक मुसलमान बडे मांसा हारी थे. उसका "बबरची" एक दिन मास पकानेके समय एक बुगलेकी एक टाग पहलेही काटकर स्वाहा करगया(स्वय खा गया) बाकीका बनाकर मालिकके सामने खानेको ले आया. तब " अमीरअली" ने उसे देखतेही आखें तोर कहा कि क्यों बे! इसकी एक टाग क्या हुई? उस बब रचीने बडे अदबसे खडे होकर कहा कि, हजूर! इस जानवर (बुगले) की एकही टाग होती है! तब "अमीरअली" ने क्रोधमे लाल होकर कहा कि अरे! क्या किसी जानवरको एक पैरभी होता है? बबरचीने कहा कि, हजूर नास्ता कर लीजीयेगा फिर मै दिखला दूगा कि, इस जानवर (बुगले) को एकही पैर होता है! यह सुन उसका मालिक मनही मनमे झुलस कर चुप रह गया! और खाना खाये बाद " अमीरअली " ने बबरचीका हाथ पकड कर कहा कि, चल हमारे बागमें तालाबके किनारे बहुतसे बुगले है देख एक टागके है कि दो? यह सुनकर बबरची झटही साथ चल पडा और दोनों ही बागमें पहूचे, देखे तो तालाबके किनारे बहूतसे बुगले एकही टागसे कपट ध्यान लगाये खडे है यह देखतेही बबरची बोल उठा कि देखिये! देखिये! फिर आप मुझेही दोष देंगे! देख लीजीयेगा इस वक्त

इन बुगलोंको एकही टाग है फिर मुझे दोष मत देना ! तबतो "अमीरअली" को बडाही क्रोध आया और भभक उठा " क्यों बे ! आखोंमें धूल डालना है ?" यूं कहकर उसने जोरसे अपने हाथकी ताली बजाई ! तब उधर बुगलोंका भी ध्यान टूटा और अपने पेटमें लगी दूसरी टागको निकाल धीरे धीरे चलने लगे, तब वह अपने बबरचीसे बोले कि, अबे ! ले देख ! अब कै टाग है ? बबरची ने कहा कि, हजूर ! इस जानवरको एकही टाग होती है, लेकिन ताली बजानेसे दो हो जाती हे ! अगर जिस वक्त वो तश्तरी (रकाबी) आपके सामने लाकर रखी थी उस वक्त आप ताली बजाते तो शायद उसको भी दो टाग होजाती ! यह सुन वह " अमीरअली " अपनासा मुह लेकर रह गये !

अब देखो तुम ख्याल करो कि, वो बबरची अमीरको सरासर ठगता है, लेकिन कहोतो, किसी ठिकाने कुछ कसर रही ? इसी तरह " स्वामीजी " की तर्क को एकाएक सच समझ लेना बुद्धिमानोका काम नहीं है. सो मालूम होता है कि, तुमभी बाबाजीका अनुकरण करने लगे हो ! सो भाई साहब ! तुम्हारा लडका है चाहे मारो चाहे काटो हमको क्या ? मगर तुम्हारे जैसा अन्यायी सिवा एक " सरस्वतीजी " के अलावा मुझे तीसरा तो कोई नजर नहीं आया ! हां या यह आपकी औरत, जो आपको विपरीत विचार पर मदद देती है !

मुझे अफसोस इसी बातका है कि, अगर तुम लिखे पढे न होते तो आज दिन यह मकान रहनेके लिये मुफ्त ! और (९०) रुपये महीना सरकार क्या तुमको देती ? इस वक्त जो लोग तुमको " बाबूजी " कहकर बुलाते है वही लोग " ओ कुली " कहकर बुलाते और बोझ उठात उठाते तुम्हार शिरमे ताल पडजाती ! टटडी लाल हो जाती ! इसवक्त हमें इस लडकेकी बुद्धि दख कर बडाही रहम पैदा होता है कि, जिसने तुमसे चोरी छिप कर दो ढाई महीनेमे इगलिश प्राइमर पूरी करडाली और हिन्दी भी अच्छी तरह पढना आगया है ! मगर ये विचारा क्या करे ? *" तीर तकदीर अजसिमे तदवीर रदनमी गर्दद (लंबा श्वास लेकर फिर) भाई ! कुछ सोच समझकर लडके पर हाथ उठाओ, नाहक बेवकूफों की गिनतीमें न आओ ! लोग तो लडकेको न पढनेके लिये मारते हैं मगर आफरीन है जो तुम इसको पढा क्यों? इस बात पर मारते हो ! वाह भाई वाह ! !

ब्रह्मानन्द्–आप माफ कीजियेगा ! और यह नसीहत अपने पासही रहने दीजिये गा ! आपको क्या मालूम कि, यह पढ जायगा तो जरूरही सुख पायगा ! अगर पढजाने पर भी दुःख हुआ तो क्या तुम इसको सुखी कर दोगे ? क्या आप इस बातका दावा करते हो ? बस इस लिये आप इस विषयमें मुझे कुछभी मत कहिये ! मेरा

---

* तकदीरके सामने तदवीर कुछ नहीं कर सकती !

लडका है जो मेरे दिलमें आयगा सोही मैं करूंगा !

पं० मुरारीलाल- अच्छा भाई ! जो तुम्हारी मरजी !
(मनहीमें)

" सीख वाको दीजीयें, जाको सीख सुहाय । "

ऐसे ऐसे आदमी इस दुनियाके अंदर है यह मुझे आजही मालूम हुआ ! अफसोस कैसी अज्ञानता ? (मुरारीलालजीतो अपने मकान पर चलेगये. उसी दिन, विश्वंभरनाथ रातके आठ बजे की रेलमें चुपकेसे बैठकर चल दिया और सुबह लश्कर (गवालियर) जा पहुचा. इधर " ब्रह्मानंद " ने इधर उधर बहुत ढूंढा आखर इंद्रप्रस्थ अपने बापको तार दिया कि, जलदी खबर दिजीये कि " विश्वंभरनाथ " घरतो नहीं आया ? यहासे कल रातको भाग निकला है.

और स्टेशन मास्टर (पं० मुरारीलाल) से तकरार करने लगा कि तुमने ही " विश्वंभर " को कहीं भगा दिया ! (मगर मुरारीलालजी बिचारेको तो कुछभी खबर नहीं थी) बारा दिनतक " विश्वभरनाथ " का कहीं पता न लगा, इधर एक दिन " ब्रह्मानंद " एक ऐसे जालमें फँस गये कि, नोकरीसे बरखास्त होने लगे थे मगर पं० मुरारीलालजीने अपनी चालाकीसे ऐसा बचा दिया कि, नौकरीसे बरखास्त तो नहीं हुए लेकिन नव्वे (९०) मिलते थे उसके पचत्तर (७५) रह गये ! और वहासे बदल कर पुनामें जाना पडा.

अब इधर " विश्वंभरनाथ " को लश्करमें एक रोज दरबार वाडेके पासमें खडे हुए, रॉली ब्रदर्स एम. डी. पिटन् साहबकी लेडी " मिसिज स्टॉर " ने देखलिया मिसिज स्टॉरको " विश्वंभरनाथ " के भाग जानेका हाल मालूम था, क्यो कि, स्टेशनके हातेके साथ जुडवॉ ही इनका बगला था, इस लिये परस्परमें अच्छी तरह जान पहचान थी, वलकि पंडित मुरारीलाल (स्टेशन मास्तर) की स्त्रीके साथ इनका व्हेनपना था. इस लिये एकदम टमूटम् से उतर कर अचानक ही पीछे से आ- कर " विश्वभरनाथ " का हाथ पकड लिया.

मिसिस स्टॉर– तुम यहां कहा ?

विश्वंभरनाथ– (चमककर, आखमें आंसू लाकर) आपको मालूमही है कि, मै भागकर आया हूं.

मिसिस स्टॉर–ये टो मै जानटी हुं कि टुम भागकर आया है मगर टुम ये वटाओ कि, यहां किसके घर और कहां ठहरा है ? टुमारा बाबुका टो पूनामें वडली होगया है! अब टुम यह वटाओ कि मैं टुमको घर भेजू या पूना ?

(इतना कह कर वहाही खड़े खडे मिसिज् स्टारने एक तार लिखकर सईसको देकर)

वैल ! यह टारघरमें डे आओ !

(सईस भी तार लेकर गया और देकर पीछे आया. यह तार पूने " ब्रह्मानद " को दियाथा जिसमें लिखा

(इस तरह प्यार पूर्वक आश्वासन देकर चुप कराया तीन दिनके वाद ऐम. डी. पिटिन् आये और अपनी लेडीसे " विश्वभरनाथ " के भाग आने संबधी कुल हकीकत सुनी यह हकीकत सुनकर साहवको भी वडा भारी क्रोध आया मगर अपनी लेडीसे अपनी भाषामें)

पिटन् साहव–

(१) You ought not to have kept him with you because he has come against the will of his parents, but it matters very little When I shall go from here after a week, I shall take him with me to his house, but at first his parents must be informed

मि० स्टॉर–

(२) (Showing the telegraph of "Brahmanand") When he first met me, I sent a telegraph to his father at that very time and this is the answer of it

---

(१) इसको अपने पास, मा वापसे लडकर भाग आनेकी वजहसे विलकुल नहीं रखना चाहिये था! मगर खैर मैं एक हफतेके वाद जाऊंगा तव इसको साथ ले ... लेकिन इससे पहले इसके मा वापको खवर ...ाहिये !

... तार दे कर) मुझे जिस वक्त यह ...ना मैंने इसके वापको तार दियाथा जिसका

मि. स्टॉर–अच्छा टो कहो कहां जाओगे ? क्या इस टरह फिर करही जिन्डगी गुजारोगे अभी टुमारा डश सालका उमर है टुम कुछ कमाभी नहीं सकटा नाहीं किसी की नौकरी कर सकटा है इस लिये इस हालटमें टुम को इस टौर पर डर वडर फिरना डुख डाई हो परेगा। वेहटर है कि टुम अपने वापके पासही चले जाओ !

विश्वंभरनाथ–आपका फरमाना ठीक है मगर वहां रहनेसे भी जिन्दगीकी खरावी है, वहां वापके पास रहकर कौनसी मुझे शिक्षा हासिल हो जायगी ! या कोई हुनर आ जायेगा ! वस मैंने अपने दिलमें यही धारा है कि, जो होना होगा सो होगा, मगर अव वापके पासतो नहीं जाऊगा ! (इतना कह कर एका एक रो पडा) (विश्वंभरनाथके रोनेकी आवाज सुनकर अंदरसे दो मम जिनके यहां " मि स्टॉर " ठहरी हुईथी आकर उसको प्यार देने लगी मि० स्टॉरने " विश्वंभरनाथ " को हाथोंसे पकड, प्यार दे कर पुचकारते हुए उन दोनों लेडियोंसे " विश्वंर " का कुल हाल " ब्रह्मानद " के न पढाने आदिका कहा ! यह सुन वेभी अफसोस करने लगी)

मि० स्टॉर–(विश्वंभरसे) वैल मट रोओ ! टुम टीन रोज यहां ठहरो ! डेवीडयाल जमाडारके पास रोटी खाओ अपना साहव(एम डी पिटिन)आजके टीसरे रोज कालपीसे आयेगा टव उनसे वाट करके टुमको जहा ठीक लगेगा वहां भेज डिया जायेगा। टुम किसी वाटसे घवराओ मट !

(इस तरह प्यार पूर्वक आश्वासन देकर चुप कराया तीन दिनके वाद ऐम. डी. पिटिन् आये और अपनी लेडीसे " विश्वभरनाथ " के भाग आने संवधी कुल हकीकत सुनी यह हकीकत सुनकर साहवकोभी वडा भारी क्रोध आया मगर अपनी लेडीसे अपनी भाषामें)

पिटन् साह्व–

(१) You ought not to have kept him with you because he has come against the will of his parents, but it matters very little When I shall go from here after a week, I shall take him with me to his house, but at first his parents must be informed

मि० स्टॉर–

(२) (Showing the telegraph of " Brahmanand") When he first met me, I sent a telegraph to his father at that very time and this is the answer of it

---

(१) इसको अपने पास, मा वापसे लडकर भाग आनेकी वजहसे बिलकुल नहीं रखना चाहिये था! मगर खैर मैं एक हफतेके वाद जाऊगा तब इसको साथ ले जाऊगा, लेकिन इससे पहले इसके मा वापको खबर दे देना चाहिये !

(२) (ब्रह्मानदका तार दे कर) मुझे जिस वक्त यह मिला उसी वक्त मैंने इसके वापको तार दियाथा जिसका उत्तर यह है.

पिटन् साहब–

(१) (Reading the telegraph) oh? So very careless

(उसी वक्त साहबने एक पत्र " शारदाचंद्र " को लिखा जिसमें " ब्रह्मानद " की अकल अच्छी तरहसे जाहिर की और उसकी तारभी साथही खतके भेजदी और लिखदिया कि, तुम्हारा " बच्चन " हमारे पास आज कई रोजसे जाने जानेको कर रहा है, मगर कहीं खराब न होता फिरे इस लिये जबरन रखा हुआ है, अगर लिखो तो छोड़ देवे, फिर हम जिम्मेवार नहीं कि, कहां गया ? बाद अजां पत्र तुम्हारा अगर न आया तो आजके आठवें रोज मै आने वाला हूं तब उसको अपने साथ लेता आऊंगा !)

पिटन् साहबके इस पत्रके पहुंचते ही एक दम "शारदाचंद्र" को " ब्रह्मानंद " पर बडाभारी क्रोध उत्पन्न हुआ. अपने लडके " जयतिसहाय " को बुलाकर)

शारदाचद्र–जयंती ! अभी जा जल्दी और एक तार लश्कर " एम. डी पिटिन् साहब " को दे कि, मैं आता हु, और आजही रातकी ट्रेनमें तूं लश्कर चला जा और " विश्वभर " को ले आ ! (इतना कहकर जो कुछ साहबने लिखा था वह सब पढ़ सुनाया !

---

(१) (तार पढकर) हैं ! इतनी ला पर्वाही !

यह बात " विश्वभरनाथ " के सगे मामा (पंडित युगलकिशोर वकील) को मालूम हुई. वोभी "शारदा-चन्द्र " से आकर.

युगलकिशोर–देखो इसी लिये हम इस लडकेको नही देते थे ! अजी हजरत ! वो हजारमें एकही ऐसी औरत निकले तो निकले जो अपनी सौकनके बेटेको अपना समझे ! अफसोस है कि, उस छोटेसे बच्चेकी जान पर अभीसे इस तरहका सदमा ! मैं तो जानता नहीं हू कि, कालपीके स्टेशन मास्टर पंडित मुरारीलालजी कौन हैं? मगर उन्होंने " विश्वभरनाथ " की कुल व्यवस्था लिख भेजी थी कि, आपका भानजा अपनी सतेरई मा द्वारा कैसे कैसे दुःख पा रहा है वो मै लिख नहीं सकता !

शारदाचंद्र–भाई ! मै नहीं जानता था कि " ब्रह्मानंद " ऐसा नालायक निकलेगा ! मगर खैर अबभी कुछ नही बिगडा ! आज रातकी ट्रेनमें जाकर " विश्वभर " को ले आते है !

युगलकिशोर–कौन जायगा ?

शारदाचद्र–जयतीसहायको ही भेजुंगा !

युगलकिशोर–कहोतो " धैर्यपाल " (अपने लडके) को भी साथ भेज दू ? आज तीन रोजसे उसका साहब पंजाब गया है इस लिये दफतर बंद है.

शारदाचंद्र–अच्छी बात है दोनों ही जावे तो !

इतना जानते है कि, १० बजे स्कूल जाते हैं और पाच बजे घर आते हैं ! भला वो इनकी क्या-संभाल लेंगे आगे तुमारी मरजी !

ब्रह्मानंद–भाई ! आपका कहना ठीक है, मैं इसे ले जाताहूं ! मगर यहासे ज्यादाही दुःख रहेगा ! और अब इसका मेरे पास ठहरना भी मुशकिल है ! बेहतर है कि आप अपने पास रखलो ! मै दश रुपये मासिक भेजता रहूंगा ! मगर मैं इतना तो जरूरही कहुगा कि, अगर इसको पढाओगे तो दुःख पाओगे ! हा दुकानका काम काज सिखाओ तो बेशक ! आगे आपकी मरजी !

जयंतीसहाय–अच्छा तो तुमारी मरजी ! छोड जाओ ! मैं तो अपने लडके और इसमें कुछभी फर्क नहीं समझता ! लेकिन घरमें औरतोका काम ऐसाही वैसा है ! जो ब-नेगा सो देखा जायेगा, तुम तो अपनी नौकरी पर पहुचो ! लेकिन "श्रीनाथ" को तो कुछ पढाना है या उसकोभी इसकी तरह रखनेका विचार है ?

ब्रह्मानद–भाई साहब ! आपने पढनेमें क्या सार समझा है यह मुझे नहीं मालूम पड़ता ! आप ख्यालतो कीजीयेगा कि, अपने पिता "शारदाचंद्रजी" कुछ भी नहीं पढे थे तोभी सारी उमर सुखी और स्वतत्र रहे ! हमारे तुमारेसे पैसाभी अच्छा पैदा किया ! आज उन्हींकी बदौलत इन तीनो दुकानोंका काम ऐसा दृढ़ जम गया है कि, उसका पाया हिले ऐसा नहीं मालूम देता !

अगरच आप दोनों भाई जुदे २ हो गये हो, तोभी आज दिन उनकी महेरबानीसे सुखी हो ! वरना ये दुकानेभी न चलती ! अगर मेरी तरहसे नौकरी पर होते तो दिखा देता कि, जो इज्जत आपकी इस वक्त है फिर कितनी रहती ! मैं क्या करू ? लाचार हूं कि, मैंने दुकानका काम कुछ नहीं सीखा ! वरना इस मुसरी नौकरीको कभीका तिलाजली देदेता ! अगर मैं आजही नौकरी छोड दुकान पर बैठु तो मुझे कोई रोकतो नहीं सकता मगर पढ जानेसे मेरे अंदर जंटल मैनीकी टैसका ऐसा समावेश हो गया है कि, मुझे कोट पतलून पहन दुकान पर बैठ सलमा सीतारा ले " कारचोवी " का काम करते वडीभारी शरम आती है ! यह मैं अच्छी तरहसे समझता भी हू कि, जो सुख दुकानदारीमें है वह नौकरीमें (चाहे कैसे बडे ओहदेकी हो) नहीं है ! मै यह सामने देखता हू कि, जो लोग बिलकुलही पढे लिखे नहीं, इस वक्त दुकानदारीके सववसे लक्षाधिपति और करोडाधिपति वने नजर आते हैं ! वीसीयोंही आदमी उनकी टहल करते है और गादी तकीया लगाय बैठे रहते हैं ! हर किसी पर हुकम चलाते है ! और ' हमारे सिरपर कोई अपसर है ' इस बातकी भी उनको चिन्ता नहीं कि, ' नौकरीका वक्त होगया जल्दी चलो ऐसा न हो कि, देर हो जाये ! ' ज्यादा तो क्या ! जो सातसौ सातसौ तनखाह पाते है और जजसाहव कहाते है उनकोभी यह चिन्ता वनी रहती है तो जो, उनके

हाथके नीचे छोटी छोटी नौकरी वाले है उनकी फिकर और चिन्ताका तो कहना ही क्या ? और दुकानदार चाहे कैसाही हो मगर उसको हरवक्त यह कहनेका मौका रहता है कि-"चल वे ! मैं क्या किसीके वापका नौकर हू" इस लिये वेहतर है कि इसको मत पढाओ ! अपनी दुकानके काम काज सिखानेकाही ध्यान रखो ! अगर यह आपके पास दो चार महीनेमें रहनेसे दुकानका काम सीख जायगा तो स्वयंही इसका ध्यान पढनेसे हट जायगा ! आप दो चार महीने पास रख कर देखें ! अगर आपकी मरजी मुताविक चले तो पास रखना वरना मेरे पास भेज देना.

जयंतीसहाय-भाई ! क्या कहना है तेरी अकलको ! मगर खैर मुझे क्या ? जैसे वनेगा वैसे मै इसे निवाहुगा ! लेकिन तेरी स्त्री "माया" इसकी दुर्दशा करे और नाहक दुःख देवे ऐसे कामसे तो इसका यहां ही रहना ठीक है !

ब्रह्मानन्द-(कुल तयारी कर वग्घीमें ट्रंक और विस्तरा रख कर विश्वंभरसे) बच्चन ! देख तायाजीके कहनेमें चलना, दुकान परहीं वैठना और अपना काम सीखना (इतना कह कर सिरपर प्यार दे घरसे नीचे उतरा और पीछेही पीछे "माया" भी "शका" को गोदमें लिये हुए "श्रीनाथ" को हाथसे पकडे हुए सबसे (ननद, जिठानियां और पीतस आदिसे) प्रणाम क-

रती हुई नीचे उतरी और दरवाजे पर खडे हुए " विश्वभर " को देख एक हाथसे अपनी तर्फ खींच, प्यार दे, हृदयसे लगाकर वडी मीठी आवाजसे बोली कि,) बाबा ! अच्छी तरह रहना और अपनी राजी खुशीका समाचार देते रहना ! क्या करू ? तुझे यहा छोड कर जानेमें मुझे वडाही दुःख होता है मगर लाचार हू तेरे आपाजीकी आदतसे ! लेकिन खैर मैं तुझे बुला लूगी किसी वातसे घवराना मत ! अगर किसी चीजकी जरूरत पड़े तो अपने मामुके अलावा किसीको मत कहना !

विश्वभरनाथ–(अपनी मांके हाथको अपने सिरपरसे हटा कर) मा ! मुझे तेरे हाथमेंसे वस अचारी मिरचकी खशबु अभीतकभी आरही है ! जिसके तीन बीज कालपीके डॉक्टरने मेरी आखमेंसे साबित ही निकाले थे और जिसकी वजहसे पांच दिन तक मेरी आंख सूझी रही थी ! अगर यह झूठ है तो वता मेरी आखमेंसे आसुओंकी धार क्यों चल पड़ी ? वाकी रहा " राजी खुशीका समाचार देना" सो यह तो वता कि तूने या वावूने किसी दिन यह सिखायाथा ? कि मां वापको इस प्रकार पत्र लिखना ! क्या मुझे कोई भूत वस करके दे चली है ? कि जिसके द्वारा तुझे अपनी राजी खुशीका समाचार भेजता रहु ! बेशक ! मुझे यहा छोड जानेमें तुझे वडाही दुःख हो रहा है ! जिसकी गवाही मेरी आखोंमेंसे निकलती हुई पानीकी धारा दे रही है ! और तूने जो यह कहा कि " लाचार

हुं तेरे आपाजाकी आदतसे ” तो इसमेंतो शक नहीं ! बेशक ! तुम मेरे आपाजीकी आदतसे लाचार हो और आगेको लाचार ही रहोगी ! ! “ मगर खैर मै तुझे बुला लुंगी ” सो परमात्मा तुम्हे दुःखमें दुःख न दे ! क्यों कि, एक तो तुम मेरे बापकी आदतसे लाचार हो ! और फिर मेरीभी आदतसे लाचार होना पडेगा ! इस लिये परमात्मा वो दिन नाही दिखावे ! जिस दिन तुम को मुझे बुलानेका काम पडे ! रहा “ किसी बातसे घबडाना मत ” सो अब घबडाहटको तो तुमही लेचली हो ! फिर घबडाऊंगा किससे ? और यह जो तूने कहा कि “ अगर किसी चीजकी जरूरत पडे तो अपने मामुंके अलावा और किसीको मत कहना ” सो मरतो जाऊंगा मगर मामुसे तो एक दमड़ीभी मांगने न जाऊंगा ! भीख मांग खाऊंगा, लेकिन तुमसेभी एक पाई न मगाऊगा ! बस मैंभी आजसे अब अपनी किसमत पर ही खेल खाऊंगा ! अब क्यों नाहक मेरे सिरपर हाथ फेर तकलीफ उठाती हो ? जाओ देर हो जायगी ट्रेनका वक्त आया, बग्घी वाला जलदी कर रहा है !

(“ माया ” विश्वभर ” के यह वचन सुन कर मन में बडी दुःखी हुई ! मगर जलदीके लिये कुछ बोल न सकी ! सब बग्घीमें बैठ स्टेशन पर पहुंचे और टिकट ले रेलमें बैठ विदा हो गये.इधर “ ब्रह्मानन्द ” के चले जाने पर “विश्वंभरनाथ ” अपने मित्र “ ज्योतिश्चद्र ”

के मकानपर पहुचा और उससे कुल हकीकत कह सुनाई और " ज्योतिश्चंद्र " ने वह कुल हकीकत अपने मां बापसे कही.)

रायसाहब-(ज्योतिश्चंद्रका पिता विश्वंभरसे) देखो बेटा ! तुम किसी बातसेभी तकलीफ मत पाना, जैसा मन चाहे वैसा पहनो और खाओ, तुम " ज्योतिश्चंद्र " के साथ साथ पढो, अगर इससेभी आगे पढनेकी तुम्हारी मनशा होगी तो मैं तुमको पूरी मदद दूगा ! बस ज्यादा क्या कहु ? तुम मुझे और " ज्योतिश्चंद्र " की माको अपने माता पितासे अधिक समझो. मेरे लिये जैसा " ज्योतिश्चंद्र वैसाही तूं, बस ! किसी बातसेभी फरक न समझना (इतना कहकर दरवाजे परसे एक चपड़ासी को बुलाकर कहा कि) तूं कोठी पर जा और " अल-ताफहुसैन " दरजीको साथ लेकर आ ! (यह सुन चपरासी दरजीको बुला लाया) दरजीके आनेपर " रायसाहब " ने जिन जिन कपडोंके शूट " ज्योति-श्चंद्र " के थे उन्हीं उन्हीं कपडोके आठ शूट एक दम " विश्वंभरनाथ " के लिये बनानेको दे दिये, और दरजीसे कहा कि, सब काम छोडकर पहले यह तयार करदो. दरजी भी बहुत अच्छा ! कहकर चला गया.

विश्वभरनाथ-(रायसाहबसे) यह आपने जो मुझपर मेह-रबानी की सो तो ठीक, मगर इन कपडोंको पहन कर

जिस वक्त मैं घर गया उस वक्त मेरे तायाजी वगैरह क्या अपनी छाती माथा पीटकर हाय किये विना रहेंगे?

रायसाहब–बच्चन! अब तुझे उनसे डरे ठीक न होगा! अगर तेरेसे पूछे तो तूंने "ज्योतिश्चंद्र" का नाम ले देना और कहना कि मैं क्या करू? मैं उसे बहुत हटाता हूं मगर वो कहता है कि, मैं अपने मित्रके लिये जो चाहे सो करुगा! अगर आपको इसमें ठीक नहीं लगता तो आप जाकर "ज्योतिश्चंद्र" के बापको कहदीजिएगा. जिस वक्त वो मेरे पास आयेंगे तब मैं आपही समझ लूंगा! और मेरा तो विचार है कि इस आते ऐतवारके रोज जो बड़े बडे रईस कमेटी घरमें इकट्ठे होते हैं उनके सामने ही तेरे संबंधमें "ब्रह्मानद" की हालतका फोटो खैंच कर बतलाऊगा; जोकि वह लोग जाने कि पढे हुओंकाभी यह हाल होता है!

विश्वंभरनाथ– ना साहब! ऐसा मत करना! क्यों कि उसमें तो पंडित सुन्दरसहाय जज्ज भी मेम्बर हैं और वो मेरे फूफाजी है अगर सुनेंगे तो मुझे ही बुरा भला कहें गे!

रायसाहब–हां! बस बस–! अब कोई डर नहीं! मेरा और उनका रोजही अपने क्लबमें आना जाना होता है तूं ने देखा ही है कि वहां शामको रोज ही आकर वो टैनिस खेलते हैं. अब कुछ हरकत नहीं. वह तेरे फूफा-

जी हैं ! ओ-ठीक -! (बस इतनी बातचीत होते ही दश बज गये, सबने रोटी खाई, स्कूलका वक्त हो जाने पर-राय साहबने जान बूझके ही " ज्योतिश्चंद्र " से तो कहा कि विक्टोरिया बागमें होकर सीधा स्कूलको चला जा, और उसके (ज्योतिश्चद्रके) लिये जो दो घोड़की बागनेड गाडी स्कूल ले जानेको बाहर आकर खडी थी उसकें लिये " विश्वंभर " से कहा कि) " बच्चन ! इस बग्घीमें बैठ कर दरीबेमें अपने तायाजीकी दुकानोंके सामनेसे होकर फव्वारेके रस्ते स्कूलको जाओ ! तेरी किताबें कहा है ? घर या दुकान पर ?

विश्वभरनाथ-मैंने आज तक जोडीकी बाग (लगाम) हाथमें भी नहीं ली ! एक होता तो लेभी जाता ! और फिर दरीबेमे ! बाजार-तग है, आती जाती बग्घिओंसे सभालना बडा मुशकिल है ! ना साहब मैं तो पैदलही चला जाऊंगा। मेरी किताबें दुकान परही हैं.

रायसाह्ब-(पीठपर थापी देकर) अरे वाहरे डरू ! तू जातो सही बैठ बग्घीमें ! मैं सहीसों को समझा देता हूं. तेरेसे छोटे छोटे भी लडके कैसी भीडमेंसे अपनी असली चालमें वे धडक बग्घिया निकाल ले जाते हैं ! तो तूं धीरे धीरे सिर्फ बाग पकडे हुए न ले जा सकेगा ? (ज्योतिश्चंद्र तो अपना बस्ता उसी बग्घीमें रखकर पैदल ही चलागया और राय साहबके इतना कहने पर " विश्वभर " बग्घीमें बैठ गया और जोडीकी बागडोर

हाथमें लेली ! मगर कभी ऐसा काम न करनेसे हाथ धूजने लगे ! रायसाहबने सहीसोंको अच्छी तरह समझा दिया और कहदिया कि तुम घोडोंके बराबर रहना. " विश्वंभर " बग्घीको लेकर दरीबमें अपनी दुकानके सामने पहुंच कर बग्घी खडी करके नीचे उतरा और दुकानके अंदर जाकर अपने पढ़नेकी कितावें लेकर अपने ताया (जयंतीसहायसे) " मै स्कूल जाता हूं" इतना कहकर फिर बग्घीमें आ बैठा और बाग पकडकर चल दिया ! " विश्वंभरनाथ " की यह हालत देखकर, क्या ताया, और क्या काका, और क्या चचेरा भाई सबके सबही विचारमें पडगये कि " है ! यह विश्वंभर ! " श्यामके वक्त फिर " विश्वंभर " स्कूलसे छुट्टी हुए बाद उसी जोडीमें " ज्योतिश्चंद्र " के साथ दरीबेमें पहुंचा और बग्घीसे उतर कर दुकानपर बैठ गया और " ज्योतिश्चंद्र " अपने घर चला गया.

जयंतीसहाय-(विश्वभरसे) अरे बच्चन ! यह तेरे लिये अच्छा नहीं ! कि तू एक दम इस तरह उन रईसोंके लडकोंके साथ मिल, अपनी बुनियादसे बाहर होकर अपने भाई विरादरोंको उगली करनेका वक्त देवे ! आज तीसराही दिन " ब्रह्मानंद " को गये हुए हुआ है कि, तूं कुछ और का औरही नजर आता है ! अरे ! ख्याल तो कर कि, वो जातके खत्री और हम ब्राह्मण ! उनके साथ इस प्रकारका खान पान कैसा ?

मुझे " मदन " " दीप " और " मुकुट " ने आ-कर सुनाया है कि " ज्योतिश्चंद्र " के लिये घरसे रोज दो बजे उनका मिस्सर टिफन (सेव सतरा वगैरह फ्रूट और दाल सेव व मिठाई वगैरह खानेको) लाता है तो " ज्योतिश्चद्र " उस वक्त " विश्वंभर " को बुला ले जाता है और दोनों ही मिलकर खाते हे वच्चन ! जरा सोचनेकी बात है कि, वो यह वर्त्ताव तेरे साथ क्या सारी उमर कर सकेगा ? क्या वह अपने बापकी मिल-कतमेंसे तेरेको हिस्सा बांट कर देदेवेगा ? आज तूने कई दिनसे खरचनेको पैसेभी नहीं मांगे ! बेटा ! " ब्रह्मानद " एक आना रोज देनेके लिये मुझे कह गया है, सो सुबह स्कूल जाते हुए (वह तो स्कूल भे-जनेको मना कर गया है मगर खैर) ले जाया कर, और रोटीभी घर खाया कर ! मैने सुना है कि तू कलसे घर रोटी खानेभी नहीं गया सो ठीक नहीं ! मेरा इतना ही कहना काफी होगा ! (हाथमें एक दुअन्नी देकर) जा उठ और घर जा ! रोटी खा !

विश्वंभरनाथ—बस तायाजी साहब ! खतम है आपको मेरे लिये इस नसीहतसे ! मैं वहा ही रहूंगा जहा मेरा जी चाहेगा ! मै वही करूंगा जो मेरे जीमें आयगा ! मुझे आपसे खर्च लेनेकी जिस दिन जरूर पडेगी तो मांग लूंगा ! मैं जिसके साथ रहता हू या जिनके यहा रहता हू शहरमें वह विरलाही होगा जो उन्हें न जानता हो !

आप क्या ? और आपके भाई क्या ? सबको ही उनकी खुशामत करते देखता हू ! हां ! अगर मैने किसी चोर या ज्वारीके साथ दोस्ती की हो तो कहो ! मुझे इस वातका रोना आता है कि, आज मुझे दशवां साल पूरा होने लगा मगर मै कुछ नही पढा ! सचतो यह है कि, थोडेही अरसेमें मुझे " मदन " के बराबर होते देख आपको इर्षा हो रही है ! तायाजी ! आप खामोश होकर बैठियेगा ! न मुझे आपकी परवाह है और नाही वापकी है ! यहभी सिर्फ आपका मुझपर प्रेम है इस लिये दुकानपर आता हूं कहो तो आगेको यहाभी न आया करू !

(" विश्वंभर " की इस तरहकी वातोंको " जयंतीसहाय " नीची गर्दन डाले सुनते रहे, मगर मूसे कुछ नही बोले ! बोल कर बनाते भी क्या ? खैर एक घंटेके बाद उधर " रायसाहब " ने उसी वागनेड गाडीमें घोडोंकी दूसरी जोडी जुडवाकर कोचवानसे कहा कि, जाओ " शारदाचद्र " की दुकानपर बग्घी ले जाओ और यह लो चिट्ठी वहा पर " विश्वभरनाथ " होगा उसको देदेनी. " रायसाहब " के हुकमको सुनतेही साईसनेभी गाडी लेकर " शारदाचंद्र " की दुकान पर आके चिट्ठी " विश्वंभरनाथ " को दी. " विश्वभर " चिट्टीको वाचतेही दुकानसे उठकर वग्घीमें बैठ जोडीकी वाग मोड चल दिया ! थोडीही देरमें " रायसाहव " की

कोठी पर आ पहुंचा. कुल हकीकत उनसे कह सुनाई जिसको सुनकर)

रायसाहब–भाई ! एकदम उनसे तडाक फडाक करना ठीक नहीं ! मगर खैर जो हुआ सो हुआ !, रोटी खाई कि नहीं ?

विश्वंभर–नहीं ! मैं घर गया नहीं ! (पासमें खडी हुई ज्योतिश्चद्रकी मा)

चद्रप्रभा–(विश्वभरसे) अच्छा तो चल अभी "ज्योतिश" खाही रहा है (यह सुन " विश्वभर " उठा और हाथ पैर धो चौकेमें " ज्योतिश्चद्र " के पास जा बैठा. मिसरानीने थालमें खानेको परोस कर दिया, दोनोंही आनदसे खाने लगे. इतनेमें " मैन्युंअलपाल " जो रोज " ज्योतिश्चद्र " को पढाने आया करते थे, आ पहुचे. आप " क्रिश्चियन " थे, हाईस्कूलमें डेढसौ (१५०) रुपये महीने पर सैकिन मास्टर थे, इनको "रायसाहब" " ज्योतिश्चद्र " को शामको सात बजेसे नव बजे तक प्राईवेट पढनेके लिये पैंतीस रुपये माहवारी देते थे. मास्टर साहबके भी दो लडके " ज्वेनपाल " और " ईशपाल " साथही आया करते थे क्यों कि, ये ज्योतिश्चद्र " के हम जमाती थे.)

रायसाहब–(मास्टरसे) मॉस्टर साहब ! " विश्वभरनाथ" इन तीनोंके साथ पढता तो है, मगर अब आप इसपर

खडे थे आ गए उनको " गुरु मुखसिंह " न चने बांटने वाले (वंशगोपाल) का हाथ पकड़ा दिया ! और कहा कि, यह सडकके बीचमें खडे होकर चने बांटता था (बग्घीमें जाते हुए विश्वंभरकी तर्फ उंगली करके) इन्होंने बहुत पुकारा, सहीसोंने बडी आवाज दी, मगर यह न हटा, और इसने कंगलोंको जान बुझ कर घोडोकी तर्फ धका दिया. गनीमत समझो कि बग्घी-का पहिया आगे नही बढा वरना इन तीनोंही कंगलोंका काम हो गया था ! उस वक्त बाजारके सब लोगोंनेभी इसी तरहसे कहा ! यह सुन " वंशगोपाल " का हाथ पकडकर सिपाहियोंने कहा कि-लालाजी चलो सीधे कोतवालीमें, उन तीनो कंगलोंको भी साथ ले लिया. सब कोतवाली को चल पडे, उनमेंसे एक जो बुढिया थी, उसके पैरकी एडी पर घोडेकी टाप पडनेसे कुछ चौट आई थी, सो वह चलते हुये बहुतही चिल्लाती थी ! सामनेसे " डाक्टर हेमचन्द्र " आ रहे थे, उन्होंने पूछा कि, यह क्या मामला है ? एक सिपाईने कहा कि, ये तीनों " रायसाहबकी जोडी (बग्घी) के नीचे आगये ! यह सुन उन्होंने कोतवाली जानेसे रोका, कंगलोंको पांच पांच रुपये और उस बुढियाको दश रुपये देकर लौटा दिया और अपने दवाखानेमें ले जाकर उस बुढि-याके पैरको धोकर दवाई लगा दी, और सिपाईयोंके हाथसे पंडितजी (विश्वभरके काका वंशगोपाल) कोभी छुडवा दिया ! यह लीला देख पंडितजी मनही मनमें

पछताते और हाथ मसलते अपनी दुकान पर आ बैठे ! सच कहते है कि, जो दूसरेका बुरा चाहता है वह अपनाही बुरा कर बैठता है " जो खाडा खोदे सोही पडे ! "

यह कार्रवाई जब " रायसाहब " को मालूम हुई तो उन्होंने उसी वक्त एक आदमीके हाथ बीस रुपये डाक्टर हेमचन्द्रको भेज दिये ! और एक पत्र लिख भेजा कि " आपने बडी मेहरबानी की ! मै आपका ऐसानमंद हू ! " अगले रोज खुद मिलकर कुल कार्रवाई कह सुनाई कि यह " विश्वभर " के लिये उसके काकाने जानकर की थी ! तब उन्होंने कहा कि, अब " विश्वंभर " को होशियार कर देना ! क्यों कि जिनका उसके लिये ऐसा बुरा ख्याल हो रहा है वो कभी न कभी अपना दाव खेले बिना न रहें गे !

इधर " विश्वभर " के दिलमें उस वक्तसे कुछ ऐसा दहल बैठ गया कि, खुद बागडोर पकडकर बग्घीमें बैठनेका कभी इरादा नहीं होता था, लेकिन " रायसाहब " ने उसके इस बुजदिल ख्यालको निकाल कर उसको इतना निडर बना दिया कि भरे बाजारमेंसेभी निडर बग्घी भगानेका उसमें हौंसला खुल गया ! घोडेपर चढनाभी अच्छी तरहसे जान गया, एक दिनका जिकर है कि " विश्वंभर " घोडे परसे गिर पडा,

हाथकी कुहनी उतर गई और सारा वदन छिल गया ! " रायसाहब " ने उसी वक्त डाक्टर हेमचन्द्रको बुला कर दिखलाया, उन्होंने कहा कि, घबडानेकी बात नही है, यह दो हफतेमें ठीक हो जायगा, इस तरह कह कर हाथकी हड्डी चढ़ाकर बांध दी. इस दशामें "विश्वंभर" का स्कूल जाना कुछ दिन के लिये बंद हो गया ! पांच सात दिन तक " विश्वंभर " को " मदन, दीप, किशोरी " आदिने स्कूलमे न आते देखकर अपने बापको जाकर कहा कि, कई दिनसे " ज्योतिश्चन्द्र " तो स्कूलमें आता है, मगर "विश्वभर" नही आता ! यह सुन " जयंतीसहाय " कहने लगे कि, मैने भी कई दिनसे उसको दुकानके आगेसे निकलते नहीं देखा ! न मालूम क्या कारण ?

अगले रोज जयंतिसहाय " ने रायसाहब " के यहा जाके ड्योढी पर पूछा " विश्वंभर " कहा है ?

दरवाजे पर बैठे हुए एक चपडासीने कहा कि, अंदर रही है ! यह सुन " जयतीसहाय " ऊपर आये कि, सामनेही कमरेमें पलग पर " विश्वंभर " को लैटे हुए देख, पासही एक कुरसी पर बैठ गये ! इतनेहीमें " डाक्टर हेमचन्द्र " भी अपने आनेके नियमित समय पर आये, और हाथका पाटा खोलकर दवाई लगाई और " जयतीसहाय " को उन्होंने सब हाल मालूम

कर दिया, मगर " विश्वभर " कुछ नहीं बोला ! थोडी देर ठहर " जयंतिसहाय " उठकर चले गये !

इधर " विश्वंभर " के इम्तिहानमें सिर्फ दो महिने रह गये थे, अबकी बार भी इसने डबल परमोशन देनेका विचार कर रखा था, यद्यपि पास होनेका यकीन तो नहीं था तोभी डबल परमोशन देनेका नाम लिखाही दिया, राजी हो जाने पर स्कूलमें जाने लगा, मेहनत करके " ज्वैनपाल " "ज्योतिश्चद्र" के साथही इम्तिहानमें बैठ गया. आखिर तीनोंहीं पास हो गये ! (चौथी और पाचवी क्लासमें पास होकर छठीमें दाखिल हुए.) इम्तिहानमें पास होनेके बाद " रायसाहब " ने "ज्योतिश्चन्द्र " और " विश्वभर " को कहा कि, तुम एक महीनेके लिये मेरठ जा आओ ! " रायसाहब " के इस हुकमको मजूर करके, हवा फेर करनेके लिये " ज्योतिश्चद्र " और " विश्वभर " दोनोही मेरठ को गये वहापर हाईस्कूलके हैड मास्टर, कालपीके रहने वाले बाबू "चद्रशेखर" थे. उन्होंने "विश्वंभर" को देखकर उसकी कुल पिछली स्थिति और मा बापका बर्ताव सबकुछ किसी दूसरे आदमीसे सुना और इन्द्रप्रस्थ जाकर "रायसाहब" से कुल बात चीत पूछी, मगर इस तहकीकातका सबब उन्होंने किसीसे नहीं कहा ! फिर जब मेरठ आये तो एक दिन " विश्वभर " फिरनेके लिये बाहर जाता था उसको रास्तेमें रोक कर.

चंद्रशेखर–क्या तुम्हारा नाम "विश्वंभर नाथ" है ?

विश्वंभर–जी हां !

चंद्रशेखर–मैंने सुना है कि, तुम ढाई सालमेंही छट्ठी जमातमें आये हो !

विश्वभर–मै क्या ? चौदा लडकोंने डवल परमोशन दिया है ! इसमें क्या तअज्जुबकी वात हुई ?

चंद्रशेखर–क्या तुम एक दफा पांच मिनटके लिये मेरे मकान पर चल सकते हो ?

विश्वंभर–क्या काम है ?

चंद्रशेखर–चलने पर तुमको आपही मालूम हो जायेगा !

विश्वंभर–(सहीस से) ठहर तू यहां ! मै आता हू ! (मास्टरसे) चलिये साहव ! (चलते हुए) आपका इसमुशरीफ ?

चद्रशेखर– (मुसकराकर) मेरा नाम "चंद्रशेखर" है. (दोनों जने मकानके दरवाजे पर पहुचे, मास्टरने "विश्वंभर" को वाहर खडा कर दिया, आप अदर जाकर अपनी मा और स्त्रीको साथ लेकर वाहर आये.

चद्रशेखर– (अपनी मा–गगासे "विश्वभर" की तर्फ इसारा करके) मा ! यह वही है जिसके लिये मैंने तुझसे कहा था !

गगा– (विश्वभरसे) वेटा आओ आगे और इस कुरसी पर वैठो !

विश्वंभर– जी वहुत अच्छा ! (कहकर वैठ गया. दूसरी कुरसी पर मास्टरजी और उनके सामनेही नीचे उनकी मा और स्त्री भी वैठ गयीं.)

गगा– वेटा ! तुम्हारा नाम क्या है ?

विश्वभर– मेरा नाम " विश्वभर " है !

गगा– अगर तुम्हारा वाप तुमको छे सात वर्षकी उमरसे ही पढना शुरू कराता तो अव तक कितना पढ़जाते ?

विश्वभर– (यह सुन मनही मनमें हैं ! इनको मेरे घरका पता कैसे ?) प्रगट– इस पूछनेसे आपका क्या मतलव है ?

गगा– तुमको अगर " रायसाहव " अपने यहासे जवाव दे देवें तो तुम क्या करो ?

विश्वभर–आपको, मुझसे इन वातोंके पूछनेका मतलव क्या है ? सो कहो !

गगा– भला, तुम्हारा " दादा " (शारदाचद्र) जो तुम्हारे नाम पर छ हजार रुपया वंकमें जमा करा गया है, अगर तुम्हारा " ताया " या " काका " न देवें तो तुम क्या करोगे ?

विश्वंभर– (झुंझलाकर) आपको क्या ? (उठ कर चल पडा कि, मास्टरजीने हाथ पकड कर फिर बिठा लिया.)

गंगा– अरे बाबा ! हम तुम्हें मारते थोडेही हैं अच्छा यही कहो कि, तुम्हारा " बाप " तुम्हारे लिये जो दश रुपये महीना भेजता है वह तुमको तुम्हारा ताया देता है, या कि, नहीं ?

विश्वंभर– इससे आपको क्या ?

गंगा– बेटा ! तूं तो बाकाही बाका बोलता है ! (अपने लडके चंद्रशेखरसे) लडका तो ठीक है बाकी रही इसकी स्थिति सो तू जान !

चंद्रशेखर– अरि ! उस बातकी कोई चिंता नहीं, मै कुल बंदोबस्त " ब्रह्मानंद " से मिल कर करलूगा ! मुझे उम्मेद है कि " रायसाहब " अब इसको हाथसे नहीं छोडेंगे ! अगर छोडेंगेभी तो अब पूरा लिखा पढाकरही छोडेंगे ! मेरेको उम्मेद नहीं कि, " ज्योतिश्चंद्र " इसको अपनेसे जुदा होने देवे ! " रायसाहब " मुझसे साफ कहचुके है कि, मै अपने जीते जी अपनी जबानसे इस को अपने घरसे चले जानेके लिये कभीभी नही कहूंगा! और आठ नौ सालकी देर है कि, यह स्वय ही बालिग हो जावेगा वरना हम बैठे ही है !

गगा– अच्छा तो एक मिठाईकी टोकरी लाओ, खाली हाथ भेजना मुनासिब नहीं !

(यह सुन मास्टरने नौकरको भेजा वह थोडीही देरमें मिठाईकी टोकरी ले आया. मास्टरकी मा ने उठकर " विश्वभर " के सिरपर प्यार दिया, हाथमें टोकरी और दो रुपये देकर बोली कि, लो बेटा ! अब जाओ.

विश्वभर– (टोकरी और रुपये जमीन पर रखके) आप न मालूम कैसे हैं ? मैं आपसे पूछता हूं कि, आप मेरे कौन हो ? और मुझे कैसे जानते हो ? और यह टोकरी किस बातकी देते हो ? (इतना कहतेही एक दम हाथ छुडा कर चला, सडकपर पहुंच बग्गीमें बैठ कर "रायसाहब" की मीलमें जा पहुचा और " ज्योतिश्चद्र " को सब हकीकत कह सुनाई !

थोडी ही देरके बाद " चद्रशेखर " का भेजा हुआ एक कहार टोकरी लिये हुए वहांही आ पहुचा ! " ज्योतिश्चद्र " के पूछनेसे उसने कहा कि मास्टर जीका विचार अभीतक क्या आपको मालुम नहीं हुआ ? अजी वाहजी वाह ! " मास्टरजी " तो इनके लिये इन्द्रप्रस्थभी जा आये ! इनका कुल हालभी पूछ आये है ! अबतो उन्होंने सिर्फ अपनी मा को और स्त्रीको, इन्हें दिखलाना था इस लिये इनको घर बुलाकर ले गये थे ! उनका इरादा है कि, अपनी लडकीकी मगनी

इनके साथ करदेवें ! ये घर आये खाली हाथ न जावें इस लिये यह टौकरी इनको देते थे, इन्होंने नहीं ली! अब दी हुई टोकरी घर रखनी ठीक न समझ कर मुझे यहां भेजा है! आपका जो हुकम हो सो जाकर कह दूं!

ज्योतिश्चंद्र– (अपने मीलके मेनेजर " पंडित गिरधारी लाल " से) पंडितजी ! हमतो जानते नहीं कि, वह " मास्टर " कौन है ? और हम इस बातसे पूरे वाकिफ भी नहीं है ! कभी ऐसा न हो कि, पीछेसे " रायसाहब " हमें खफा हों ! इस लिये कहो, क्या करना चाहिये ? हमतो आजके चौथे दिन " इंद्रप्रस्थ " जायें गे !

पं० गिरधारीलाल–ओ ! मै " चन्द्रशेखर " हैडमास्टरको अच्छी तरह जानता हूं, टाकरी लेलो! इसमें तुमको कुछ नुकसान नहीं !

ज्योतिश्चंद्र–तो अच्छा ! आपही ले लीजिये ! (यह सुन पंडित " गिरधारीलाल " ने कहारके हाथसे टौकरी ले ली और खडेही खडे सबको बांट दी ! चार रोजके बाद " ज्योतिश्चंद्र " और " विश्वंभर "इंद्रप्रस्थमें आये और फिर पढाई सुरू की ! मगर " विश्वंभर " की बद किस्मतीसे उनके पिता "ब्रह्मानंद" पूनेसे आगये ! उन्होंने " विश्वंभर " की सब कार्रवाईको अपनी आ-खोंसे देखी, " विश्वंभर " को अपने पास मिलनेको भी न आते देख उनको बड़ा क्रोध आया !

एक दिनका जिकर है कि " विश्वभर " वग्घीमें बैठ कर स्कूलको जा रहा था " ब्रह्मानद " न जाते हुए देख कर आवाज दी, " विश्वभर " ने आवाज सुनकर वग्गीको खडा किया ! " ब्रह्मानद " ने आते ही वग्गीके पहियेपर पाव रखकर " विश्वभर " को हाथसे पकड ऐसा झटका दिया कि, वह नीचे आ पडा ! यह देख दोनों सहीसोंमेंसे एकने " ब्रह्मानद " के पेरोंमे हाथ डाल ऊपर उठाकर दन्नसे जमीनपर मारा और ऊपरसे दो लातें ठोकी ! (इसको क्या मालुम कि, यह " विश्वभर " का बाप है !) इतनेहीमें बहुतसे आदमी इकठे हो गये " विश्वभर " तो झट उठके वग्गीमें बैठ फिर " रायसाहब " की कोठीमेंही वापिस आया और "रायसाहब" को कुल हकीकत कह सुनाई. इधर " ब्रह्मानंद " ने भी " रायसाहब " के पास आकर कहा कि, " क्या आपको यह लाजिम है ? "

रायसाहब-भाई ! हमने कोई चोरी तो नहीं की ! यह तुम्हारा लडका है तुम जानो ! अगर राजी खुशीसे जाता है तो ले जाओ ! वरना नाहक अपना फजीता क्यों कराते हो ? अफसोस है तुम्हारी अकल पर ! जो तुमने राह जाते इसतरह बच्चे पर हाथ उठाया ! वही तुम्हारे भाई है जो तुम्हारे दुश्मन हो रहे हैं ! क्या आज उन्हींके कहनेसे इस बिचारे लडकेकी दुर्दशा करना चाहतहो ? मैंने तो दो सालमें इसको इतना पढा लिखाकर होशियार किया है.

जो तुम पांच सालमें भी न कर सकते ! और उम्मेद करता हू कि, अगर तुम अपनी इस कार्रवाईसे वाज आजाओ और इसको मेरे पास छै सात सालके लिये और छोड़ दो, तो यह बड़ा लायक और दुनियामें तुम्हारा नाम और जस फैलाने वाला हो जावे !

ब्रह्मानद– (क्रोधमें) आप बड़े हैं, जो चाहे सो करें ! मगर इसको तो आपके पास अब एक घड़ी भी न रहने दूगा ! बेहतर है कि, आप इसको मेरे साथ भेज देवे वरना मुझे दूसरी तजवीज करनी पड़ेगी !

रायसाहब–हा ! अच्छा तो बेहतर है कि, आप कोई दूसरी ही तजवीज करें (आवेशमें आकर और कुछ कहना चाहते थे कि, बीचमें ही " रायसाहब " से)

विश्वंभर–आप ठहरिये ! मुझे इनके साथ जाने दीजिये देखू तो यह मुझे क्या करते हैं? (इतना कहकर एक खत लिखा और नीचेसे चपडासीको बुलाकर कानमें) जल्दीसे यह खत 'सेंधेखा' कोतवाल साहबको दे आ ! (अपने बापसे) चलिये आपाजी ! जो मरजी में आवे सो मेरा करना ! आपको अपनी सात पीढीकी कसम है जो कसर गुजारो ! (विश्वंभरके क्रोधभरे इन वचनोको सुनकर "ब्रह्मानंद" कुछ न बोले ! " विश्वभर " को " ब्रह्मानंद " के साथ जाते देख " ज्योतिश्चद्र " रोने लगा, उसको रोते देख)

रायसाहव–अरे मूर्ख ! रोता क्यों है ? ये क्या कहीं जाने लगा है ! (ब्रह्मानंदसे) ए वाबुजी ! जरा ठहरो ! (एक चपडासीको बुलाकर चपडासीसे) तूं "विश्वंभर" के साथमें जा, मगर घरके बाहरही ठहरना, अगर "विश्वंभर" कहे तो चला आना, वरना वहाही ठहरना मै चार वजे "गनेशा" को भेजूगा !

ब्रह्मानद–(रायसाहवसे) क्यों ?

रायसाहव– क्यों काहेकी ? मै कहता हू कि ठहरो !(इतनेमें चपडासी तयार होकर "ब्रह्मानद" से बोला–चलो साहव ! चले !)

ब्रह्मानद–(चपडासीसे) क्यों तेरा साथमें क्या काम है ?

चपडासी–मालिकका हुकम ! यही काम है !

विश्वंभर– (अपने आपसे) अब क्या यह तुम्हे कुछ कहता है ? साथ चलता है तो चलने दो ! ("ब्रह्मानद" "विश्वभर" को अपने साथ घर ले आया "विश्वभर" का आज यह दो सालके वाद घरमें आना हुआ है.)

ब्रह्मानद– (विश्वभरसे) क्यों भाई सच वतला अब तेरी क्या मनशा है ? में तुझे उनके यहा तो एक घडी भी नहीं रहने दूगा !

विश्वभर– (छातीपर हाथ रखकर) लो मै भी सच वतलाता हूं कि, अगर मुझे "रायसाहव" के यहा न

रहने दोगे तो आपके पासभी अब मै एक घडी न रहुं-
गा ! (जरा जोशमें) अरे रहना तो क्या आप लोगोंकी
शकल तक भी न देखुगा ! पिताजी ! मैंने पढा है कि,
मा बापका बड़ा अदब करना चाहिये ! और उनकी हर
तरहसे टहल करनी चाहिये और जो वो कहें उनके
हुकमको सिर माथे पर लेना चाहिये ! इस लियेही मुझे
आज आपके साथ इस बे अदबी और बत्तमीजीसे पेश
आना पडा है ! में आपका ऐसान सारी उमरमें भी न
भूलूंगा कि, जो आपने मुझे सारी उमर मख रखनेके
लिये, न खुद पढाया और नाही पढने दिया ! मै पर-
मात्मासे प्रार्थना करता हुं कि, मेरे बापके जैसा जहानमें
भूलकर भी किसीका बाप मत हो ! ! !

ब्रह्मानंद– (विश्वभरकी बातोंको सुनकर अपने बडे भाई " जयंतिसहाय " से) देखा भाई ! और सुना !

जयंतिसहाय– तुमही देखो और सुनो ! अपने हाथ काटे बीज अब मुझे क्या पूछते हो ?

ब्रह्मानंद– (विश्वंभरसे) तुझे मेरे साथ पूने चलना होगा !

विश्वंभर– बेशक ! मुझे आपके साथ पने चलना होगा !

ब्रह्मानंद–बस तो जा उस चपडासीको कह दे कि, चला जावे !

विश्वंभर– बस तो जाता हु उस चपडासीको कह देता हुं कि चला जावे ! (उठकर बाहर गया और चपडासीसे) भाई ! इस वक्त तो तू चला जा और " ज्योतिश्चद्र " को कहना कि, मै कल सुबह आऊगा ! (उसको तो इतना कहकर रवाने किया और आप अंदर जाकर अपने बापके पास आ बैठा !)

ब्रह्मानद– (हंसकर) अच्छा अब यह बता कि, तू क्या पढा है ?

विश्वभर–जो अपने साथ भला करे उसके साथ बुरा करना और जो बुरा करे उसके साथ भला करना ! और आप जैसे मावापोंको सुबह उठकर प्रणाम करनेके बदले पाच जूते लगाना ! अगर हिम्मत न हो, तो मन मानी जितनी बने उतनी गालिया देना ! (ब्रह्मानन्दने यह सुन, हाथसे पकड एक तमाचा मारा, दूसरा मारनेके लिये हाथ उठाया ही था कि " विश्वभर " ने कहा) अरे तमाचोंसे क्या बनेगा ? कोई लकडी हाथमें लो ! लकडी ! (इतनेमें बाहरसे आवाज आई) " ब्रह्मानंद " हैं क्या ? (बाहर जाकर एक आदमी को देखा)

ब्रह्मानद– क्यो भाई ! क्या है ?

आदमी– आपको कोतवाल साहब बुलाते है !

ब्रह्मानंद– क्यों ?

देर तक बातें की, मगर न मालुम कि क्या थी "विश्वभर" को साथ ले " ब्रह्मानद " घर आये. और गतफोही उसको साथ लेकर पूने चल दिये ! अब तो ' विश्वभर" हर वक्त उदास रहने लगा, लिखना पढना छुट गया, इस तरहकी उदासी में ही " विश्वंभर " ने वहा पाच महीने गुजारे. संवत् १९९२ फाल्गुन शुक्ला दशमी का दिन है, श्यामके वक्त कितनेक मित्रों के साथ बैठे हुए " ब्रह्मानंद " हँसी मशकरीकी बाते कर रहे है, इतने में उनके किसी एक मित्रने कहा कि–भाई! सुना है कि, आप गाने में वडे चतुर है, कुछ सुनाइये तो सही ! यह सुनकर " ब्रह्मानंद " ने एक ध्रुपद गानेके लिये ज्यों ही जोरसे स्वर निकाला त्योंही वह ऊपर का स्वर ऊपर और नीचेका नीचे ही रहा! यह देख सबके सब एकदम घवडा उठे ! बस क्या था ? सबके देखते ही देखते "ब्रह्मानन्दजी" ब्रह्मानद में मिल गये ! याने इस फानी दुनिया से चल बसे ! आपकी उमर इस वक्त अठाईस (२८) सालकी थी ! " विश्वभर " थोडोसी दूर पर खेल रहा था उसे बुलाकर लोगोंने कहा कि, अरे ! तेरा बाप तो मर गया ! यह सुन " विश्वंभर " वहा पहुचा और खड़ा खडा पिताकी लाशकी तर्फ देख अपने मन में विचार करता है कि, यह मेरे पिता थे ! मगर इनकी इस दशाको भी देखकर मुझे रोना नही आता ! यह वडे आश्चर्य की बात है ! इधर लोकोंने " ब्रह्मानन्द " की लाशको उठाकर उनके रहने के मकान पर जा रखा !

पतिको अचानक मरे देख " विश्वभर " की मा (मतेरई) छातीको पीट पीट कर रोने लगी ! " श्रीनाथ " और " शका " भी दाः मारकर रोने लगे ! " विश्वंभर " सबको रोते देख स्वयं भी कुछ रोने लगा, परंतु अद-रसे वह हसताही था ! इसका कारण क्या होगा ? यह बुद्धिमान स्वयही विचार लें !

आखिर घरको तार दिया और पूनेके स्टेशन पर जो और और बाबू रहते थे उन सबने मिलकर " ब्रह्मानद " का अग्नि सस्कार किया ! घरसे दूसरे रोज " जयतिसहाय " पहुचे और दो रोज रहकर " माया " (ब्रह्मानंदकी स्त्री) "विश्वभर" "श्रीनाथ" और लडकी " शका " को अपने साथ लेकर घरको चलने लगे ! उस वक्त "विश्वभर" ने "जयतिसहाय" से कहा कि, अब मेरा घरमें रहना न होगा ! इस लिये बेहतर है कि, आप मुझे यही छोडदो ! अगर आप मुझे घर ले जाओगे तोभी मै वहासे भाग आऊगा !

जयतिसहाय– (दुःखी होकर) तेरी मरजी ! जहा तेरा जी चाहे वहां रह ! (उस वक्त कुछ रुपये "विश्वभर" के पास थे और बीस रुपयका नोट उसको "जयतिस-हाय " ने दिया. " विश्वभर " तो वहाही रहा, और ' जयतिसहाय, " " माया " " श्रीनाथ " और " शका " को लेकर घरको आये !

इधर कलकत्तेके पासका रहने वाला " कृष्णचद्र " नामका जादूगर एक बंगाली बाबू यहांपर रहता था " विश्वभर " के सब हालसे वह वाकिफ था. एक दिन वह)

बाबू- (विश्वंभरसे) अब तुम क्या करोंगे ?

विश्वंभर-जनाब ! मै वही करूगा जो मेरी तक़दीर मुझसे करायेगी !

बाबू-क्या मुझे जानते हो ?

विश्वभर-आपको सिर्फ इतना जानता हू कि, आपने कित-नेक जादूके खेल एक दिन दिखलाये थे, और श्यामको रोज स्टेशन पर फिरनेके लिये आते और मेरे पिताजी के साथ बातचीत किया करते! बाकीतो मे आपके बारेमें कुछ नहीं जानता !

बाबू-क्या तुम मुझसे यह हुनर लेना चाहते हो ?

विश्वभर-यह तो मेरे मनकी ही कही ! अगर आप बतलाये तो इससे परे और मुझे क्या चाहिए ?

बाबू- (अपने साथ एक ब्राह्मण चपडासी था उससे) बसतराम ! देखो आजसे यह मेरा पुत्र है ! और इनको जो कुछ मुझे आता है वह में सबही सिखादूगा (विश्वं-भरकी स्थितिको सुन " बसतराम " को भी बडा तरस आया.)

वसंतराम (बावूसे) आप मालिक हैं ! (मनमें) लड़के-का नसीब उघडा !

(कुछ दिनके बाद बावू, " विश्वभर " को साथ लेकर पूनासे लश्कर आये, जहासे तीन कोस पर मुरारकी छावनीमें कमान्डर् चीफ साहबके यहा जाकर उन्होंने अपना खेल दिखलाया, खेल देख कर वे बोले कि मैं आपको महाराजके सामने कराऊगा ! अगलेही रोज "चीफ साहब" ने राजा साहबसे उनका जिकर किया. राजा साहबने भी हुकम दिया कि अच्छा आइतवारके दिन दो बजे इन्द्र-भुवनमें उनका खेल होना चाहिये ! सबको इस बातकी खबर करदी.

बस तीसरे रोज इन्द्रभुवनमें राजा साहब और बडे २ अहलकार व अमलदारोंसे दरबार भर गया। था कितने-एक अगरेज भी हाजिर हुए, बस ठीक समय पर बावूने खेल दिखलाना शुरू किया. खेल एकसे एक चढ़ता था, लोक देखकर हैरान होते थे ! बावूजी क्या कर रहे हैं ? इसमें किसीकी अकल काम नहीं करती थी ! आखिरमें बावूजीने एक लडकेको एक मेज पर बिठला दिया ! और पासमें खडे एक सिपाहीसे तलवार मांग कर उससे लड़केका सिर काट अपनी हथेली पर रख लिया ! और " विश्वभर " को अपने पास बुलाकर कानमें कहा कि, क्या तुझे इसका सिर कटाहुआ मालूम देता है ?

विश्वंभर–नहीं !

बाबू–इस वक्त इन सबको इसका सिर कटाहुआ नजर आता है ! अब तूं ऐसा कर कि, इस मेज पर बैठे हुए इस लडकेको अपनी चादरसे ढांक दे ! (विश्वभरने वैसाही किया, फिर बाबू राजा साहबसे) हजूर ! फरमाइयेगा कि, इस सिरको क्या करूं ? और इसकी लहाशको क्या करू ?

(यह कार्रवाई देख सबही हैरान परेशान होगये ! एक अंगरेजने उठकर अच्छी तरहसे देखा, उसकी अकलमें भी यह बात न आई कि, ये क्या दिखा रहा है !)

राजासाहब– (बाबूको पास बुलाकर) यह सिर मेरी हथेलीमें दो !

बाबू–बेशक ! मै यह सिर आपकी हथेली पर रखनेको तयार हूं, मगर हजुरको मेजके पास तक आनेकी तकलीफ उठानी पडेगी ! (राजा साहब झट उठकर मेजके पास गये और बाबुने वह सिर राजासाहबके हाथमें रखदिया !)

राजासाहब–इसमेंसे लहू क्यों नहीं टपकता ?

बाबू– क्या मुझे फासी देनेका विचार है ?

(मुशकरा कर– वो सिर झट अपनी हथेलीमें लेकर उससे बातेंभी करवाई ! फिर उसी लाशके साथ जोड

थापी मार लडकेको राजा साहबके सामने खडाकर दिया ! राजा साहब इस चमत्कारसे बहुत खुश हुए और उसी वक्त सातसौ (७००) रुपये और दो साल जोडी देकर कहा कि, अभी तुमने जाना नही.

इतना कहकर राजा साहब तो चलदिये.

चीफ साहब– (बाबूसे,) बाबूजी ! सरकारके कहनेका मतलब यह है कि, आपको यह खेल रनवासमें भी दिखाना होगा !

बाबू– बहुत अच्छा ! मगर जिस दिन खेल देखना हो उसके एक दिन पहले मुझे वक्तका पता मिलना चाहिये !

(यह कहकर बाबूजी अपने मकान पर आये और " विश्वंभर " से) देखा भाई ! मेरा तो यही काम है! मगर मेरे गुरुका हुकम है कि, जो कमाई हो उसका तीसरा हिस्सा अपने पास रखकर बाकीका कुल गरीब गुरबोंको बांट देना ! इस लिये जब तू बाजार या कहीं बाहर फिरने जावे तब दश –पदरा रुपयेकी रेजगारी पैसे जेबमें डाल जाया कर ! जहा कहीं लूले, लगडे अंधे, अपाहज गरीबको देखा उसको कुछ दे दिया !

विश्वंभर–ठीक !(वैसेही करता हुआ एक दिन अपने मनही मनमें) ओ ! आज मुझे वह दिन आना था कि, में लोगोंके आगे हाथ पसार कर दर बदर फिरता नजर आता ! लेकिन यह तो मेरी तकदीर कैसी जबरदस्त निकली

कि, आज मेरे हाथसे सैकडों गरीब भूखोंका पेट भरता है ! क्या यह हालत मुझसे कभी दूरतो न हो जायेगी?

(इस तरह तीन महीने गुजरे ! कई वार वाबूने कई जगह खेल किये ! आखर वहासे जाते हुए सरकारसे पाच सौ रुपये और मिले ! वाबूको सरकारने अपने यहां रहनेका हमेशहके लिये डेढसौ (१५०) महीन पर वहुत कहा मगर वाबूजीने " नौकरी करनेकी मुझे कसम है " यही उत्तर दिया.

वहांसे चलकर झांसी, दतिया, जालौन, समथर और चरखारी आदि कितनेक रजवाडोंमें फिरते हुए " विश्वभर " को साथ लिए हुसंगाबाद पहुचे ! वहां वाबूजी एक महीने विमार रहे ! बादमें कांनपुर, कलकत्ता, वनारस, लखनऊ वगैरह शहरोंमें इनके साथ फिरते फिरते " विश्वंभर " को डेढ साल गुजर गया ! वाबूजीने " विश्वंभर " को निर्भय वनानेके लिये कई एक उपाय किए (जिससे उनकी जादूगरी खीलनेमें उसे किसी प्रकारका भय न हो ! क्यो कि यह काम निर्भय छाती वालेका है !) और कई एक तरहका घास और वनस्पतियोंके प्रयोग वनाने वतलाये ! लेकिन " विश्वभर " की किसमतने आकर ऐसा धक्का मारा कि वाबूजी एक दम तीन दिनकी सखत विमारीसे इस दुनियासे चल दिये ! उस वक्त " विश्वभर " को अपने वापके मरनेसेभी इनके मरनेका ज्यादा दुःख

पैदा हुआ ! वहांपर बाबूका अग्नि संस्कार करके, जो चपडासी था वो तो अपने देशको चला गया और " विश्वंभर " चारसौ पचास रुपये (जो बाबूके, उसके पास थे) लेकर घरमें आया और आतेही वह रुपया अपनी मतेरई माके आगे रख दिया ! उस वक्त तो माने ऐसा प्यार और स्नेह दिखलाया कि, जो खास अपने बेटे " श्रीनाथ " का भी न कभी किया होगा ! सत्य है–" सर्वे गुणाः काचनमाश्रयंति " यह प्यार " विश्वंभर " का नहीं था ! किन्तु उन रुपयोंका था ! घर वालोंको यह कुछ हाल मालुम था कि, " विश्वंभर " एक अच्छे आदमीके साथमें है. क्यों कि बाबूजीने स्वयं " जयतिसहाय " को पत्र दिया था कि, आपका भतीजा मेरे साथ है " विश्वंभर " के घर आने पर " ज्योतिश्चंद्र " ने " विश्वंभर " से फिर पढनेके लिये बहुत आग्रह किया मगर " विश्वंभर " ने कहा कि, अब मेरा पढना न होगा. और नाही अब तुम्हारे यहा मैं रह सकता हू !

आखर घरमें कुछ दिन तकतो "विश्वंभर" के साथ ठीक बरताव रहा, मगर एक दिन अपनी मा (माया) के मुखसे अपने लिये निकला हुआ शब्द सुन " विश्वंभर " चुपचाप घरसे चलदिया ! एक टिकट कलेक्टरकी सहायतासे मथुरामें आया ! वहा उसको न किसीके साथ जान पहचान थी और नाहीं पासमें एक पैसा !

भूखके मारे मुख करमा गया था, चलते हुए पगभी लड़थड़ाते थे, शहरमें फिरते २ थक कर शामके वक्त शेठ लक्ष्मीचंदजीके मंदिरके सामने यमुनाजीके घाटमें पानी पीनेकी इच्छासे किनारे बैठ कर दो चूळु पानी पिया, लेकिन कुछ चकरसा आनेसे वहीं लेट गया! कुछ देरके बाद उठकर जमनाजीके किनारेही किनारे जाते हुए एक कीकर (बबूल) के वृक्षके नीचे उसी वृक्षके गूंदके चमकते हुए छोटे २ सफेद डले गिरे हुए देख कर " विश्वभर " ने वे उठा लिये, और भूखके मारे एक मूमें डाला ! मगर कचा गूद दातोंमेंही चिपक गया ! आखिर " विश्वभर " ने इधर उधरसे और थो- डासा गुंद चुग कर इकट्ठा करके एक पथ्थर पर रखा और कुछ सूकी हुई लकडिया बीन कर उस गुदके ऊपर रखके दिवासलाईकी एक काडी (तीली) लेनेके लिये सामने एक मंदिरके पुजारीके पास पहुचा ! मगर अपने मनमें विचारने लगा कि, " इससे क्या कहकर तीली मांगू ? अगर देनेसे इन्कारही करदे तो ? " इस तरह कई प्रकारके विचार करता हुआ वहां खड़ाही था कि, इतनेमें थोडी दूर बैठे हुए बावाजीने अपनी चिलम तमा खूकी पीकर जमीन पर उंधादी " विश्वभर " जाकर झट वह आगकी चिनगारियें एक बडके पत्ते पर ले आया और उनकों लकडियोंमें रखकर आग जलाई उससे वह गूंद फूलकर मखाने बनगया, उसे ठंडा करके "विश्वभर" ने अपनी भूख मिटानी चाही ! लेकिन वह भी खाया

न गया! तब तो वह बडाही निराश हुआ! कभी अपनी पूर्व अवस्थाको याद करता! कभी घरसे भाग आनेकी अपनी भूलको धिक्कारता! आखर कार वहासे उठा और शहरमें चलकर पापी पेटके लिये किसीके सामने हाथ पसारनेका निश्चय करके बाजारमें आया, लेकिन बाजारमें आतेही आते मनका चक्र फिर गया! (हाथकी उगली दातोंके बीच चबाकर मनही मनमें) है! मै हाथ पैरोंके होते हूए भीख मांगु? धिक! धिक!!

चलता २ एक सरायके सामने बहुतसी घास बेचने वाली बैठी थीं, उनमें दो तीनके पास इमलीके पत्तोंका भारा भी रक्खा हुआ था. वहा खडा होकर विचारने लगा कि—"भला घासतो घोडोंके लिये है, लेकिन यह इमलीके पत्ते किस जानवरके लिये और कौन लेता होगा?" इतनेमें थोडी ही देरमें एक मुसलमानने आकर उस भारे वालीसे पूछा कि "अरी! इस भारेका क्या लेगी?" उसने उत्तर दिया कि "छै आने!" आखर होते हवाते मियाजी साढे चार आनेमें लेकर चले तो "विश्वंभर" ने पूछा कि, "जनाब! यह पत्ते किस काम आयेंगे?" मियाजी बोले "मेरे यहा दो तीन बकरीयें है उनको खिलाऊगा!" यह सुनतेही "विश्वंभर" का हौसला बढा और झटही अजमेरी दरवाजेसे निकलकर सडकके किनारेही किनारे आधा मील निकलगया! वहा एक कबरस्तानके नजदीकमें

कई इमलीके झाड थे उनमेंसे एक झाडपर चढ गया और इमलीकी छोटी २ टैहनियें तोड कर नीचे गेर उतर कर एक भारा बनालिया ! मगर बांधनेके लिये रस्सी न थी ! अपने कमरकी धोतीको खोल उसकी एक तरफ की किनारी फाडकर, उससे उस भारेको अच्छी तरह बाधकर मनमें यह चार रुपयेका बूट, शरीरपर यह कमीज, कमरमें यह बारीक कोर वाली धोती, और कहां यह सिरपर चारेका भारा ! यह सोचकर गलेसे कमीज उतार कर बगलमे दबाली और धोतीको कमरमें लगोटेकी तरह बांध कर उसीमें बूटभी बाध लिया और जनेऊभी छिपा लिया ! भारेको मुशकिलसे उठाकर अपने सिरपर रखके, जहा उन घसियारोंको बैठे देख गया था वहाही आनेके इरादेसे चलता हुआ शहरके दरवाजेमें प्रवेश करके अभी २५–३० कदमही आगे गया होगा कि, एक दुकानदारने " विश्वंभर " को आवाज दी कि " ओ चरीवाले ! "

विश्वंभर– (पीछे फिरकर देखने लगा कि) किसने आवाज दी ? (इतनेमें फिर)

दुकानदार –अरे इधर आ इधर !

विश्वंभर– (बुलाने वालेको देखकर पासमें जाके आगे खडा होगया !)

दुकानदार– क्या लेगा ?

विश्वंभर–छै आने !

दुकानदार– (विश्वभरके सिरसे भारेको नीचे उतारकर वजन करता हुआ) अरे सच वता क्या लेगा ? तीन आने लेने हों तो यहा रखदे ! नहीं तो जा लेजा !

विश्वभर– नही ! (दुकानदारने भारेको उठवा विश्वभरके सिरपर रखवा दिया ! " विश्वंभर " चार पाच कदम गया होगा कि—

दुकानदार– अरे साढे तीन आने लेगा ? ले ले आ !

विश्वंभर– (पहलेही तीन आनेमें हां करने लगा था, लेकिन अपने मनमे विचारने लगा कि एकदमही देदेना ठीक नहीं ! पीछे लौटकर दुकानदारके सामने भारेको गेर कर) लाइये पैसे !

दुकानदार– अरे तो यहा कहा डालता है ? घर ले चल !

विश्वंभर–घर कितनी दूर है ? (इस वक्त "विश्वभर" का चेहरा गरमीके मारे लाल होगया था ! जी घबडा रहा था ! भूखके कारण अब भार लेकर चलना बडाही मुशकिल था ! आखोंमे आसू डब डबा रहे थे ! धीरज धर कर–) अच्छा चलिये !

दुकानदार– (विश्वभरकी शकलको देख कर–) अरे तू किसका लडका है ?

विश्वभर–जनाव ! अब आपको चोरेसे काम है ? या मै कि सका हूं इससे काम है ?

(दुकानदार विश्वभरके सिरपर भारा उठवा घर ले गया. विश्वभर वहासे साढे तीन आनेके पैसे लेकर फिर जमना किनारे पहुंचा, वहां अच्छी तरह स्नानकर कपडे पहन एक हलवाईकी दुकानसे एक आनेका दूध पी और कुछ खा, अपने दैवको धन्यवाद देता हुआ चंद्रमासे खिडी हुई उज्वल रात्रिमें घाटके किनारे चट्टानपर आनंदसे सोगया !

अगले रोज सुबह उठकर बाजारमें गया, वहा एक दरजीने अपनी दुकानको साफ कर जो कुछ कपडोंका कतरन था वह निकाल कर बाहर फैंक दिया. " विश्वंभर " ने उसे उठा एक धेलेकी पेचक मोल ले, उस कतरनकी रग बेरगी तीन सौ गोलिया बनाकर एक पैसेकी लोहेके तारकी गुच्छी लाकर उसके उतनेही टुकडे कर डाले जितनी गोलियां थी. पीछे एक गोलीको उस तारके साथ बाध कर ठीक बनालिया, स्टेशनसे उतरते हुए " विश्वंभर " ने सडकके किनारे किनारे लगेहुए मूजके जो सरकडे–(बुजे) देखे थे वहा जाकर उनके बीचकी छडें निकाल लाया और उनके एक एक बालिस्तके सौ टुकडे करके वोह तारमें बींधी हुई गोलिया उस एक एकके साथ चढाव उतारमें तीन तीन गोलिया बाध कर तयार करलीं दुपहरको बाजारसे दो पैसेका

कुछ खाकर जमना किनारे सारा दिन व्यतीत कर दिया ! श्यामके वक्त जब दीवे जल चुके तो "विश्वंभर" उस अपनी बनाई हुई चरखडियोंमेंसे एक चरखडी, एक जगह कूडेमें फूटी पडी हुई बोतलको ले उसके पेंदेमें धेलेका मिट्टीका तेल ले कर उसमें उसको डबो कर दीवेके साथ जलाकर हाथमे घुमाने लगा और आवाज देने लगा कि " ये आतशबाजीकी चरखी एक पैसेको ! बारूदसे बनी हुई चरखी चार आनेकी पाच मिनट या सात मिनटमें भस्म हो जाती है, मगर यह मेरी चरखी एक बार तेलमें डुबाई हुई घंटो चलती है और महीनों तक ऐसीकी ऐसी रहती है ! "

" विश्वभर " एक चरखी अपने हाथमें फिराता था जिसे देखकर बचेही नहीं बलकि, बडे २ लोग भी अपने लडकोंके लिये ले ले कर जाते थे ! सिर्फ उसमें खूबी यही थी कि, नइ गोलिया लाल सफेद काली रगकी होनेसे फिरती हुई आबेहूब आतशबाजीकी चकरीके माफकही मालूम देती थी ! गरज डेढ कलाकके अंदर " विश्वभर " के पास सौ चरखीयोंमेंसे एकभी बाकी न रही. तब " विश्वभर " जिस दरजीकी दुकानके सामनेसे कतरन उठालाया था उसीकी दुकान पर पहुच कर.)

विश्वभर– (दरजीसे) भाई ! मैं तुम्हारे उपकारको न भूलूगा !

दरजी– (आश्चर्य पूर्वक विचारता हुआ) मैंने क्या उपकार किया ? (पहचान कर) अच्छा तुम वो हो जो सुबह यहांसे कतरन-धज्जियां ले गये थे और मैं ने पूछा भी था कि, इनका क्या करोगे ?

विश्वंभर– हां ! (मुसकरा कर) मैं वही हू ! उन्हीं धज्जियोंसे यह एक रुपया आठ आने (उसके आगे निकाल कर रखता हुआ बैठ कर) कमाये है !

दरजी–यह कैसे ?

विश्वंभर– कैसे क्या ? ऐसे ! (कुल बात कह सुनाई, दरजी सुन कर बडा खुश हुआ.)

दरजी– तुम कहांके हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? और यहां कैसे आये ? और कहां ठहरे हो ?

विश्वंभर– यह पूछ कर तुम क्या निकालोगे ? (उठकर) अच्छा ! जय जय ! फिर मिलूगा (इतना कहता हुआ चल दिया और पेटभर बाजारसे दूध पी, एक सरायमें आनदसे सारी रात रहा ! अगले दिन बाजारमें जारहा था इतनेमें " बालमुकंद " किनारीवालेने "विश्वंभर" को पहचान कर झट पकड लिया और अपनी दुकानपर ले गया.)

बालमुकंद–तुम यहां कहां ?

विश्वभर– (आंखोंमें आंसू लाकर) मैं भागकर आया हू ! (सब बात सच सच कह सुनाई. "वालमुकद" इन्हींकी दुकानसे माल लाया करते थे इस लिये कुछ २ हाल " विश्वभर " का इनको मालुम था)

वालमुकद– (धीरज देकर) तुम किसी बातकी चिंता न करो ! यहा आनंदसे रहो ! दुकान तुम्हारी है ! घर तुम्हारा है ! तुम रोते क्यों हो ? चुप करो !

विश्वंभर–साहब ! मे किसी चिंतासे नहीं रोता ! मै रोता हूं कि, आप मुझे कहासे मिलगये अब मै रोऊ न तो क्या हसू ?

वालमुकद– तुम यह क्या कहते हो ? मैं तुमको मिलगया यह अच्छा हुआ या बुरा ?

विश्वंभर– इससे बुरा और क्या होगा ?

वालमुकद– क्यों ? तुम्हारे मनमें यह डर होगा कि, ये मेरी खबर घरवालोंको देदेवेंगे !

विश्वभर– नहीं ! नहीं ! खबरतो कलकी देते आजही देदो ! मुझे इस बातका डर नहीं है ! मुझे सिर्फ डर है तो इसी बातका है कि, जब लोग आपसे पूछेंगे कि, यह कौन है ? तो आपने यही कहना है कि, यह पडित-शारदाचंद्र का पोता है ! हाय ! क्या यह थोडीसी बात है ? इन्ही बोलोंने तो मुझे घर छुडाया ! और यही सुननेका मौका

यहा मिले, इससे मैं वेहतर समझता हू कि, अब यहां पानी भी न पीऊ !

वालमुकंद–(विश्वंभरके अभिप्रायको समझ गया, एकदम अपनी छातीसे लगाकर बडेप्यारके साथ) "विश्वभर" वेटा ! शावास तुझे ! अभीतक मै तेरे कहनेको नहीं समझा था ! (पुचकार कर) चुपकर ! यह याद रखना कि "वालमुकंद" का सर्वस्व नष्ट क्यों न हो जावे लेकिन तुम्हारे दादाके निसवत इस "वालमुकद" के मुखसे एक अक्षर भी न निकलेगा ! तुम यहा रहो और आनदसे अपनी दुकान पर वैठो !

विश्वंभर–अगर हरामकी रोटिया खाकर ही दिन काटने होते और फिर लोगोंके ताने सुनने होते तो "रायसाहव" के पुत्र "ज्योतिश्चंद्र" के साथ एक आला दरजेकी अमीरी भोगते हुए छोडकर मुझे इस प्रकार से भटकनेको क्या किसीने कहा था ? हा ! वेशक मैं दुकान पर वैठु तो सही मगर जबतक अपने हाथसे आठ दश आनेके टके रोजके न पैदा करूं वहा तक दुकान पर वैटना भी मूर्खता है और रोटी खाना भी हराम !

वालमुकंद– (अपने दिलमें "विश्वभर" के इरादेको अच्छी तरहसे समझ कर) अच्छा ! हाल तो तुम मेरे कहनेसे दो चार दिन दुकान पर वैठो पीछे देखा जाय-

गा ! (विश्वभरको अब किसी बातकी चिंता न रही ! अपने घर जैसा मामला होगया ! " विश्वंभर " ने " बालमुकंद " से चोरी दो तीन घटेकी फुरसत निकाल कर सौ सवासौ वही चरसींये बनाकर एक भरतपुरके रहने वाले " अलीमहमद " मुसलमानसे कहा कि तू रातके वक्त ये बेचाकर डेढ रुपयेका बिके तो आठ आने तेरे और रुपया मेरा ! उसने भी यह बात बड़ी खुशीसे मंजूर करली ! वह रोज युही करने लगा. पाच सात दिनके बाद यह बात " विश्वभर " ने " बालमुकंद " के आगे छे रुपये रख कर कह सुनाई और कहा कि, मै स्वय इस कामको नहीं करता मै ने एक " अलीमहम्मद " नामके मुसलमानको यह धंधा सिखला दिया है, आपसे इस चोरी रखनेकी मै माफी चाहता हु ! " बालमुकद " को "विश्वभर " की इस बातसे बडाही आश्चर्यसा हुआ ! आखर " विश्वंभर " दुकान पर बैठने लगा और दिल लगाकर काम सीखने लगा ! अनुमान तीन महीनेके अदरही उसने अच्छी तरह सलमे सितारेके भरत कामको अपने कारूमें कर लिया ! और " बालमुकद " की गैर हाजरीमें दुकानका कामभी अच्छी तरहसे करने लगा ! यह बात " जयसिंसहाय " को मालूम हुई कि " विश्वभर " मथुरामें है तो उन्हों ने " बालमुकुद " को लिखा कि, अगर " विश्वभर " यहा आजावे तो अच्छी बात है क्यों कि, भाई "वंश-

गोपाल " बहुत बीमार है और मुझ एकलेसे तीनों दुकानोंका काम नही सभाला जाता ! मुनीमजी अपने लडकेकी शादी करने हापडको गये हुए हैं. यह समाचार सुन कर " बालमुकंद " ने समझा कर " विश्वभर " को घरको भेजा और " जयतिसहाय " को लिखदिया कि, अगर इसके साथ किसी प्रकारकी कोई खट पट हुई तो याद रखना ! तुम इस लडके से हाथ धो बैठों गे !

" विश्वभर " घरको आकर अपनी दुकान पर बैठने लगा, तीन महीने तक अच्छी तरहसे अपना काम किया लेकिन अपनी मतरेइ मां के कारण फिर वहासे इसका चित्त उखड़ा !

" तकदीरके लिखेको तदवीर क्या करे ? " घरसे बाहर रहकर जिन सुखोंको अनुभव करता था उससे हजार गुने दुःख " माया " के कारण इस घरमें अनुभव करने पडते थे ! एक दिन—

वजगोपाल– (दिवालीकी रातको आठ वजे दुकान बंद कर किसी आढतीयेके चारासो रुपये लेकर घर आये और चुप चाप " माया " की कोठडीमें जाकर क्या कर रही हो ?)

माया– (उठकर) युही बेठी हू ! कहो !

वंशगोपाल–ये लो रुपयोंकी थैली ! अंदर रखलो ! सुबह जाते हुए मुझे या बडे भाईको देना !

माया– (रु० की थैली हाथमें लेकर मुसकराती हुई) किस के है ?

वंशगोपाल–एक आढतियेंके है !

माया–मैंतो कुछ औरही समझी थी !

वंशगोपाल–क्यों नहीं ? (इतना कहकर बैठ गये और थोडी देरके बाद कुछ खा पीकर अपनी बैठकमें चले गये. इधर " माया " वह रुपयोंकी थैली लिये हुए अपने पलंग पर बैठी हुई थी इतनेमें " विश्वंभरनाथ " अंदर आया और कपडे पहन कर बिना बोले चाले बाहर चला गया ! उसवक्त " माया " ने माया जाल रचा ! वह रुपयोंकी थैली लेकर घरके पीछे जिस तबेलेमें गउए बांधी जाती थी वहा गई ! इतनेमें " वंश गोपाल " की लडकी " लीला " ने देख लिया अपने मनमें सोचने लगी कि, इस वक्त चाची तबेलेमें क्यों गई है ? यह विचार कर " लीला " झट छतपर चढ गई वहासे नीचेका सब कुछ दिखता था सो चुप करके देखने लगी ! " माया " ने वह रुपयोंकी थैली लेकर एक तर्फ घोडेके लिये खानेका घास भरा हुआ था उस के पीछे भींतके एक आलेमें रख कर, उस पर अच्छी तरहसे घास ढक कर झट अपने कमरेमें चली गई !

आध घंटेके बाद येका येक चिल्ला कर बोली कि-हाय हाय ! यहां पलंग पर अभी मैं रुपयोंकी थैली रखके गई हूं वह न जाने कौन ले गया ? घरकी तमाम औरतें इकठी होगई !

माया- (सबसे) " विश्वंभर " के सिवाय अभी तक मेरी कोठडीमें कोई नहीं आया ! बस ! मुझे तो लगता है कि, ये उसीका काम है ? (अपने लडके " श्रीनाथ " से) अरे जारे ! जल्दी अपने तायाको बुलाला !

श्रीनाथ- (बैठकमें जाकर " बंशगोपाल " से) तायाजी ! अंदर चलो जल्दी ! मेरी अम्मा बुलाती है !

बंशगोपाल- क्यों ऐसा घबराया हुआ क्यों बोलता है ?

श्रीनाथ-बब्बू भाई रुपये लेकर भाग गया !

बंशगोपाल-हैं ! (जल्दी जल्दी आकर औरतोंमें खडीहुई " माया " से) क्या हुआ ?

माया- (कुछ सिरका कपडा नीचा करके) हुआ ! करमका दलिया ! अभी जो बारा सौ रुपए तुम मुझे देकर गये थे वो " विश्वंभर " अंदर आकर बाहर गया है, रुपया है नहीं ! इस छोकरेने तो मेरा जी ले डाला !

जल्दी तलाश करो नहीं तो जुएमें हार आवेगा, मुझेतो अब आशा नहीं कि, रुपया मिल जाय ! (यह

सुनतेही " वंशगोपाल " कपड़े पहन कर जलदी जलदी " विश्वभर " की तलाशके लिये " युगलकिशोर " के घरकी तरफ गये ! " जयतिसहाय " भी अपने दो लड़कोंको लेकर ढूढने निकले ! इधर घरमें " माया " ने रोना और फैल मचाना शुरु कर दिया ! यह कार्र-वाई देख कर—

लीला– (अपने मनही मनमें) हाय ! हाय ! इसने यह जाल रचकर विचारे " विश्वभर " को दुःखमें डालनेका साहस किया है ! मै क्या करू ? किससे कहू ? निर्दोष भाईको कलंकसे कैसे बचाऊ ? अगर इसके छिपाये हुए रुपयोंका भेद मै प्रगट करदू तो यह मेरी वैरन बन जायगी ! अगर ऐसाभी करू तो कहीं उलटा यही न हो जाय कि, यह " विश्वंभर " ही छिपागया है ! कोई ऐसा उपाय करू जिससे भाई, निर्दोष हो जाय और इसको अपने कियेका फल मिले !

(इत्यादि विचार करके कुछ मनमें धीरज लाकर) अच्छा जो होना होगा सो होगा ! मगर अब इस रुपयोंको तो ठिकाने लगाऊ ! यहभी अपने मनमें क्या समझे गी कि, हा ! मेरा भी चोटला पकड़ने वाली दुनि-यामें बहुत हैं !

यह विचार कर धीरेसे अपनी माकी नजर बचाकर झट बाहर निकल गई और तबेलेमें जहा " माया "

ने रुपयोंकी थैली छिपाई थी धीरेसे निकाल कर आने लगी ! इतनेमें " लीला " के पैरोका आहट हानेसे)

सहीस- (नींदमेंसे चौंक कर) कौन ?

लीला-मै हुं !

सहीस- (चार पाईसे उठकर) कौन, बाईजी ! क्यों तुम इस वक्त ?

लीला-श्यामको छतके बनेर पर मैनें अपना पहरन सुकाया था, वह उडकर यहा आपड़ा था सो लेने आई हू ! क्यों शहरमे दिवाली देखने नही गया ?

सहीस-जी ! गया था, देख आया ! बाईजी ! अभी घरमेंसे मुझे किसीकी रोनेकी आवाज आइ थी ! क्या था ?

लीला-वो तो " माया " के रानेकी आवाज होगी !

सहीस- क्यों ? आज बरस दिनके त्योहारको रोना ! सुख तो है ?

लीला-" विश्वभर" बारा सौ रुपये लेकर कहीं भाग गया !

सहीस-अजी नहीं ! " विश्वंभर " एसा करे, यह मै तो कभी न मानू !

लीला- (सहीसके नजदीकमें जाकर धीरेसे) अगर " विश्वंभर " के लिये तेरा ऐसा विश्वास है तो तू मेरा एक कहना मानेगा ?

सहीस–बेशक मानूगा, अगर उसमें कुछ नुकशान न मालूम होगा तो !

लीला–नहीं नुकशान जराभी नहीं ! बलकि तुझे फायदा होगा ! मगर जो मै कहु उसे करनेका वचन दे ! तो !

महीस– (अपने मनही मनमें) ह ! यह लडकी क्या कहना चाहती है ? इस वक्त रातके दश बज चुके हैं, यह कभी दिनमें मुझसे बात नहीं करती थी तो इस वक्त कैसे ? अगर इस वक्त कोई मुझे इसके साथ बात करते देखले तो मेरातो ठिकानाही लगजावे ! खैर सुनू तो सही कि क्या कहती है– (प्रगट) मै आपका निमक खाता हु, क्यों न आपका कहना करूगा ? (यह सहीस इनके यहा " शारदाचद्र " के मरनेसे भी १५ वर्ष पहलेका पुराना और विश्वासू नौकर था. और यह लडकी " लीला " अपने नाना जो गुडगावके जिलेमें डिपटी थे उनके यहा रहनेसे अच्छी तरह शिक्षा मिलनेसे पढी लिखी और बडी होशियार थी ! इसके नानाने इसकी मगनी एक ऐसे सुशिक्षित लडकेके साथ की हुईथी जो अभी बीए क्लासमें इलाहबाद पढता था ! विवाह करनेके लिये मा बाप बहुतही चट पटाते थे कि चौदा वर्षकी लडकी अबतक घरमे कुमारी रहे यह बात अच्छी नहीं ! मगर डिपटी साहबके सामने किसीकी पेश न चल सकती थी ! और नाही लडके वालोंको यह बात

मंजुर थी ! घरमें " लीला " का लोगों पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ गया था कि, इसके सामने एकदम बोलने को किसीकी हिम्मत न पडती थी तो बिचारे सहीसके मनमें ऐसा विचार आना सहजही था.)

लीला– (सहीससे बिलकुल नजदीकमें होकर तु कसम खा कि, यह बात घरमें किसीसे न कहुंगा !

सहीस–मुझे क्या जरूरत है ?

लीला–देख ! विश्वास घात करनेके समान दुनियामें दूसरा पाप नही ! याद रखना !

सहीस–मेरी जान जायगी मगर आपकी बात बाहर न जायगी ! जो कहना है कहिये !

लीला– (रुपयोंकी थैली देकर, कुल हाल " माया " का कह कर) तु यह रुपया " रायसाहब " को जैसे बने वैसे अभी दे आ ! और मेरा नाम लेकर कहना कि, " लीला " ने कहा है कि, आपको जैसा ठीक लगे वैसा करें ! मगर भाईको " माया " के दिये हुये कलंकसे छुडावें ! बहेतर हो कि, अगर " ज्योतिश्चद्र " भाई मुझे सुबह छ बजे जगन्नाथजीके मदरमें मिल जावे तो मैं कुल हाल उससे कह दूं ! और आपने जो विचार किया हो वह " ज्योतिषभाई " द्वारा मुझे मालूम हो जावे !

सहीस- (यह कुल वारदात सुन कर) अच्छा मैं जाता हू, मगर " विश्वभर " की तलाशके लिये दौड धूममें कहीं मुझे रातको बग्गी जोडनेके लिये किसीने आवाज दी तो ?

लीला-अब तु इस बातकी चिंता मत कर और जल्दी जा ! (इतना कहकर " लीला " तो घरमें चली गई और सहीस वह रुपयोंकी थैली लिये हुए मनमें अनेक प्रकारके तरंगोंके घोडे दौडाता हुआ " रायसाहब " की कोठी पर जा हाजर हुआ !)

सहीस- (ड्योढी पर एक सिपाहीसे) मुझे "रायसाहब" से मिलना है !

सिपाही-(सामने घडी देख कर) ग्यारा बज गये हैं अब तो मिलना मुशकिल है !

सहीस- मुझे बडा जरूरी काम है ! (रुपयोंकी थैली कंदेपरसे उतार कर बगलमें लेता हुआ)

सिपाही- (रुपयोंकी आवाज सुनकर) क्या नाम है तेरा ?

सहीस-मेरे नामकी क्या जरूरत है ? तुम इतनी खबर कर दो कि ' विश्वंभर " के यहासे एक आदमी आया है.

सिपाही- (ऊपर जाकर "ज्योतिश्चन्द्र" पढ़ रहाथा उससे) हजूर ! " विश्वभर " के यहासे एक आदमी आया है.

इतना कह कर आप अंदर चले गये और आदमीने उनके कहनेको रायसाहबसे जा सुनाया.

इधर रातके दो बजे तक " वंशगोपाल " वगैरहने " विश्वंभर " को सारे ढूंढ मारा ! मगर कहीं पता न लगा ! पतातो जब लगता जो " विश्वभर " घरके गा इर गया होता ! " विश्वभर " तो अपनी मां के दिये हुए इलजाम की आवाज कानमें पडते ही चुपचाप छतकी ममटी पर चढ़कर सारी कार्रवाई देखता और कानोसे सुनता हुआ सो गया था. गरज सुबह होते ही एक पुलिसके सिपाहीने दरवाजेपर आवाज दी कि— पंडित वंशगोपालजी !

वंशगोपाल– (बाहर आकर) क्यों भाई ! क्या है ?

सिपाही–आपको कोतवाल साहब बुलाते है !

वंशगोपाल–क्यों ?

सिपाही–मुझे क्या खबर कि क्यों ?

वंशगोपाल– (उदास हुआ हुआ अंदर जाकर अपने वड़े भाइ " जयतिसहाय " से) भाई ! मै तो जाता हूं, तुम " युगलकिशोर " को लेकर जल्दी पहुचो ! (इतना कहकर उस सिपाहीके साथ कोतवालीमें पहुचे तो कोतवाल साहबने " वशगो-पाल " को अपने पास बिठाकर)

कोतवाल– (वंशगोपालको देखते हुए चुप चाप बैठे है)

वंशगोपाल–आपने मुझे याद किया, फरमाइये क्या हुकम है ?

कोतवाल–मै ने सुना है कि " विश्वभर " बारा सो रुपये लेकर कल रातको भाग गया है ! क्या यह बात सच है ?

वंशगोपाल–हजूर ! बारा सौ रुपया तो जरूर गया, मगर अभी यह नही मालुम कि " विश्वभर " ही लेगया है या और कोई ! लेकिन अभी तक " विश्वभर " का भी पता नहीं लगा !

कोतवाल–तुमने अपने घर चोरी हो जानेकी पुलिसमें इत्तला दी ?

वंशगोपाल–जी नहीं !

कोतवाल–क्यों ?

वंशगोपाल–जब तक कि " विश्वभर " न मिल ले !

कोतवाल–अगर मिल जावे तो ऐसे चोरको तुम घरमें रखोंगे तो सरकारके गुन्हेगार न होगे ?

(वंशगोपाल कोतवाल साहबको बोलते हुए मुसकराते देख कर कुछ विचारमें पडा. इतनेमें कोतवाल साहब फिर) पंडितजी ! आपके भतीजेको " रायसाहब " ने चोरी करना सिखा दिया ! मुझे अच्छी तरह

मालूम है कि, वह ऐसेही आदमी है ! आपकी लायकी कातो कुछ पार नहीं ! उस " विश्वंभर " परतो आप लोगोंने बड़ी ही जिगर तोड मेहनत कीथी कि, यह पशुही बने ! मगर देखो " रायसाहव " की कैसी वे समझी कि उन्होंने उसे पशु बनानेके बदले मनुष्य बनानेका तन, मन और धनसे प्रयत्न किया ! यह उनकी कितनी बड़ी भूल ! खैर जो होना था सो हुआ ! मगर अब आप यह कहिये कि " विश्वंभर " को मिलने पर क्या किया जावे ? (कोतवाल साहबके) इस व्यंग भरे कथनको सुन कर पंडितजी बड़ेही तअज्जुबमें पड़गये !)

वंशगोपाल–हजूर ! आपकी बात सुन कर मेरा दिल कांपता है ! आप न जाने क्या फरमाते है ?

कोतवाल– (एक दम क्रोधमें आकर अपने दोनो हाथ मेज पर पछाडते हुए) अरे दिल क्या कांपता है अभी सब कुछ कांपेगा जरा ठहरो ! दिखाता हूं तमाशा !

(इधर " ज्योतिश्चंद्र " सुबह उठतेही जगन्नाथजीके मंदिरमें " लीला " से मिला और कुल कार्रवाई जो कुछ रातमें बनी थी सब सुनी, विशेषमें " लीला " ने यह भी कहा कि " विश्वभर " घरमें ही है मगर मेरे सिवाय किसीको खबर नही है, क्यों कि मुझे भी अभी आते हुए इशारासे उसीने कहा कि, मै घरमें हु ! " लीला " तो अपने घर चली गई और "ज्योतिश्चद्र"

कोतवाल साहबके यहा पहुंचा. " वशगोपाल " पर कोतवाल साहब तेज हो रहे थे ! इतनेमें—

ज्योतिश्चंद्र– (आगे बढकर कोतवाल साहबसे) जनाव ! आदाव अरज !

कोतवाल–साहब ! आदाव ! आईये (कुरसी तरफ हाथ करके) बैठिये !

ज्योतिश्चंद्र– (बैठते बैठते वशगोपालसे) पडिनजी ! आप सुवही सुवह यहा कैसे ?

कोतवाल– (ज्योतिश्चंद्रसे) वाह साहब क्या आपको नही मालूम कि, आपका मित्र (इनका भतीजा "विश्वभर") रातको बारा सौ रुपये लेकर भाग गया ! ये उसकी रिपोर्ट लिखाने आये है !

ज्योतिश्चंद्र– (चमक कर, है ! ऐसा ? " विश्वभर " बारा सौ रुपये लेकर भाग गया ? जबी वो सारी रात अपने घरसे बाहर नहीं निकला !

कोतवाल– (आश्चर्य पूर्वक) अच्छा ! वो अपने घरमें है ? यह तो कहते है सारेही ढूढ मारा कहीं पता नही मिला !

ज्योतिश्चंद्र–हजूर ! इन्होंने घरके बाहर ही ढूढा अगर अंदर ढूंढते पताभी लगता और रुपया भी मिलना ! अबतो वो जुएमें हार गया अब मिलेगा कैसे ?

(यह सुन करतो " वंशगोपाल " और भी ज्यादा चकराये, कि यह क्या ? इतनेमें " जयंतिसहाय " " युगलकिशोर " वकील (विश्वंभरके मामा) को लेकर आए, उनको देखते ही " ज्योतिश्चंद्र " झट आगे जाकर " युगलकिशोर " का हाथ पकड़ किनारे लेगया और " लीला " से जो वात सुनी थी वह सब कह सुनाई. यह सुनकर तो " युगलकिशोर " के क्रोधका पार न रहा, उसी वक्त कोतवाल साहवसे सलाम करके पीछे चल दिये, " युगलकिशोर " को जाते देख)

कोतवाल–क्यों ? क्यों ? वकील साहव ! आए और चले ! कुछ काम है ? जरा सुनो तो सही ! (युगलकिशोर लौट कर चुपचाप खां साहवके सामने एक कुरसी पर बैठ गये.) (कोतवाल साहव उठकर " जयंतिसहाय " से) पंडितजी ! मैं तुम्हारे मकान पर चलना चाहताहूं !

जयंतिसहाय–हजूरकी वड़ी मेहर वानी ! मगर एक अरज है कि आप हमारी इज्जतके तरफ ख्याल कीजिये ! मैं ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता ! " ज्योतिश्चंद्र " को यहा आये देख कर मालूम होता है कि कुछ विशेष गरवड है (युगलकिशोरसे) क्यों भाई ! सच कहो " ज्योतिश्चंद्र " ने आपको क्या भराया ?

युगलकिशोर– (क्रोध पूर्वक) भराया तुम्हारा सिर ! वस ! मैं नहीं जानता, तुम जानो और कोतवाल साहव जाने !

मैं तो अपने घर जाता हूं ! (उठते हुएको हाथसे पकड कर)

कोतवाल–नही ! आपको मेरे साथ चलना होगा (एक सिपाहीसे) अरे सुन्दर सिंह ! लो यह रुपयोंकी थैली (मेज परसे थैली, जो " वशगोपाल " के आनेसे रुमालके साथ ढांक दी थी, उठा कर) और मेरे साथ चलो ! (जयंतिसहायसे) पडितजी ! चलिये पहले आपके घरसे चोरको गिरफ्तार करू ! (जयंतिसहाय वह रुपयोंकी थैली देख कर तो बहुतही घबडाये ! " वशगोपाल " के कानके साथ मं लगा कर पूछने लगे कि, अरे यह क्या बात है ? " वशगोपाल " ने धीरेसे कोतवालके कह हुए वाक्य सुनादिये ! इतनेमें कोतवाल साहब अंदर जाकर सिरपर साफा रख कर बाहर आये और चलने लगे)

जयंतिसहाय– (कोतवाल साहबके आगे होकर बडी अधीनगीके साथ) हजूर ! हमारी इज्जतकी तरफ ख्याल कीजियेगा ! यह रुपयोंकी थैली आपके पास देख मैं हैरान हू कि, यह क्या माजरा है ?

कोतवाल– (हाथसे हटाकर) आप चलिये तो सही अपने मकानपर सबही मालूम हो जायगा !

जयंतिसहाय– (हाथ जोडकर) नहीं हजूर !

कोतवाल–बस ! यहा ज्यादा चीं चां पीं पीं मतकरो !

(सबके सब मकान पर आये उस वक्त कोतवाल साहबको आया देख गलीके सब लोग इकट्ठे होगये! मगर कोतवाल साहब एकदम चुपचाप सीधे अंदर चले गये और " जयंतिसहाय " से बोले) पंडितजी! आपका भतीजा " विश्वंभर " घरमे नहीं है?

जयंतिसहाय-हजूर! घरमें तो तलाश नहीं किया (घरमें कोतवालके आनेसे औरतें सब एक कमरेमे चली गई और कोतवाल साहब एक कुरसी पर बैठ गये. इतनेमें उपरसे उतर कर " विश्वंभर " कोतवाल साहबको सलाम करके आगे आ खडा हुआ ! सिपाहीके हाथमें वही रुपयोंकी थैली देख कर " माया " की छाती धडकन लगी और " लीला " मुसकराई! घरके सब लोग घबडा गये कि, अब क्या होगा ? " विश्वंभर " का हाथ पकड कर)

कोतवाल- (जयंतिसहायसे) लो ! कहिये ! चोरतो घरमें ही निकला ! तुम युंही शहरमें ढुढते फिरे ! खैर अब मै तुमसे इतना ही पूछना चाहता हू कि, क्या मै तुम्हारी भोजाई " विश्वभर " की मांसे कुछ पूछ सकता हूं ?

जयंतिसहाय-खुशीसे !

कोतवाल-कहा है ?

जयतिसहाय– (सामने दालानमें खडी हुई " माया " से) तुमसे कोतवाल साहब कुछ पूछना चाहते हैं सो जो पूछे उसका जवाब देना !

माया– (कांपती हुई) मेरेसे क्या पूछना है ?

जयतिसहाय–तुम इतना घबडाती क्यों हो ? जो पूछे उसका जवाब देना !

माया– (मनमें) हाय ! हाय ! यह क्या आफत है ? ये रुपये इनको कैसे मिले ?

(जयंतिसहायके कहनेसे सब औरतें दूसरे दालानमें चली गई और " माया " कांपती हुई एक तरफ बैठी तो आगे जाकर एक पीढी पर बैठते हुए)

कोतवाल– (मायासे) बहन ! देखो तुम सच सच कहदो कि, रुपया " विश्भंभर " को ले जाते तुमने देखा ?

माया–नहीं !

कोतवाल–तो तुमने उसका नाम कसे लिया ? बहन ! देखो मैं कसम खाके कहता हू कि जो तुम सच सच बात कहदो तो अच्छी बात है वरना मुझे सब मालूम है जो कुछभी तुमने कारस्तानी की है ! देखो ! इस वक्त तो सिर्फ मेंही जानता हू वरना पीछे सब लोग जानेंगे तो उसमें तुम्हें कितना नीचा देखना पडेगा !

तुम्हे अपने बेटेकी कसम खानेकी नौबत न आवे तो अच्छी बात है ! कहो ! जिस वक्त तुम तबेलेमें रुपये छिपाने गई थीं उस वक्त तुमने किसी आदमीको नहीं देखा ?

माया- (यह सुनते ही आंखोंमें आंसू भरके घूंघटको जरा सा ऊंचा करके कोतवालकी तर्फ) यह आपने क्या कहा ?

कोतवाल-जो तुमने किया सो कहा ! क्यों क्या इसमें झूठ है ? याद रखो ! मेरे सामने फरेब न चलेगा !

माया- (साहस धरके) फिर जब आप जानते है तो मुझसे क्या पूछते हैं ?

कोतवाल-मै पूछता हुं कि, रुपया तबेलेमें किसने छिपाया ?

माया- " माया " ने !

कोतवाल-क्यों ?

माया-हजम करनेको !

कोतवाल-फिर हजम हो गया ?

माया-हो कैसे ? बिना नसीब !

कोतवाल- (खडे होकर) देखो ! मै सिर्फ तुम्हारे मूंसे यह बात कबूल कराना चाहता था सो जो सच बात थी वह निकल आई इस वक्त अगर मैं चाहु तो तुम्हे सीधा

हवालातमें भेजवा सकता हुं मगर जब मुझे इस घरकी आवरूका ख्याल आता है तो मुझे तुमको इतनीही सजासे छुट्टी देनी पडती है कि, अब इस लडकेके लिये आगेको कभी ऐसी तौमत न लगाना !

(कोतवाल साहब तो " माया " के साथ बात कर रहे थे इतनेमें इधर " युगलकिशोर " की "वशगापाल" के साथ अबे तबे पर नौबत आगई, और "युगलकिशोर" ने एकदम हडा फोड दिया ! " माया " की करतूत सबको मालूम होगई ! मगर इस बातको सुन कर कोतवाल साहब बडेही नाराज हुए ! आखर " जयंतिसहाय " को जो कुछ कहना था वो कह कर कोतवाल साहब चले गये और युगलकिशोर " " विश्वभर " को साथ लेकर अपने यहां चले गये ! घरमे पीछे बडीही गडबड मची परतु यह किसीको नही मालूम हुआ कि रुपया तबेलेमेसे कोतवाल साहबके पास कैसे पहुचा ! " माया " ने दो रोज तक इस दुःखसे कुछ खाया नहीं ! अतमें जब " विश्वंभर " को यह खबर लगी तो वो फिर घर आया और अपनी माको आकर मनाया और अपनी सौगद दिलाकर खानेको खिलाया ! पांच सात दिनके बाद सबही इस बातको भूल गये मगर " माया " के अंदर " विश्वभर " पर अधिकस अधिक इर्षा बढता गई जिसके कारण घरमें हमेशा क्लेश-कंकास रहने लगा

" विश्वंभर " चाहता था, कि मैं अपनी इस मतेई (मां) का जो मारग है वह निष्कंटक करदूं, मुझे अपने पिताकी संपत्तिके दो हिस्से करने बिलकुल मंजूर नहीं ! भले इस जायदातका मालिक " श्रीनाथ " ही क्यों न बने ! मैं लिख दूं कि मेरा कुछभी हक नहीं परंतु " माया " को शान्ति हो ! लेकिन " विश्वभर " के इन निष्कपट सत्य विचारोंको " माया " के हृदयमें हजारहा मेहनत करने परभी कोई सीधा बिठाने वाला न था !

" माया " के मनमें तो हमेशा यही विचार रहताथा कि, अब यह " विश्वंभर " दो सालमें बालिग (अठारा सालका) हो खुद मुखत्यार बन जायगा मेरे पतिके स्टेटका मालिक ये होगा ! तब मेरा " श्रीनाथ " किस गिनतीमें ? ट्रस्टी लोगभी इसीका पक्ष और इसकी तारीफ करते है ! इस खोटे विचारोंने "माया" के मनको मलीन कर " माया " नाम सार्थक कर दिया !

" माया " ने " विश्वभर " के लिये एक भीषण काड रचा जिसमें " माया " को सकुटुब निरादरीसे बाहर होना पड़ा !

इस समय " विश्वंभर " की मनशा अपनी मा (माया) को सुखी करनेकी पूरी हुई ! " विश्वंभर " इतने दुःख सहते हुएभी घरमें क्यों रहा, वह कारण आज

नाश होगया ! "विश्वभर" का कोमल हृदय "माया" के भीपणकाडसे चूरचूर हो जानेके वदले वज्र जैसा वन गया इसका कारण " अव मै मा (माया) के दुःख का अंत ला चुका " इस वातकी खुशी ! " पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्तिका आनद ! इससे परे और क्या चाहिये ? " विश्वभर " आज आखीरी घरसे विदा होता है, माघका महीना, कमरमें एक धोती, शरीर पर कमीज, वस इन तीन चीजोंके सिवाय पास कुछ नहीं,

कॅप अंबालेके स्टेशनके वाहर जाकर एक हलवाईकी भट्टीके सामने आग सेकने वैठ गया ! उस वक्त मारे शरदीके सारा शरीर थर थर कापता था, रमटे खडे हो रहे थे, होठ नीले पडगये थे, सारी रातकी हवाने रेलमें परेशान कर दिया था ! वस दशबजे धूपकी तेजीने भी जोर पकडा कि " विश्वभर " ने अवाला छावनीका रास्ता लिया ! और वाजारमें पहुंचा कि, एक मकान वडे वडे झडों और वदरवालोंसे सजाया हुआ उसने देखा, दरवाजे पर वेंड वाजा वजरहा था, उपरके भागमें मोटे मोटे अक्षरोंमें " वैलकम् " लिखा हुआ था, वहा पर खडे होकर " विश्वभर " ने एक दुकानदारसे पछा कि, क्यों भाई ! यहा क्या है ?

दुकानदार–यहा है ! दयानन्दियोंका स्यापा !

विश्वंभर–वह दयानन्दी कौन ? (विश्वंभरको किसीभी धर्मका पता नथा, मजहब किसे कहते है और इस वक्त कौन २ मजहब तेजी पर हैं और वह क्या किया करते है और क्या मानते हैं ? हां इतना जानता था कि, एक सनातन धर्म सभा है, रामलीला भी एक धर्म है, मथरामें जो रास वगैरह देखी थी इससे रासलीलाभी एक धर्म है, मुसलमान ताजिये निकालते हैं यह भी एक धर्म है, ईसाइयोंको घंटा घरके नीचे स्पीच देते देखा था इससे, यह ईसाइ है इतना ही जानता था ! दयानन्दका तो इसने कभी नाम भी नहीं सुना था, सुनना कहासे था इसके जनमसे पहले ही स्वामीजी डेरा कूच कर गये थे ! उस आदमीके कहनेको " विश्वभर " ने समझा कि, कोई दयानंदी बुड्ढा मरगया उसका स्यापा है ! इस लिये उस आदमीसे फिर पूछा) और कब निकलेगा ? क्या बहुत बूढा था ?

दुकानदार– (यह दुकानदार शायद सनातन धर्मी हो) भाई ! तुम क्या समझे ?

विश्वंभर–तुमने यही कहा कि, यहां है दयानन्दियोंका स्यापा ! इसका मतलब मै तो यह समझा कि कोई मरगया है उसका विमान विमुन निकलने वाला है !

दुकानदार– (हँसकर) वाह भाई वाह ! जरा अंदर जा कर देखो ! किसीको अंदर जानेकी रुकावट नहीं है !

(धीरे धीरे अंदर जाकर देखा तो चौकमें एक अग्नि कुंड जलरहा है, कितनेक आदमी पत्रे हाथमें लिये वहुतसी चीजोंको हिला मिला रहे हैं और एक जाजिम पर अच्छे अच्छे ३०-३५ सफेद पास जेन्टिल मेन बैठे हैं उनको देखकर खडा होगया ! इतनेम उनमेसे एक महाशयने " विश्वंभर " को किनारे खडा देखकर अपने पास बुला कर पूछा कि, क्यों क्या देखते हो ?)

विश्वभर-जो कुछ कि आप करते हैं !

महाशय-तुम्हारा नाम ?

विश्वभर-आपको क्या काम ?

महाशय-क्या नाम वतलानेमें भी डर है ?

विश्वभर-विना किसी जरूरतके ?

महाशय-तुम यहांके तो मालूम नहीं देते ?

विश्वभर-इससे आपको क्या ?

महाशय-अच्छा भाई ! बैठो ! यहा यज्ञ होता है देखो !

(विश्वभर उन लोगोके बीचमें बैठ गया कि, थोडी सी देरमें बहुतसे लोग इकट्ठे होगये और हवन शुरू हुआ हवनकी समाप्तिमें एक जन्टिलमनने खडे होकर, खूब ऊचे नीचे हाथ मारते हुए आध घंटे तक लेक्चर दिया, बादमें उठकर सब चले गये ! यह हवन होनेका

कारण एक समाजीके लडकेके विवाहमें तीन दिन रहतेथे. जब सब लोग उठ २ कर चले गये तो एक कुरसी पर अंगरेजी पोशाकमे बैठे हुए एक बाबूजीसे)

विश्वंभर–Ple۰se I do not ask anything from you but I lete you this much " I am mungry "

बाबू–भाई ! मै अगरेजी नही जानता !

विश्वभर–जनाब ! मै आपसे कुछ मागता नहीं हू मगर इतना ही कहता हूं कि, मुझे भूख लग रही है !

(बाबूने " विश्वभर " को अपने पास बिठा कर सब बात पूछी, मगर " विश्वभर " ने सिवाय घरसे भाग आनेके एक भी बात सत्य न कही ! उसने अपने लडकेसे कहा कि, इन्हे घर ले जाकर अच्छी तरह रोटी खिला लाओ ! उसने " विश्वभर " को घर ले जाकर विवाहकी मिठाई लाकर खानेको दी और साथही वापस ले आया ! उस रोज " विश्वंभर " ने वह रात वहाही काटी और अगले दिन स्टेशन पर आ, फिर गाडीमे बैठ जालधर जा उतरा ! उस वक्त रातके दश बजे थे, मुसाफर खानेमे आकर सोना चाहा था मगर सिपाहीने कहा कि, जाओ सरायमें, यहांपर इस वक्त कोई मुसाफर दिखता है ? उस वक्त " विश्वभर " सरदीके मारे बडाही तग हो रहा था ! मनमें विचारने लगा कि, सरांय वाला तो विना पैसे सोने न देगा. और कहीका

ठिकाना नहीं मालुम ! क्या करूं ? ऐसा विचार कर सीधा पूछता पूछता कोतवालीके अंदर जाने लगा तो दरवाजे पर खडा हुआ)

सिपाही–ए ! कहा ?

विश्वभर–भाई ! मैं अदर कोतवाल या दरोगासे मिलना चाहता हुं ! (इतना कहता हुआ अंदर जाकर जहा कोतवाल साहब दो चार आदमियोंसे बैठे बातें कर रहे थे वहा जा खडा हुआ)

कोतवाल– (विश्वंभरको देख कर) क्यों भाई ! क्या है ?

विश्वंभर–है क्या देख लीजीये ! सरदीके मारे दांत बज रहे है ! आवाज नहीं निकलती ! इस लिये यहा कोई कोठडी हो तो रात सो जानेके लिये मेहरबानी कीजीये क्यों कि सरायमें जाऊ तो एक पैसा चाहिये सो पास कौडीभी नहीं ! अगर बाजारमें किसीकी दुकानके आगे पड रहूं तो आपके सिपाही चोर समझ कर और भी मुसीबतमें डालें तो फिर क्या बने ?

कोतवाल– (विश्वभरके कहनेको सुनकर बडे रहमके साथ) अच्छा वह सामने कोठडी है उसमें सो जाओ ! और सुबह तुमने अपना कुल नाम ठाम हमको बतलाना !

(एक सिपाहीसे) भाई! इसको अंदरसे दो तीन बरान् कोट (कंबलके ओवर कोट) निकाल दे! एक नीचे बिछा लेगा और दो ओढ़ लेगा! (सिपाहीने उसी वक्त निकाल दिये और एक कोठडी खोल दी जिसमें घास बिछा हुआ था उसमें बड़े आरामसे सारी रात सो रहा, जब सुबहके वक्त उठा तो कोतवाल साहबने अपने पास बुलाकर पूछा कि, क्या नाम है? कहासे आये और कहां जाना है?

विश्वभर– (साफर) मैं भाग कर आया हू और मेरे साथ यह यह बीतक बीता है, मगर मैं अपने गामका नाम और मा बापका नाम तो हरगिज भी न बताऊ गा! आपकी मेहरबानीसे मैने रात बड़े आरामसे निकाली, अब आपसे रजा लेता हूं!

कोतवाल–अरे भाई! इस तरह तुम क्या करोगे? कपडा तुम्हारे पास नहीं, सरदी कसरतसे पड रही है! खाओगे क्या? पैसा भी पासमे नहीं है! परदेशका मामला किसीसे जान पहचान भी नहीं है!

विश्वंभर–आपसे तो जान पहचान हो चुकी है! अब कुछ न कुछ ठिकाना लग जायगा!

कोतवाल–अगर मेरा कहा मानो तो अपने घर चले जाओ! वरना दुःख पाओगे!

विश्वभर–अगर दुःखसे डरता तो घरसे क्यों निकलता?

कोतवाल–क्या कुछ पढे हो ?

विश्वभर–नहीं जैसाही ! वो भी तीन सालसे किताब नहीं देखी !

कोतवाल–भला फिरभी ?

विश्वभर–सिक्स क्लास तक इंगलिश, लेकिन लेङ्ग्वेज हिन्दी !

कोतवाल–अच्छा ! मेरे एक दोस्त फोरस्ट ओफिसर आये हुए है मैं उनसे जिकर करूगा, लेकिन वो आर्यसमाजी है ! वो जरुर तुमको किसी न किसी जगह लगा देवेगे ! आज तो तुमने मेरे घर रोटी खा लेनी, दुपहरको उनसे मिला दूगा !

विश्वभर–(हँसकर) क्यों साहब ? अभी तो आप मुझसे पूछते थे कि, पास पैसा नहीं खाओगे क्या ? सो मेहरबान मेरी तकदीरही आपके पास मुझे ले आई है जो खाना पीना देनेको एक दीनका तो क्या जिन्दगीका बन्दोबस्त करनेके लिये आप तरद्दत करते है !

(दश बजे " विश्वंभर " कोतवाल साहबके घर रोटी खा शहरमें फिरता हुआ एक " नयनानन्द " को अपने मकानके चबूतरे पर बैठे हुए देख कर)

भोलानाथ–(नयनानदसे) नमस्ते साहब !

नयनानन्द–नमस्ते ! नमस्ते ! आईए ! बैठिए !

लेख इस्तेहमालमें न लाया जावेगा तो फिर किस वक्त ?

भोलानाथ–माईडियर मिस्टर ! सच बात तो यह है कि, आज कलका जमाना कुछ ऐसा नाजुक आगया है कि, किसी पर विश्वास नहीं आता ! क्यों कि कई एक ऐसी वारदाते वन चुकी है कि, ईमानदार समझ कर अमानत रखो मगर आखीरमें अच्छी चीज देख, मोहित हो बेई-मान वन जवाब दे देते हैं ! इस लिये मेरा दिल आज्ञा देते हुए झिझकता है ! हां अगर आप किसी ईमानदार शख्सको अपनी जमानत पर तलाश कर देवे तो बेहतर है ! मेरी तकदीरमें तो दुःख लिखा है मगर वो विचारी दुःखी क्यों होवे ?

नयनानन्द–की औरत– (अपने पतिसे) अ–रे मा–ण–ना–थ ! आपके इन मित्रको क्या विमारी है ? (श्वास) हाय–हाय–हाय अरे राम अरे राम ! आह–आह (खौं खौं खुरर खुर्खुः) और इ–नकी स्त्री " नन्दकौर " को अभीतक इन्होंने किसीसे नियोग करनेकी आज्ञा दी है, या कि नहीं ? अ–ग–र ना–ना दी हो–हो–होवे तो मेरी तरफसे आपको इजाजत है, बेशक आप "नंदकौर" के साथ नियोग कर लीजियेगा ! हा–य–हाय–हाय मे मैं तो मरली–मरली आय रे (छाती दवाकर) खो खो मरी मरी उः ऊ—ह.

भोलानाथ– (नयनानन्दसे) ... इलाज
बडीही तकलीफ हो रही है।

चाते हो या नहीं ? इनको कितना आरसा हुआ बीमार हुए ?

नयनानन्द–अजी कुछ मत पूछो इसकाभी बहुत कुछ इलाज करालिया मगर दिनपर दिन दमा बढताही जाता है ! तीन वर्ष होनेको आए, सूककर शरीरकी देखो हड्डिया हड्डिया निकल आई है ! बैठा जाता नहीं, न दिनमें चैन, न रातको नींद ! मुझे कई दफा कहचुकी कि, तुम किसी अन्य स्त्रीसे नियोग करलो ! मगर अभीतक ऐसी कोई औरत मिली नहीं, और नाहीं मैने तलाश करनेकी कोशिस की !

भोलानाथ–भाई ! " स्वामीजी " के लिखे हुए वेद मत्रमें यह अर्थ तो निकलता है कि–" पति अपनी स्त्रीको अन्य पुरुषके साथ नियोग करनेकी आज्ञा देवे " परतु यह मेरे ध्यानमें नहीं है कि, स्त्रीभी अपने पतिको आज्ञा देवे या कि नहीं ? जरा अदरसे "सत्यार्थप्रकाश" तो लाओ ! देखू वहा क्या लिखा है ? अगर ये आपकी स्त्री आपको आज्ञा देवें तो बडी ही अच्छी बात है ! मुझे अपनी स्त्री " नदकौर " के लिये किसी दूसरे आदमीकी तलाश करनी मिटी ! आप जैसा ईमानदार (और फिर मेरे जिगरी दोस्त) दूसरा कौन मिलेगा ! इससे परे और क्या चाहिये ?

नयनानन्द– (जलदीसे) उठकर अदर गये और सन् ८७का

" सत्यार्थप्रकाश " उठा लाये और पृष्ठ ११७ निकाल कर) लीजिये !

भोलानाथ– (पूर्वोक्त मन्त्रका अर्थ जो " स्वामीजी " ने लिखा है वह पढने लगे) "जब पति सन्तानोत्पत्तिमें असमर्थ " होवे तब अपनी स्त्रीको आज्ञा देवे कि, हे सुभगे " सौभाग्यकी इच्छा करने हारी स्त्री तू (मत्) मुझसे (अन्यम्) दूसरे पतिकी (इच्छस्व) इच्छा कर ! क्यों कि " अब मुझसे संतानोत्पत्तिकी आशा मत कर परतु उस " विवाहित महाशय पतिकी सेवामें तत्पर रह. " वैसेही स्त्री भी जब रोगादि दोषोंसे ग्रस्त होकर " सन्तानोत्पत्तिमें असमर्थ होवे तब अपने पतिको " आज्ञा देवे कि, हे स्वामी ! आप सन्तानोत्पत्तिकी " इच्छा मुझसे छोडके किसी दूसरी विधवा स्त्री से " नियोग करके सन्तानोत्पति कीजिये ! "

(इत्यादि पढ़ कर नयनानन्दसे) भाई साहब ! ठीकही निकला ! यह मेरे ध्यानमें न था कि, स्त्री भी अपने पतिको रोगादि कारण अन्य स्त्रीसे नियोग करनेकी आज्ञा देवे !

नयनानंद–अच्छा तो अब आपकी क्या मनशा है ? मेरी घरवाली तो मुझे इजाजत देती है ! और मैं भी तयार हु ! अब आप फरमाईयेगा कि, आपकी " नदकौर " मेरे मकान पर आया करेगी ! या कि मेही उनके पास पहुचा करू !

भोलानाथ- (कुछ विचार करके) भाई ! इसमें ऐसा लिखा है कि " किसी दूसरी विधवा स्त्री से " सो मेरी स्त्री विधवा तो है नहीं ! फिर आप उससे नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कैसे कर सकते हो ?

नयनानंद्-तुमतो बेसमझीकी बात करते हो ! जहां पर पति अपनी स्त्रीको दूसरेसे नियोग करनेकी इजाजत देता है वहा रंडवे पुरुषसे नियोग कर, ऐसा क्यों नहीं कहा ? वहा तो साफ इतनेही अक्षर लिखे है कि, जब पति संतानोत्पत्तिमें असमर्थ होवे तब अपनी स्त्रीको आज्ञा देवे कि " हे सुभगे ! सौभाग्यकी इच्छा करने हारी स्त्री तू मुझसे दूसरे पतिकी इच्छा कर " देखो तो इसमें कहीं रंडवा शब्द आया ?

भोलानाथ- नहीं !

नयनानद- तो फिर उनके लिये नियोगी पुरुष कैसाही हो ! चाहे रंडवा, चाहे व्याहा !

भोलानाथ-अच्छा तो मै जाता हू और अपनी " नंदकौर" को कहता हूं कि, आजसे तेरे पास " नयनानदजी " आया करेंगे ! " स्वामीजी " की आज्ञानुसार उनसे नियोग करके संतानोत्पत्ति करलेना ! लेकिन उनके मुखसे यह वाक्य मै कई वार सुन चुका हू कि, आर्य महिलाओंको चाहिये कि, अग्निमें पडकर मरजाये ! मगर पर पुरुषकी मनसे भी इच्छा न करे ! जिस स्त्रीने

अपना पतिव्रत धर्म नष्ट कर शीलको मलीन किया उसके जीनेको धिक्कार है ! इस विषय पर उन्होंने एक निबंध भी लिखा है !

नयनानंद–अजी ! नही नहीं ! " नंदकौरजी " का क्या कहना है ? वो तो आर्य धर्म पर बडा प्रेम रखने वाली पूरी पतिव्रता और नेक चलन है ! असल पूछो तो आपने बडी गलती ग्वाई जो छ बरससे आजतक उनको इजाजत नहीं दी ! वरना अबतक तो दो तीन लडके हो जाते !

भोलानाथ–बेशक ! उनको आर्य धर्मही प्रीय है ! मगर पर पुरुषके साथ संभोग करके वर्णसंकर पैदा करना वो इसको आर्य धर्म थोड़ेही मानती है ?

नयनानंद–तो क्या मेरी आशा पूरी न होगी ?

भोलानाथ–मुशकिल ! (जोडा पहन कर चलते हुए) अच्छा नमस्ते !

नयनानंद–(उदास होकर) नमस्ते !

(भोलानाथ वहासे चलकर थोडीही दूर गये थे कि, इतनेमें पीछेसे आवाज देकर)

विश्वभर–(साथ साथ चलता हुआ) लालाजी साहब ! आपको यह बिमारी कबसे है ?

भोलानाथ– क्यों भाई ! तुम्हारे पुछनेका क्या मतलब ?

(उस वक्त लालाजीने " विश्वभर " को बगाली समझा था ! क्यों कि, उसका पहनवेश वैसाही था)

विश्वभर–मुझे यही मकसद है कि, आप इस बिमारीसे राजी हो जाये तो अच्छी बात है !

भोलानाथ– अच्छा तुमको मुझे विमार देखकर इतना रहम आया, क्या तुमने मेरी मर्जको पैछान लिया ?

विश्वभर–हा ठीक ठीक !

भोलानाथ–अच्छा तुम मेरे साथ मकान पर चलो !

विश्वभर–बेशक चलिये ! मगर आप जानते हैं कि, मै परदेशी हू, न आप मुझे जाने और न मै आपको ! और फिर उमर भी मेरी आपको लडकपन की नजर आती है इस लिये मेरी बातपर आपको परतीत आना भी मुशकिल है, मगर इतना तो मैं दावेके साथ कहता हू कि, आपने इस बिमारीके इलाजमे सैकडोंही रुपये खो दिये होंगे ! लेकिन मैंने तो आपसे न कुछ लेना है और नाही मुझे किसी चीजका लोभ है ! अगर मेरी बात पर यकीन हो तो बिना कोडी खरचके मै एक दृश्यकी पाच चीजें बतलाता हू उसका आप सेवन करें ! अगर न आराम होगा तो आपका कुछ बिगाड भी न होगा ! आराम होने पर जो आपकी मरजीमे आवे सो गरीब

गुरवोंको बांट देना ! इतने परभी कदाचित् आपको नुकशान हो तो मे हाजिर हूं ! राज ब्रिटिश सरकारका है ! (यह कहकर लालाजी " विश्वंभर " का हाथ पकड कर अपने मकान पर लेगये और खातिर करने लगे ! " विश्वभर " ने कहा कि–जबतक आपको मेरी दवाईसे आराम न हो वहातक मैं आपके घरका पानी पीना भी पाप समझता हूं ! आखिर अगले रोज सुबह बाहर जाकर " विश्वंभर " ने एक वृक्षकी पाचोंही चीजें ले उनको पीस पासके लालाजीसे कहा कि, लो इस दवाईका एक भाग फलां चीजके साथ खा जाओ ! लालाजी भी बहुत अच्छा कह कर उसी तरह बेधड़क हो खा गये ! एक दिन, दो दिन, तीन दिन, चौथे दिन तो लालाजी लगे " विश्वभरनाथ " की तलाशमें फिरने कि, यह दवाई क्या बतागया ? न जाने कोई बिजली ही रगडकर दे गया !

इधर " विश्वभरनाथ " को कोतवाल साहबने अपने मित्र सुप्रीन्टेन्डेन्टसे उसी दिनही मिला दिया और उन्होंने भी अपने साथ लेजानेके लिये मंजूर कर लिया मगर उन्होंने कहा कि, हम एक महीने के बाद यहासे जायेंगे वहांतक तुम हमारे यहा रहो और आनदसे रोटी खाओ ! लेकिन तनखाह वगैरह वहा चलकर मुकर्रर किये बाद (जब दफतरमें तुमको रख लेंगे तबसे) मिलेगी. तब कोतवालने उनसे कहा

कि, आपने कौनसी अपने घरसे तनख्वाह देनी है ! इस लिये जरा ख्याल रखना ! बाबू साहब बोले कि, आप जानते ही हो, महकमा जगलातका है ! इसमें आमदनी ऊपरकी ज्यादा है, तोभी इसको आठ रुपये महीनेकी जगह दे दूगा ! रहा रोटी कपडा सो मेरे यहां आगे छै आदमी हैं उनके साथ यह सातवांभी सही !

कोतवाल– (विश्वभरसे) ले भाई ! तेरी तकदीर वडी जवरदस्त निकली जो आठ रुपये महीना और रोटी कपडा साथ ! इससे परे और क्या चाहिये ? देख पुलिसके सिपाही सुके छ सात रुपयेमें गुजारा करते हे ! अव इनके पाससे कही मत जाना ! आप पाचसौ रुपये महीना पाते है ! आप वडे नेक और साफदिल आदमी है ! आपका नाम वाबु वद्री नाथजी है !

वाबूवद्रीनाथ– (विश्वंभरसे) अगर तुम मेरे लडकोंको हिन्दी लिखना पढना सिखाया करोगे और घरमें अपने " स्वामीजी" के बनाये हुए बहुतसे पुस्तक हैं वो सुनाया करोंगे और आर्य धर्म अगीकार कर लोंगे तो मै तुमको बिलकुल ही दफतरके कामसे फुरसत दे दूगा !

विश्वभर– (अपने मनही मन) इससे परे और क्या चाहिये ? (प्रगट) आपकी मेहरबानी चाहिये ! (उस वक्तसे " विश्वंभर " बाबूजीके यहा रहने लगा, इतनेमें वह मरीज–लाला भोलानाथजी " विश्वंभर " को पूछते

पूछते बाबूजीके मकान पर आकर बैठकमें बैठे हुए बाबूजीसे)

भोलानाथ– बाबुजी साहब ! आपके यहा कोई परदेशी लडका आया है वो कहा है ?

बाबूबद्रीनाथ–क्यों तुमको उससे क्या काम है ?

भोलानाथ–अजी साहब ! काम क्या है ? वह तो मेरे लिये परमेश्वरका अवतार है ! जनाब ! मैं छै सात सालसे इस बिमारीसे लाचार था ! सैकडों रुपये खर्च कर-डाले, सैकडों दवायें कर डाली, मगर मुझे कुछभी फायदा न हुआ ! इसने बिना कौडी पैसेकी दवाई न जाने क्या कोई पत्तेसे पिस पास कर दिये कि, आज पाच रोजमें ही मुझे फायदा होगया ! लालाजीकी यह बात सुन बाबूजीने " विश्वंभर " को अंदरसे बुलाया.)

विश्वभर– (लालाजीको देखकर) कहो लालाजी ! क्या हाल है ?

लालाजी– (एकदम उठ कर) साहब ! आपकी मेहरबानी गरीबपर होगई ! आपने मुझपर जो उपकार किया है उसके बदलेमें अगर मैं आपको अपना सर्वस्व भी दे दूं तो थोडा है !

विश्वभर–भाई ! इसमें मैंने कुछ क्या किया है, करने वाला तो गुरु है !

लालाजी—आप मेरे मकान पर चलो !

विश्वंभर—आपको दवाईसे काम है कि, मुझे अपने मकान पर ले चलनेसे ?

लालाजी— साहब ! दोनों ही से !

विश्वभर—आप शामको दवाई ले जाना, मकान पर आनेका भी मौका मिल जायगा तो आ जाऊगा ! (इतना कहकर " विश्वभर " बाबूसे पूछकर पहलेकी तरह उसे दवाई लाकर जब वो शामको आये तो उन्हें देकर कहा कि, इसकी चौदा खुराक कर लेना बादमें देखना क्या बनता है ! बस ! लालाजीकी बिमारीका तो उन चौदा पुडियोंसे जडामूलसे नाश होगया !)

लालाजी— (आराम हो जानेपर ७९ रुपये लेकर "विश्वभर" को देनेके लिये बाबूजीके मकान पर आये और " विश्वभर " के आगे रुपया रखकर) मैं आपको कुछ देने लायक तो नहीं हू तो भी मेरी यह अदना भेट मजूर कीजियेगा !

विश्वभर— लालाजी ! यह रुपया मेरे लिये हराम है. मैने तो तुमसे पहलेही कह दिया था. सो लेजाओ और लूले लगडे, अंधे, अपाहज गरीबोंको सबका अनाज और कपडे लेकर बांट दो !

लालाजी—आपने मुझपर जो उपकार किया है उसका बदला मै नहीं दे सकता !

विश्वंभर– भाई ! मै किसी पर क्या उपकार करने लायक हूं ! यह तो मनुष्य मात्रका धर्म है कि, वह अपनी शक्तिके मुताविक प्राणी मात्रके दुःखको दूर करनेका यत्न करें ! इसमें मैने कौनसी वहादरी की ? यह मेरा फरज था सो मैंने अदा किया ! मै यहासे वावूजीके साथ जाने वाला हू, अगर हो सके तो कभी एक पैसेके कार्डसे मुझे याद कर लेना !

लालाजी–(उठकर) अजी यह क्या कहा ? क्या अब आप मुझे सारी उमर भूल सकते हैं ? आप जहां होंगे वहा आकर आपसे मिलूगा.

(विश्वंभरके इन उदार विचारोंको देख कर बाबू " वद्रीनाथ " की " विश्वभर " पर औरभी प्रीति वढ गई ! कुछ दिनोंके वादही वे " विश्वभर " को अपने साथ काश्मीर ले गये, वहा पहुचतेही " विश्वभर " जगल पहाडोंमे फिर कर मंगल मनाने लगा ! वहुतसे ठेकेदारोंसे जान पहचान होगई, लकडीके लीलाममें उन लोगोंसे " विश्वभर " को अच्छा नफा मिलने लगा ! यह forest का महकमा वडा जर्गी था,इसमें हजारो आदमी नौकर थे, सरकारको १५–१६ लाख रुपए सालकी पैदाश होती थी, लकडेके अलावा शहत वगैरह औरभी चीजें वहुत होती थीं. नौकर लोगोंका ऊपरकी पैदाशके कारण थोडी तनख्वाहसेभी अच्छा गुजारा होता था ! रुपयेका वीस सेर पक्का दूध, दो सेर पक्का घी, अच्छेसे

अच्छा आस पासके गामोंमें मिलता था" विश्वभर " को वहांकी आबोहवा और बाबूजीकी मेहरबानीसे डेढ साल खबरभी न पडी ! बाबू " बद्रीनाथ " साहबने पहलेसे ही विचार लिया था कि, अगर मैं " विश्वभर " को महीनेके महीने तनख्वाह दे दूगा तो यह गुड़ी खा उड़ा डालेगा ! इस लिये हर महीनेकी तनख्वाह इसके नाम पर बंकमें जमा करा देते थे ! और इसको कह दियाथा कि, देख ! यह तेरा रुपया जमा है, तुझे रोटी कपडेका तो खर्च हैही नहीं ! ऊपरकी आमदनीके लिये मैं तुझे खाने खर्चनेकी रजा देता हू, मगर फिजूल खरचीसे मुझे बडी चिढ है ! इस लिये ख्याल रखना एकदमभी आजाद मत हो जाना ! और बंक मास्टरकोभी मना कर दिया कि, यह रुपया जमा कराने आवे तो जमा तो कर लेना, मगर मेरी इजाजतके विना एक पाईभी मत देना ! ये कितनाही कहे, पासबुक पर दसकत करलावे तोभी मुझे पूछे विना न देना ! लेकिन होनहार एक दिन एक रसायनी (कपटी) बाबाजी " विश्वभर " को मिलगये ! किसीसे " विश्वभर " का कुल हाल जानकर एक दिन—)

बाबाजी– (विश्वभरसे) बच्चा ! मैं तुझे ऐसी बुटी बताऊं कि, इससे सोना बनाना जानजायगा, मगर मुझे पचानवे (९५) रुपयेकी जरूरत है !

विश्वभर– (बाबाके विश्वासमें आकर बाबू " बद्रीनाथ " से) साहब ! मुझे पास बुक देदीजिये !

बाबूजी–पास बुक नहीं मिलेगी ! तुझे खरचनेको दो चार रुपये चाहिये तो मुझसे लेजा !

विश्वंभर– (जिद करके) मुझे दो चारकी जरूरत नहीं है ९५ रुपये चाहिये !

बाबूजी– मैने सुना है कि, तू एक बाबाजीके पास आता जाता है ! सो किसीके सिखे सिखायेंमें आकर नाहक क्यों रुपये खोना चाहता है ?

विश्वंभर–जनाब ! मुझे आप पासबुक दे दीजिये गा ! रुपया मेरा है, जी चाहे सो करूंगा (बाबूजीने बहुत समझाया मगर भावीको कौन टाल सकता है ? पास बुक लेकर बंकसे ९५ रुपये ले आया और बाबाजीके आगे आकर रख दिये ' बाबाजीने कितनी एक बातें हाथ चालाकीकी दिखलाई और बतलाई, मगर रसायनको बतलानेके लिये बोले कि, कलको मेरे साथ चलना ! "विश्वंभर" को विश्वास होगया था कि, यह ठीक कुछ जानते हैं और मुझे सिखा भी देंगे इस लिये शामको घर आया तो)

बाबूजी– क्यों ! सीख आया ? हमको तो बता !

विश्वभर–सीखलूंगा ! तब आपकोभी बता दूंगा !

(अगले रोज जब " विश्वभर " वहां गया और देखे तो बाबाजी पत्राही बाच गये ! बहुत कुछ तलाश

की, मगर पता न लगा ! बाबाकी इस ठग बाजीको देखकर " विश्वंभर " ने विचारा कि, और तो कुछ नहीं, मगर लोग चिढावेंगे कि, ले ! और सीख ले रसायन ! ! यह विचार कर दो दिन तक बाहर ही रहा ! तब बाबूजीको फिकर हुआ कि, कहा चलागया ? उन्होंने पुलिसके एक अपने मित्र से कुल बात कही, तब दो आदमीयोंने फिरकर " विश्वभर " का पता निकाल उसे साथ लाकर बाबूजीके सामने खडा कर दिया ! उस वक्त " विश्वभर " नीची गर्दन करके रोने लगा ! तब धमकानेके बदले प्यार दे कर)

बाबूजी—अरे ! वाहरे वाह ! उदास क्यों होता है ? तुनेही कमाये थे तूनेही देदिये ! चिन्ता क्यों करता है ? चुपकर ! जा अदर ! आगेके लिये नसीहत समझना !

(मगर " विश्वभर " को लोगोने चिढाना न छोडा दश पदरा दिनके बाद सब बात भूल भुला गई ! पहलेकी तरह " विश्वभर " आनदमें रहने लगा ! बाबूजीका ख्याल तो पक्का आर्य धर्म पर था, लेकिन उनकी स्त्री वैश्नव धर्म पालती थी ! यह दूसरे ब्याहकी थी. इगलिश और गुरमुखी पढी हुई थी, इनका स्वभाव बडाही कतुहली और हँस मुखा था ! ये दान पुण्यभी अच्छा किया करती थी, मगर बाबूजीसे छिपकर ! इनके दो लडके थे "विश्वभर" को भी अपना तीसरा पुत्रही समझती थी ! जब कभी बाबूजी फुरसतके वक्त " विश्वभर " से

" स्वामीजी " के बनाये हुए " सत्यार्थ प्रकाश " आदि ग्रंथ सुना करते थे उस वक्त आपभी पासमें बैठ जाया करती थीं, मगर पीछेसे " स्वामीजी " को बडी गालियां निकाला करती थी कि, " स्वामीजी " ने सनातन धर्मसे जुदाही क्या यह विचित्र पथ निकाला है ? हांसी हांसीमें बाबूजीको भी ताने दिया करती थी कि, अगर आप पूरे पूरे " स्वामीजी " के भगत हो तो तुम्हारी फलानी फलानी जवान रांड होकर बैठी है उसको दूसरा खसम क्यों नहीं करा देते ?

" विश्वंभर " के अंदर बाबूजीके कहनेका असर न होनेका कारण आपही थी ! क्यों कि, बाबूजीके पीछे " विश्वंभर " को यही कहा करती थीं. कि, आर्य धर्म (जो " स्वामीजी " ने निकाला है) बिलकुल वाहियात और नयाही है. सिर्फ जो जरा अंगरेजी पढे लिखे लोग हैं (और वहभी जिन्हें बचपनमें धर्मकी शिक्षा नहीं मिली) उनको मंदिरोंमें जाना, प्रभु परमात्माकी पूजा भक्ति, दान पुण्य करना अच्छा नहीं लगता, इस लिये सनातन धर्म छोड " स्वामीजी " को रोते फिरते हैं ! क्या करूं ? मुझे बडी चिढ़ आती है ! जिस वक्त तू " सत्यार्थ प्रकाश " सुनाने बैठता है. तू सिर्फ उन (बाबूजी) की हां में हां मिलाए जाया कर और कुछ नहीं ! मैंने अपने भाईसे सुना है कि " स्वामीजी " पहले शैव धर्मको मानने वाले थे और " शिव भजन "

नाम था, सोला वर्षकी उमर तक तो वे स्त्री का वेश पहन कर नाचते रहे, देखनेमें बडे खूबसूरत थे ! इस लिये एक चोवीस वर्षकी उमर वाला राजपूत इनपर मस्तथा ! अगर तुझे इस बातका निर्णय करना हो तो मेरे भाईको पत्र देकर " दयानन्द छल कपट दर्पण " मंगाकर देख ले, उससे मेरी कही ऊपरकी बात प्रगट हो जायगी ! और " दयानन्द सुमाने उमरी " से यहभी प्रगट होता है कि, उनके मा बाप तबला सारंगी बजाते थे ! और आर्य समाजमें न गोचीका परहेज ! न मुसलमानका, न तेलीका, न तबोलीका, न कहारका, न कोलीका !

विश्वंभर–अजी जाने भी दो, कभी मुसलमानभी हिन्दु हो सकता है ? आपभी तो क्या बात करती हो ? यह तो आपका कहना झूठा है !

बहूजी–तुझे मेरे कहनेका इतबार नहीं आता तो अपने बाबूजीको पूछ देखना ! मगर तरकीबसे पूछना, यूं कहना कि, साहब ! अपने आर्य समाजमें " धर्मपाल " जातका मुसलमान है, उसका पहले क्या नाम था ? तो झट बता देवेंगे !

अरे तु तो भोला है ! मैं क्या कहूं ? " स्वामीजी " ने जैसा जैसा उपदेश दिया और पोथों थोथोंमें लिख गये है, वह तेरेको कहूं तो तू झट बाबूजीको कहदेगा ! जिस वक्त शामको तु उनको सुनानेके लिये बैठता है, उस वक्त मेरे जिमें ऐसी आती है कि, इसके हाथसे यह

निकम्मी पोथी लेकर फेंक दू ! अगर तूं मेरे भाईके पास एक महीना भी रह आवे तो तेरेको इन नये आर्य और इनके गुरुकी सब पोल अच्छी तरहसे मालूम हो जावे !

इनके स्वामी दयानन्दने हर एक मजहब (धर्म) वालोंकी निन्दाकी है " दयानन्द " कृत जितने ग्रंथ हैं उन सबमेंही जन्मसे जातिको नहीं मानी, बाबाजीने तो गुण कर्मोसेही जातिकी नीव डाली है, जब घरमें थे तब तो घरोंसे आटा माग माग कर लाते और खाते थ, जब घरसे बाहर निकले तो वही दोष वैश्नव समदाय वालोंपर लगाने लगे ! इतनाही नहीं ! बलकि, उनको कंजर, चंडाल, भंगी, मुसलमान कहनेसे भी जरा संकोच नहीं किया ! सच पूछे तो " बाबाजी " बिलकुल लाल बुझकडही थे !

जैसे कि एक दिन गधीको देखकर चेलोंने सवाल किया कि, गुरुजी ! यह कौनसा जानवर है ? तो बुझकडजीने जवाब दिया कि—

" बूझे बुझे लाल बुझकड, और न बुझे कोय ।
निराकारकी है ये लडकी, अथवा जोरू होय ॥ "

यह सुनके चेलोंने धन्यवाद दिया ! यही हाल दयानदियोंका समझना–जो गुरुजीने कहा उसीका हाजी हा करते हैं, मगर यह नही विचारते कि, इसमें हमको नफा होगा या नुकसान ?

इस तरह " विश्वभर " के अंदर बाबूजीके विठलाये हुए समाजी ख्यालको वे झट उखाड दिया करती थीं, वे अपने लडकोंको भी इसी प्रकारका उपदेश दिया करतीथीं, जिससे आगेको उनपर " दयानन्द " के उपदेशका असर न हो ! इस प्रकार " विश्वभर " को बाबूजीके यहा डेढ साल हुआ कि, उसकी एक "थिएटरलीकल कपनी " के प्रोफेसर और चीफ ऍक्टरके साथ मित्रता होगई ! " तुखम तासीर सोवत असर " कईएक कारणोंके मिलनेसे बाबूजीके यहासे "विश्वंभर" का चित्त उखड गया. बाबूजीके लडकोंका "विश्वंभर" पर सगे भाईसेभी बढ़कर प्रेम होगया था, यहां तक कि, १५-१५-२०-२० दिन तक " विश्वभर " के साथ लाहौर रहजाते, मगर इसके बगैर अपनी माके पास रहना दो दिनभी भारे हो पडता था. जब "विश्वंभर" नौकरीसे इस्तीफा देने लगा, लड़के बहुत रोए. बलकि, फिकरके मारे छोटे लडकेको बुखार होगया. तबतो बाबूजीकी स्त्रीने " विश्वंभर " से कहा कि, तु किसकी सिखावतमें आकर ऐसा करता है ? तुझे यहा क्या तकलिफ है ? तू ऐसा मत कर ! क्या इन बच्चोंका तरस नहीं आता ? बहुत कुछ समझाया मगर " विश्वंभर " ने एक न मानी, तब फिर उन्होंने कहा कि, अगर तुने जरूरही इस्तीफा देना है तो भले तेरी खुशी, हमारा कुछ जोर नहीं है, मगर जबतक इस छोटे लडकेकी

तबीयत अच्छी न होले तब तक तुं ठहर ! "विश्वंभर" का दिल अगरच विलकुलही उखड गया था, ताहमभी इस बातको उसने मंजूर किया, और दो महीने औरभी वहापर गुजारे, लेकिन कंपनीमें आना जाना ज्यादा हो गया, प्रोफेसरकी वजहसे वहाके दीवान साहबके पुत्र रत्नके साथ इसका मेल हो गया, आखिर नौकरीसे विलकुल ला परवाह होकर एकदम सुचालको छोड कुचालकाही पकडना " विश्वंभर " की बुद्धिने मंजुर किया! बाबूजीका कुछ थोडा बहुत भय था वहभी निकलगया!

यहा पर वाचक वृन्दको ख्याल रखनेकी जरूरत है कि, जो नेक चलन, इज्जतदार आबरूवाले अमीर लोगोंकी लिखी पढी हुइभी संतान बद चलन होकर अपने मां बापकी इज्जतको धब्बा लगा देती है, उसके कारणोंमेंसे मुख्य कारण यह है कि,—

(१) अपनी संतानको बचपनसेही स्वच्छंदता देनी !

(२) जिस उस्ताद–मास्टरका दवाव लडके पर न पडे उसके पास पढाना !

(३) नॉवेल–नाटक या अन्य इश्किया किताबोंके पढनेसे न हटाना.

(४) नाटक या वाहियात तमाशोंमें जानेसे न रोकना.

(५) सबसे बडा सबब यह है कि, संतानके बालग होने पहले उसकी सोहबतका पूरा पूरा ख्याल न रखना । प्रायः

आजकल अमीर लोग अपने लडकोंको नौकरोंके भरोसे छोड देते हैं, नौकर भी कैसे ? कोई कहार, कोई नाई, अनपढ, मूर्ख, बे अकल, निर्दयी ! अब विचारना चाहिये कि, कोमल दिलके बच्चे, जैसा उस नौकरको करते देखेंगे वैसाही करनेको तयार हो जायेगें ! इस लिये जिनको अपनी संतान प्रिय होवे, वो अपने बच्चोंको हरगिजभी आजादी न देवे ! " विश्वंभर " दीवानसाहबके पुत्र रत्नके साथ लग कर एकदम अधर्मके मारगमें सवार होगया, लेकिन " विश्वभरनाथ " का पूर्व संचित पुण्य आ सहाई हुआ, वरना उसे दुर्गतिके द्वारपर पहुचनेमें कुछभी संदेह न था ! क्योंकि इस समय "विश्वभर" को अपने घरसे निकलनेका कारण भूल गया था ! जिस हृदय भेदक घटनासे आघात पहुचा था वह आज सर्वथा नष्ट प्राय हो गया ! मानों मुझे जन्मसे लेकर आजतक कोई दुःख पडाही नहीं ! जो " विश्वंभर " किसी आदमीको बंदूक लिये अनाथ जीवों पर हाथ उठाते देखता तो क्रोधमें आकर उन्हें गालिया देता और उनसे लडाई लेता था, वह, आज स्वयही बदूक ले बिचारे अनाथ प्राणियोंके प्राण लेने लगा ! मानो इसमे कुछ पापही नहीं ! कुसंगतके कारण इस प्रकार हौसला खुलगया कि, न किसी का डर रहा, न भय ! पुलिसके कितनेही लोगोंके साथ मेलजोल होगया था, एकतो चढती अवस्था, दूसरे अमीरोंके लडकोंका सिरपर हाथ, फिरतो कहना ही क्या ?

सबकी आंखाम रडकने लगा ! बाबू बद्रीनाथने देखा कि, यह तो गया हाथसे ! उन्होंनें पहले तो प्यारपूर्वक बहुत कुछ समझाया, लेकिन समझना तो क्या था? उलटा बाबूजीसेही ऐंठने लगा ! तवतो बावूजी भी सखती और हरएक तरहका करडापन दिखलाने लगे ! लेकिन इसकोभी ऐसी जिद चढगई कि, जान बूजकर हरएक काममें देरी करने लगा, और करना तोभी बिगाड कर रख देना ! कहा तो बाबूजीके घरका कुल प्राइवट काम खुश होकर करता (क्यों कि बाबूजीने इसीके विश्वास पर कुल भार छोड दिया था, और ये भी महीनेके महीने घरका कुल खर्चेका हिसाब पाई पाई का ऐसा देता कि, जो इसके पहले नौकरोंकी अंधाधुंधी अच्छी तरह मालूम हो गई थी) कहा कहने परभी ध्यान न धरता ! इस तरह करते हुए भी बाबूजीने इसको अपने यहासे (" विश्वंभर " के इस्तीफा मागने परभी) जानेको इनकार किया !

एक दिन बाजारमें जाते हुए " विश्वभर " ने एक दुकान पर दश बारा आदमीको इकठे हुए देखकर—

विश्वंभर— (एक आदमीसे) क्यों भाई ! यहा क्या जलसा है ? यह मकान क्यों सजाया जाता है ?

आदमी—जैनियोंके पजूसन आए है न !

विश्वंभर– (कुछ न समझ कर) भाई ! मैं पूछता हूं कि, यहां क्या जलसा है ?

आदमी–पजूसनोका जलसा, कहता तो हू !

(" विश्वंभर " ने पजुसण शब्द ही कभी नहीं सुना था, समझता क्या ? आखर उन आदमियोंकी भीडमें मू डालकर देखा तो एक कागजके गत्ते पर वे लोग हिन्दी अक्षरोंमें यह लिखा रहे है कि, " श्री आत्मा॰ नन्द जैन सभा " " विश्वभर " उस लिखने वालेके टेढे मेढे अक्षर वहुतही खराब राइटिङ्ग देखकर हस कर बोला कि, क्या यह कीड मकोडेसे लिखे है ?

एक लालाजी– (खिजकर " विश्वंभर " से) छे तो, तू ही इससे अच्छे लिख दिखा !

(यह लोग," विश्वभर" को सुप्रीन्टेन्डेन्टके यहां नौकर है इतनाही जानते थे, यह किसीको खबर नथी कि, ये हिन्दी लिखा पढा है. क्यों कि, पंजाबमें हिन्दी पढ़ने लिखने वाले वहुत थोडे और उर्दू फारसीके पढ़ने लिखने वाले सैंकड़ो अगर हिन्दी पढे हुये मिलेंगेभी तो उनका राइटिङ्ग वस परमात्माकाही नाम ! " विश्वभर " का राइटिङ्ग पर हाथ काबू था ! लालाजीसे ऐंठकर)

विश्वभर–अच्छा ! शू ! ठीक–तो तुम मुझे बतलावो कि, क्या लिखना है ? मैं शामको तुम्हे साइन बोर्ड बनाकर

लादूंगा ! फिर इसके साथ मिलाना ! (इतना कह कर जो बोर्डमें लिखना था वह समझ कर मकान पर आया और अपने पाससे ही वड़े मोटे ग्लेज कागजके गत्ते पर अपनी हाथ कारीगरीका नमुना वनाकर शामको लाला जीके आगे रख दिया,)

लालाजी– (पट्टा देख कर) क्या यह तुमने वनाया है ?

विश्वंभर–मैंने वनाया, या किसीने वनाया, अब तुम यह वताओ कि, जिस पर तुमने कई आनेकी सुनेरी स्याही विगाड़ कर रखदी, उस तख्तेसे यह अच्छा है या बुरा ?

(लालाजी और उनके भाई " विश्वभर " पर वडे खुश हुए. फिरतो धीरे २ अच्छी जान पहचान होगई. लालाजीको " विश्वभर " का वावूजीके यहांसे नौकरी छोडनेका इरादा मालूम होगया. अब वावूजीकी "विश्वभर " पर करडी नजर है तो भी वावूजी एकदम अपने यहासे जवाव नहीं देते ! इसका कारण यही था कि, वावूजीको "विश्वंभर " का कोई कसूर–गुन्हा अबतक हाथमें न आया था,

वावूजी अपने यहासे इसका जाना अच्छा न समझते थे, " विश्वंभर " का कंपनीके उस्तादसे अधिक परिचय हो गया था, क्यों कि, लालाजी उन्ही उस्तादसे हारमोनियम सीखा करते थे. " विश्वंभर " वावूजीके यहा से किसी कामका वहाना निकाल जब दाव लगता तभी

लालाजीकी दुकान पर या उस्तादके मकान पर पहुंचता, आखर " विश्वभर " की मनशा कपनीमें नौकरी करनेकी हुई,, तब उस्तादने कपनीके मालिक दीवान साहबके सामने करके कहा कि–हजूर ! इसकी मनशा कम्पनीमें नोकरी करनेकी है

दीवान साहब– (उस्तादसे) भाई ! जिन बाबूजीके यहां यह रहता है, उनके यहांसे इसको यहा अधिक सुख न होगा ! मुझे अच्छी तरहसे मालूम है. (विश्वंभरसे) क्यों भाई ! उनके यहांसे तू क्यों निकलता है ?

विश्वंभर–यह तो आप बाबूजीसेही पुछ देखियेगा !

दीवान साहब–तु वही तो नहीं है जो रसायनी बाबाकी हथफेरीमें आकर कितना सारा रुपया खो आया था ?

विश्वभर–जी हां मैं वही हू ! आपको कैसे मालूम हुआ ?
(पासमें बैठे हुए बहुतसे लोगोंमेंसे एक)

नाजिरजी–वाहरे वाह ! अखबारों तकमें तो छप चुकाथा ! सारे शहरमें यह बात फल गईथी तो दीवान साहबको न मालूम हो ? यह कैसे तअज्जुबकी बात है !

दीवान साहब– (विश्वभरसे) अच्छा अबभी कुछ पासमें है ? मैंने सुना है कि, तु बडा उडाऊ है !

विश्वंभर– (हंसकर) हजूर ! अब है, सो, रसायन सीखनेके लिये नहीं है (उस वक्त घरमें तो कुल २२ ही रह गये

थे, और चार महीनेकी तनख्वाह बाबूजीसे लेनी बाकी थी.)

दीवान साहब–अरे भाई ! तु यहभी जानता है कि, कंपनीमें किन लोगोका काम है ? कंपनीमें तो वही लोग रहते हैं जो शरम–हयाको उतार कर फैक देते हे ! बस जिस दिन कंपनीमें भरती हुआ कि, उसी दिनसे यह समझ लेना कि, सिरपर तो इज्जत नदारद ! और मूं पर नाक नदारद ! अगर नकटा बननेका इरादा हो तो तेरी मरजी !

उस्ताद– (दीवानजीसे हंस कर) क्यो साहब क्या हम नकटे है ?

विश्वंभर– (उस्तादसे) अजी जनाब ! आपतो नकटे नहीं हो ! मगर कंपनी महाराजा साहबकी है और कंपनीके मालिक (दीवान साहबकी तरफ हाथ करके) आपही है ! (यह सुन मय दीवान साहबके जितने लोग बैठे थे सबही हंस पड़े)

दीवानजी– (विश्वंभरसे) धः × × × × × बेवकूफ ! क्या हम नकटे हैं ?

विश्वंभर– (हाथ जोड़ कर) किसकी कमबखती आई है जो आपको नकटा कहे !

दीवानजी– अच्छा तो तु अब यह बोल कि तेरा आवाज कैसा है ?

विश्वभर– जनाब मेरा आवाज तो गधे जैसा है !

(सब लोग हस पडे) अफसोस ! मुझे अपनी चिन्ता लगरही है, आप लोगोंको हंसना सुझता है !

उस्ताद– (दीवानजीके आगे विश्वंभरका लिखा हुआ एक निबंध रख कर) हजूर ! इसका राइटिङ् तो देखिये !

दीवानजी– (लेख देखकर) क्या यह इसीका राइटिङ् है ?

विश्वभर–नहीं हजूर ! किसीसे लिखा कर लाया हू ! क्यों कि, यह तो मै अच्छी तहरसे जानता था कि, दीवान साहबके दरबारमें इतनी अकल किसीकोभी नहीं है जो यह कहेगा कि, ले भाई ! हमारे सामने बैठ कर तो लिखदिखा ! हा अब अगर मेरे याद दिलानेमे कोई कह बैठे तो, तअज्जुब नहीं !

एक मुन्शीजी–अच्छा भाई ! यह ले कलम, और दवात, दीवान साहबके सामने बैठ कर लिख !

विश्वभर–(दीवान साहबसे) देखिये साहब निकली न वही बात ! (यह सुन सब हंस पडे ! दीवानजीने मुन्शीजी को बडा शरमिन्दा किया कि, मुन्शीजी ! आपकी अ-

कलको क्या हुआ ? जो उसके कहनेके विनाही समर्थ बोल उठे !)

दीवानजी– (एक पुस्तक विश्वंभरको दे कर) अच्छा ! इसको पढ़कर सुना ! देखें तेरा उच्चारण कैसा है ?

विश्वंभर– (पुस्तक खोल कर) हाय –हाय–हाय–हाय–नहीं विद्याको मिलता वर। फिरा घर घर। सभा बन कर। दया कर हे कृपा सागर। मैं हूं मुन्तजिर। हुआ अन्तर। हा० प्रतिज्ञा करके पछताया। बवज गम कुछ न हाथ आया। ये है ईश्वरको क्या भाया। जो संकट मुझपे है लाया।

(एक दम आठ दश सफे उलट कर) मारलो। मारलो। (पुस्तक हाथसे कालीन पर फेंक कर) क्या वाहियात पुस्तक है जो हाय हाय और मार मारसे ही भरी है !

दीवानजी– (हंसकर लोगोंसे) तलफ्फुज तो बड़ाही अच्छा है ! (" विश्वभर " से) क्या उर्दूभी जानता है ?

विश्वंभर–नहीं साहब ! मैं उर्दू तो नहीं जानता, मगर मेरी मादरी जबानही उर्दू है, मै सिक्स क्लास तक इंगलिश पढा था, आज करीबन आठ साल हुए छोडेको सो भूल गया !

दीवानजी–क्या सबही भूल गया ?

विश्वंभर-जनाबमन् ! अगर सब पढ गया होता तो सबही भूल जाता ! मगर न तो मैं सब पढा और नाहीं सब भूला ! याने जितना पढा था उसमेंसे उतनाहीं भूल गया कि जितना भूलना लाजिम था !

दीवानजी-अबे हरबातमें हंसी ! (सब लोग हंसपडे)

विश्वभर-Soft words are hard arGuments (मीठा बोलनाही विनीतता है.)

दीवानजी-अच्छा तो तुम पांच सालकी गेरेन्टी लिख दो कि, अगर इससे पहले नौकरी छोडुं तो जो कपनीका कानून है उसके मुताबिक दंडका भागी हु !

उस्ताद्- (दीवानजीसे) हजूर ! यह कपनीमें रहकर ऍक्टर बनना नहीं चाहता, लेकिन हमें एक ऐसे आदमीकी जरूरत है कि, जो लडकोंको पार्ट याद करा दे, या जो पढेहुए लडकोंको उनका पार्ट लिख कर दे दिया करे; और ऍक्टरी तो यह करही नहीं सकता अगर अपनी खुशीसे नकल वगैरहमें स्टेज पर आवे तो इसका अखतियार है !

दीवानजी-अच्छा तो जाओ ! कल ठीक काम हो जायगा !

(वहासे उठकर बाहर आनेकी देर थी कि, "विश्वंभरनाथ" के मनका चक्कर फिर गया !)

" गुरु घंटाल– " अध्याय ३

" वृहन्महोदर–बेटा ! अब समय बडाही कठिन आगया हैं देख भाल कर चलना चाहिये, हमारे शत्रुओंका दल वढता जाता है,

पिताजी हमारे शत्रु कौन ह ? पहले हमारे शत्रु कौन है ? सूर्य महाराज !

यदि सूरज न होता तो सब समय अंधेराही रहता ! जहा चाहते वहा हाथ मारते, भोजनका क्या घाटा था' इस सूर्यने वडाही नाश लगाया । दूसरा शत्रु कौन है ? तेल– यह न होता तो २४ घटेमें १२ घटे तो हमारा राज्य होता ! रातको उजियाला न होने पाता !

अब और नये २ शत्रु पैदा होते जा रहे है, (वह कौन ?)जगह २ पाठशालायें खुली है ! लोगोंकी बुद्धि तेज होती जा रही हैं ! अब ऐसा काम करो जिससे भूखे न मरने पावो ! हमारा कुटुंब वडा है, खाने वाले वहुत है, कमाने वाले थोडेही है ! अब ऐसी युक्ति करो और लोगोंको ऐसी पट्टी पढाओ जिसमे इनकी बुद्धि ज्योंकी त्यों रहे ! उन्नति न करसके, ये उन्नति करेंगे तो हमारे दिन खोटे आये ! वेटा शास्त्रमे लिखा है–" विदुषा जीवनं मूर्खः " पडितोंके जीवन अर्थात जीवन मूर्खही है । मूर्ख न हो तो पडित भूखे मरे ! जैसे रोगी न हों तो डाक्टर भूखे मरें !

अजगर प्रसाद-पिताजी! ऐसी पट्टी पढा ना तो असंभव है!

वृहन्महामहोदर-चल उल्लूके बचे !

अजगर प्रसाद-तो आप उल्लू सिद्ध हुए !

वृहन्महामहोदर- (बडे प्रसन्न होकर) बेटा! तू वडा बुद्धिमान है। तर्क शास्त्रमें निपुण है! अब मेरा मनोरथ अवश्य सिद्ध होगा! सुन बेटे!

अजगर प्रसाद-हा पिताजी!

वृहन्महामहोदर-सुन मेरी बुद्धिको। आज कल लोग नाहक मिडिल पास करते हैं बी. ए. एम्. ए. पास होते है पर पैसा पास नहीं। "आख फोड ऐनक लगावे। पैसा पास न जावे।" बेटा मैं तुझे पैसा पास करता हू। तूं इन सबसे मजेमें रहेगा! चैन करेगा! मौज उडायेगा तु धर्म फरोश बनजा। धर्मकी दुकान करले ईश्वरने चाहा तो तू सबसे अच्छा रहेगा।

अजगर-सो कैसे ?

वृहन्महामहोदर-सुन मेरे लाल मेरे आखोंके उजियारे आज कल सबही रोजगार बिगड गये हैं.

कुनर फरोश शिर मुंवाये बैठे हैं-

परचून वालोंके घरोंकी दीवाल तक चुहोंने खोदकर ढादी है जब प्लेग फैलता है तब परचूनकी मंडी ही से फैलता है !

जूता फरोश दाढीमें हाथ दिये बैठे हैं जूतोंमें दीमक लग गई है ! फिरभी इन्कम् टैक्स वाले वहीकी जांच कर रहे हैं.

डाक्टर मक्खी मार रहे है !

वकील मनसूबोंके घोडे दौडा रहे हैं.

जिससे पांच मिलनेकी आशा करते हैं वह उलटे ५० और उधार मांगता है समाचार पत्रोंके संपादक तडके उठकर नादे हिंद ग्राहकोंके नामकी माला फेर रहे हैं अच्छे २ लेखक पसारियोंकी दुकानमें अपनी पुस्तकोंको दो आने सेर तुलवा रहे हैं क्यों कि मोल लेकर पुस्तक पढ देने वालोंका पता नहीं ! मिडिलचियोंको तो कोई पूछता भी नही बी. ए. एम्. ए. पास करके आख फूटती हैं मगज सुखता है. फिर कोट पटलुन पहन कर पिल पिली साहब बन जाते है तीस चालीस रु० की नौकरी करते है पचास साठका खर्च रखते है पाचसौ छ सौ कर्ज करते हैं अब नौकरीमें क्या धरा है ? तीस चालीसके वाबूओंकी तो कुगत ! कहीं भूल हुई तो जुरमाना और मुअत्तिली

और मौक़ूफी और जेहलखाना ! और कुछ सुननेमें नहीं आता; एडीटर अलग प्राण सुखाते है भाई हमसे तो ऐसा हजार रु० के लिये भी न हो सकेगा आज कल जो चैन धर्म फरोशीमें है सो कहींभी नहीं इसमें सदा आदर है गरमा गरम पूरी कचौडी खाओ; मूछों पर ताव दो; सिंहजीकी दुकानका तर व ताजा मसालेदार हलुवा गायका ओटा हुआ दूध मीश्री मिलाहुआ छिकल निकालेहुये सफेद बादाम मलाई लच्छेदार रवडी नित्य विना दाम मिलती है ! अरे भाई मेरे मुंहमे तो कहतेही पानी आ जा रहा है ! फिर भेट अलग, रेल खर्चा अलग; बडे बडे मनुष्य पांव पूजते है, बडाही आनन्द है, चिन्ताका लेश मात्रभी नहीं,

अजगर-पिताजी यह नया रोजगार कबसे चला है ?

छद्मन्महामहोदर-बेटा ! पहिले तपस्वियोंकी नकल करके ठगनेकी चाल थी, इसमें ठगोंको बडा दुःख होता था; फिर दानके मिससे ठगने लगे, पर देनेवाले ठगोंकेभी गुरु निकले; एक पैसेमें दान करै सारे कुटुम्बके नामलें और सबके " रोग शोक दुःख दारिद्र " एकही पैसेमें ठगके हवाले करदें; वचक मिश्रजीको यह बहुत बुरा लगा, उन्होंने नव ग्रहोंकी पूजा चलाई, अब अंग्रेजोंने जगह जगह स्कूल बना दिये है और इन मगल शनैश्चर

आदिके अक्ष (फोटु) के चित्र दिखला कर इनकी कलई खोल दी है । और इनमें पृथ्वीहीके समान समुद्र पहाड व नदियां दिखला दिये हैं; लोग यहभी समझने लगे है कि जो होनहार बातहोगी ज्योतिषीको चार पैसे दे देनेसे कैसे टल सकेगी ?

वचक मिश्रके परपोतेके परपोते लोभ मिश्र बडे नामी होगये हैं । इन्हीके सालेके मौसेरे भाई पाखंडजीने यह धर्म फरोश पंथ चलाया है; पहिले जो दान लेने जाते थे दो घटे बाहर खडे रहते थे ! कहारसे भीतर कहदो, कहार तो ऐसा मुह बनाता था जाने कागजी नींबु चुसा है, पाखडजीने यह ऐसा सुघड पथ निकाला है कि जिससे पुराने दिन याद आते हैं जब पडोसमे किसीका दुशाला मागकर ससुराल जाते थे, पनवाडीकी दुकानसे धेलेका पानका बीडा लेनेके मिससे उस दूकानके बडे आयनेमे अपनी सुरत देखकर आपही खुश होकर मुस-कुराने लगते थे, बालोंको संवारकर कानोंके पीछे करते थे, और टोपी तिरछी करते थे फर्क इतनाही है कि ससु-रालकी पहिले दिनकी पूरीया मुंहमें गल जाती थीं; दूसरे दिन दांतोंसे कुछ २ काम लेना पडता था; तीसरे दिनकी पूरीयोंको देख कर मुलतानी जूतीकी तली याद आती थी और दात दुखने लगते थे; पहिले दिन जब नरम और गरम पूरीयां मिली तो शरमके मारे खाई नही गई । जब भूखके जोरने शरमको भगाया तो दात

दुःखने वाली पुरीयां मिली । भाग्यकी बात है ! पर धर्मफरोशीमें भाग्यके बापका कुछ नहीं चलता, सहस्र रजनी चरित्रके बादशाहकी तरह नित्य नये २ सुसराल है और वही नरम पूरीया बराबर मिलती है, स्त्रीसे कुछ दिनों वियोग तो होता हैं पर घर आनेके दिन जब वह देखती है कि गालोंमे लाली है, और सामने पीली २ असरफियोंकी थाली है तो दोडकर सदुककी ताली ढूढने लगती है और वियोगकी बात नही करती । जो खाली घर जाय वही गाली खाय !

तू यह मत समझना कि, धर्म फरोशीमें तरकी नही होती । जैसे नायब तहसीलदार तहसीलदार होकर भाग्यसे इप्टी डिप्टी बनजाते है ! ऐसेही उदर अध्यापक महोदर महामहोदर और बृहन्महामहोदर हो जाते हैं ।

अध्याय चौथा–

यह ससार माया रूप है इस लिये बिना माया फैलाये हुए ससारमे सफलता नहीं । "दुनिया लूटना मकरसे घी खाना सक्करसे" योंभी कहते है कि–"बिना फरेब यश नहीं. बिना लाल मिर्च रस नहीं" फरेब और मक्र बिना कोई सिद्ध नहीं । शास्त्रका वचन है "प्रियञ्च नानृतम्ब्रूयात्" मीठी बात कहो चाहे झूठी हो ।

अध्याय पांचवां-

हे बेटे ! इमान और धर्म मूर्खोंको डरानेके लिये है. घरसे जब चलो तो इनको ताकमें रख जाया करो, एक छोटी नोट बुक बना लो, उसमें केवल उन्ही परम मित्रोंका नाम लिखो, जो गांठके पूरे पर बुद्धिके हीन हो ! और लोगोंसे कोई प्रयोजन मत रखो, क्यों कि ये वृथा बकवाद करके कष्ट देते हैं, हिंदुस्तानमें बडे २ संप्रदाय है वे लोग आपसमें खूब लडते है । इसका पूरा लाभ उठाओ । एक कहता है कि स्वर्ग हमारे बापका है, दूसरा कहता है नहीं हमारे नानाने महसूल चुका दिया है (रिजर्व किया है !) स्वर्ग क्या होगया, रेलगाडी होगई !- फिर आगे जाकर-अब बुद्धि इसीमें है कि अपनी विद्या और योग्यताका नीलाम कराओ कौन संप्रदाय सबसे अधिक देगा किस संप्रदायमें सबसे अधिक धनी है और किसमे बडे २ दाता हैं और कहा २ गांठके पूरे बुद्धिहीन है यह विचार करके संप्रदायोंको बदलते रहो और इनको आपसमें कनकओंकी तरह खूब लडाया करो ! यदि लोगोंका पूरा विश्वास न हो तो पुराने गुरुके नाममें थूक दो ! हम सिद्ध करदेंगे कि, इसमे कुछभी पाप नही !

अजगर-सो कैसे ?

वृहन्महामहोदर-सुन मूर्ख !-पहले गुरुका समास किया'गृ' और'रू'भया। 'गृ' अक्षर कहते थूकतेही बनता है । रू'

धातुसे रौरव बनता है रौरवके नाम पर थू कहना पडता है बस 'थू' और 'थू' अर्थात् थू थू सिद्ध होगया।

फिर आगे चलकर—लोग अकालसे पीडित हों तोभी तु खूब चदा इकठ्ठा किया कर कहीं कह कि अयोध्या और मथुरामें मदिर बनेंगे क्यों कि इन जगहोंमे इतने मदिर है और बनते जाते है कि तेरे मदिरोंका किसीको पता न लगेगा। कहीं कहदे कि हमने पाठशालाये खुलवाई है दवाखाने अनाथ आलय खोले हैं और कुये खुदवाये है इनमें हजारों मनुष्य सहायता पाते है धन्य हम लोगोंके उद्योगको है कि आज तक इनमेंसे एकभी भूखसे न मरने पाया। दक्षिणमें चदा करे तो वे अनाथ आलय उत्तरमें बतलादे पूरब जाय तो पश्चिममें बतला दे। इस बातको शपथ खाकर कह कि वहा कोई भूखा न मरा। क्यों कि कोई होता तो मरता या न मरता। कल्पना किये हुए लोग जो सचमुच है हीं नहीं भूखे नही मरते। कहीं हों तो मेरे। लूट कर सर्व स्वाहा कर जा सारे मुल्कको चूसजा। हम लोगोंका इमान इतना क्या कोई खेल है ? शूद्र और चंडालका छोटा इमान होता है उनका डरना ठीक है। हमारा इमान बडा भारी होता है कुयेसे दश घडे पानी निकालो कुआ नहीं सूखता पर मटकेसे चार लोटा पानी ले लो तो मटका खाली हो जाता है।

अध्याय छठा.

बेटा भागवतमें लिखा है कि दत्तात्रयजीके २४ गुरु थे। मेरे ४०० गुरु है पर उनका वर्णन इस समय क्या करूं।

पहिला गुरु मेरा बगुला है । तपस्वी मुनिके समान नदी वा सरोवरके किनारे शांत वृत्तिसे यह तपस्या करताहै और हिलता नही है ज्योंही कोई जीव जतु आया इसने चोंचमें धर दबाया फिर वही भेष तपस्वीका धारणं कर लिया। ये बुद्धि मैने बक पक्षीसे सीखी

दूसरा गुरु पतंगिया अर्थात् तितली है।

तीसरा गुरु रबडकी गेंद है इत्यादि–

अध्याय नौवां.

हे पुत्र ससार जीतनेके दोही अस्त्र है " हठ धरमी और बेशरमी " शास्त्र कहता है कि " एकां लज्जा परित्यज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत्– " शरम छोडदो तीन लोक जीतलो बी. ए. वा एम ए पास करोतो आखों का तेज कम होता है, धरम फरोशी करो तो शरम कम होती है अर्थात् नाकका तेज घटता है, आखके तेज घटनेसे नाकहीका तेज घटना अच्छा ! वृहन्महामहोदरी दरजा मिलनेतक शरमका लेश मात्रभी नहीं रहता

" भई रांडनारी गई लाज सारी " हे वेटा कौन क्या कहेगा इस वातको ध्यान न करो समयके अनुकुल काम करो । प्रतिकुल न करो–

अध्याय ग्यारवां

वेटा तुझे औरभी उपाय वतलाते है सिद्ध वीसा यत्र और सिद्ध सावर यत्रके विज्ञापन छपा और कह कि इससे मारण, उच्चाटन, वशीकरण आठ सिद्धि नव निद्धि मिलती है । दाम १॥) घर वैठे पौने दो १॥।) में मिलेगा.

काली चुडेलोंको गोरी और खूबसूरत होनेकी दवा ४॥) घर वैठे मिलेगी । औरभी उपाय तुझे लखपति होनेका वतलाते है ऐसे विज्ञापन छपवा कि मुझे एक योगीने सोमरस वतलाया है.

अथवा यह विज्ञापन छपवा कि मुझे अमृत मिलगया है इसके पीनेसे मरा मुरदा जी उठता है ।

अजगर–पिताजी कहीं पकडा न जाऊ !

गृहन्०–अरे मूर्ख पकडा जाना कोई खेल है ?

वेदमें अमृतका वर्णन है मै पुराणोंसे और शास्त्रार्थसे अमृतका होना सिद्ध करदूगा.

अजगर–पर मुरदेको कैसे जिलाओगे–

वृहन्०–जैसे चार पैसे पाकर ज्योतिषी अपने साम्यके द्वारा लडकीको सौभाग्यवती करा देते है ! लडकेको रंडवा होने नहीं देते !

अजगर–पर वे स्वीकार करते हैं कि साम्यसे करमकी रेखा नहीं टल सक्ती (अपने घर विधवा हैं तो तो स्वीकार न करके कहा जायें) जिसके भाग्यमें विधवा होना है वह अवश्यही विधवा होगी जिसके भाग्यमें विधवा होना न हो वह साम्य करनेसे विधवा नहीं होने पाती !

वृहन्महामहोदर– बस हमारा अमृतभी ठीक ऐसाही है कालको तो ईश्वरभी नहीं टाल सकता । परन्तु जिसके भाग्यमें मर कर फिर जी उठना हो उसे अवश्यही बचा देता है यदि यह झूठ निकले तो हम बीस हजार रुपये दडदें । इस अमृतको पिलानेसे जो मुरदा न जी उठा तो जान लो कि उसके भाग्यमें मर कर फिर जी उठना न होगा । और तु कहने लग जाना कि "दवा खिलाऊ अमृत पिलाऊ फिरभी मरजाय तो मै क्या करू । तेरे भाग्यमें मरकर जीना न हो ! देखो लक्ष्मण मरगया था पर उसके भाग्यमें मरकर जी उठना था इसी अमृतसे वह बचगया । देखो तो सही इसी अमृतसे लक्ष्मणका फिर जी उठना इसी अमृतसे तेरा न बचना ! हे मुरदे ! यह तेरे भाग्यकी खोट है ! तुझे मरकर जी उठनेका तमीज नहीं । मेरे अमृतका क्या दोष है । वे तमीजी

कूढ मगजीकी दवा ढूढते २ धन्वन्तरी वद्य परगये। लुकमान हकीम कवरमें सडगये। हमारा अमृत सचा है पर इस मुरदेके तमीजमे पथ्थर पडगये हैं इस " गुरु घटाल " की हवासे " विश्वभरनाथ " का दिमाग अच्छी तरहसे भरा हुआ था! हाथकी कारीगरी पर कुछ अभिमानभी था! स्याल कोटसे वापस आये वाद कुछ दिन वाबूजीके यहा रह कर अतमें इस्तीफा देदिया, और लालाजीके पास एक मुन्शीजीके समर्गसे " विश्वंभरनाथ " की " सुमतिचद्र " और " ज्ञानचद्र " के साथ प्रीति हो गई! धर्म, अधर्म, पुण्य, पापको समझने लगा! प्रभु परमात्माकी भक्तिमें अपने समयको व्यतीत करने लगा!

अव हम अपने "विमल विनोद" के नायक "विश्वंभरनाथ" को कुछ समयके लिये यहाही छोडते है, और उसके मित्र " सुमतिचंद्र " और " ज्ञानचद्र " की " स्वामी दयानन्द सरस्वतीके उपदेश " का झडा फरकाने वाले " मनीराम " के साथ, हुई वात चीतका फोटु प्रिय पाठकोंके मोदके लिए दिखाते है क्यों कि, आज कल विचारे भोले भाले लोग जैसा किसीने कह दिया, उसेही ठीक समझ, मान लेते है! जैसे कि, " स्वामी दयानदके उपदेश " से " मनीराम " को धोखा लगा!

आप लोगोंको यह तो अच्छी तरहसे मालूम हैं कि, " स्वामीजी " के उपदेश रूप " सत्यार्थप्रकाश "

आदि ग्रथोंकी सत्यता कितनी है वह प्रगट करनेके लिये जितने ग्रंथ निकल चुके है उनमें कुछ कसर नही रही ! तोभी " मनीराम " को, भूले हुए रास्तेसे सीधी सडक पर लानेके लिये " सुमतिचंद्र " और " ज्ञानचंद्र " की आजकी मुलाक़ात अन्य पाठकोकी अपेक्षा जैनोंको अधिक लाभ प्रद होगी.

मायका महीना, सायकालके चार बज चुके. रविवारका दिन, "लाला मनीरामजी" बगलमें पोथी दबाये हुए एक बगीचेमें " स्वामी दयानन्दजीके उपदेश " की तरंगोंसे तग हुए हुए इधरसे उधर फिर रहे है, इतनेमें

सुमतिचंद्र– (अपने मित्रसे) ज्ञानचद्र ! क्या तुमने "मनीरामजी " को देखा है ?

ज्ञानचंद्र– अच्छी तरहसे बलकि कई दफा बात चीत भी हुई है. कुछ दिनोसे उन्होंने " स्वामी दयानन्दजीका उपदेश" लोगोंको सुना सुना कर शहरमें बडीही गडबड़ मचा रखी है !

सुमतिचद्र–चलो आज उनसे कुछ बातचीत करे ! (हाथसे बताकर) वो देखो सामने टहल रहे है !

ज्ञानचद्र–ओ हो ! (नजदीक जाकर) लाला मनीरामजी साहब !

मनीराम– (देखकर) आइये ! आइये ! नमस्ते !

ज्ञानचंद्र–यह बगलमें पुस्तक क्या है ?

मनीराम– (बगलसे हाथमें लेकर) जनाब ! ये "सत्यार्थ-प्रकाश " है.

सुमतिचंद्र– (दोनों जनोंसे) आओ इस ब्रेंच पर बैठो !

(सामने छायामें तीनो जने बैठ गये)

मनीराम– (सुमतिचद्रसे) तुम्हारे मतकी तो पोल हमारे " स्वामीजी " ने खूब खोली !

सुमतिचद्र– (हस कर) बेशक ! हमारे मतकी तो क्या ? बलकि प्रायः कोईभी ऐसा मत बाकी नहीं छोडा जिसकी पोल न खोली हो ! मगर औरोंकी पोल खोलते खोलते अपनी पोल खुला बैठे ! यह बडे खेदकी बात है !

मनीराम– (चमक कर) हैं ! क्या कहा ? उनकी क्या पोल खुली तुमने देखी ?

सुमतिचद्र–अजी मनीरामजी ! तुम्हारे बाबाजीकी पोल तो फूटे ढोलकी तरह खुल गई है ! लो मै इस बातकी मुनसफी तुम्हारेही सिर डालता हू न्याय करना !

भला ! कोई आदमी अगलेके मंतव्यको विनाही समझे, विनाही उस मतके शास्त्रोंको देखे, अपने मनघड बनावटी प्रश्न पैदा कर, उसका खडन करे, और भोले भाले लो-

गोंको धोखेमें डाले तो, उसको दूसरेकी पोल खोलने वाला कहोगे या अपनी पोल खुलवाने वाला ?

मनीराम–क्या हमारे " स्वामीजी " ने ऐसा किया है ?

सुमतिचंद्र– अभी तक तुम्हें मालूम ही नहीं ? तब तो बडे आश्चर्यकी बात है ! लेकिन मुझे मालूम होता है कि, तुमको केवल ' स्वामीजी " की इस पोथीके सिवाय और किसी मतकी खबर नहीं ! खबर होवेभी कहासे ? विना हरएक मतके पुस्तक देखे, या सुने ! लालाजी ! तुम को चाहिये कि पहले जिनके ग्रथोंका आशय लेकर बाबाजीने जो जो बाते लिखी है वह उनके ग्रथोमें है या नही ? यह देखिये, फिर इस पोथीके साथ मिलाइये !

मनीराम-वाह ! तुमको क्या मालूम कि, मुझे इस पुस्तकके सिवा और किसी मतकी खबर नहीं ! मुझे तो इस बातका बडाही शौक है, अभी थोडा समय हुआ कि तुम्हारे मतकी नामांकित साधनी " पार्वतीजी " आईथी, मै हमेशा उनके व्याख्यान सुनने जाता था. उनसे मैंने जैन मत सबधी पुस्तकोंके लिये पूछा था कि, मुझे जैनके सिद्धान्त जाननेकी बडी इच्छा है, तब उन्होंने मुझे कुछ भी संतोप कारक उत्तर न देकर इतनाही कहा कि, हमारे ग्रंथ प्राकृतमें है, और उन ग्रथोंका हमारे साधु साधवीयोंके सिवाय किसीको अधिकार नहीं है बतलाइए अब क्या किया जाय ?

सुमतिचद्र– वाह साहब ! अभीतक तो तुमको जैन साधुओंकीही खबर नहीं है ! जनाब ! जिनको तुम जैन समझ रहे हो वह जैन नहीं ! वह तो अनुमान अढाइसौ वर्षसे निकला हुआ ढुंढिया मत है ! उनका तो जैनोंके साथ दिन रात, और जमीन आसमान जितना फरक है ! अगर तुमको इस मतकी हिस्ट्री खुलासा जाननेकी इच्छा हो तो जैनाचार्य आत्मारामजी का बनाया " सम्यक्त्व शल्योद्धार " ग्रंथको देखिये ! और साथ ही जैन मतके सैकडो ग्रंथ प्राकृत संस्कृत तथा हिन्दी गुजराती और इंगलिशमें छप चुके हैं, और छप रहे हैं ! जो चाहे सो उन्हें खरीद सकता है, और पढ सकता है. अफसोस ! कि तुमने यह भी नहीं सोचा कि हमारे " स्वामीजी" तो लिखते हैं कि, मूर्तिपूजा जैनियोंसे निकली और यह " पार्वतीजी " मूर्तिपूजाके विरुद्धही गाना गाती है तो यह जैन तो नहीं !

मनीराम– (कानको हाथ लगाकर) बेशक ! यह बात तो मेरे ध्यानमें अब तुम्हारे कहनेसे आई ! प्राकृत तो पढा ही नहीं हूं, अगर जैनके हिन्दी भाषामें छपे हुए ग्रंथोंके नाम बतलाओ तो मैं मंगाऊं क्यों कि, मुझे इस बातकी बडी इच्छा है.

सुमतिचद्र–खुशीसे लिखलीजीये अगर फकत वाचनेके लिये ही चाहिये तो मेरे मकान पर बहुतसे ग्रंथ मौजूद हैं ! जैनतत्त्वादर्श, अज्ञान तिमिरभास्कर, तत्त्वनिर्णय प्रासाद,

चिकागो प्रश्नोत्तर, जैन प्रश्नोत्तरावलि, जैन मतका स्वरूप, जैन मत वृक्ष, के देखनेसेही तुमको जैन मतके मंतव्यका पता लगजावेगा ! फिर आपको मालूम होगा कि, हमारे " बाबाजी " तो इनके बारेमें क्या लिखते हैं ! और ये क्या मानते हैं.

मनीराम–बहुत अच्छा ! अब मैं आजसे ही पूर्वोक्त ग्रंथोंका अवलोकन करूगा; मगर तुम मुझे पहले यह कहो कि, हमारे " स्वामीजी " के साथ किसी जैन विद्वानका कभी मुकाबला भी हुआ था या नहीं ?

सुमतिचंद्र–अगर किसी जैनके साथ मुकाबला हो जाता फिर बातही क्या थी ? बाबाजीका सच्चा पना सबही मालूम हो जाता ! देश पंजाब शहर गुजरावालेका रहने वाला लाला ठाकुरदास जैनी बाबाजीके साथ शास्त्रार्थ करनेको बबई तक पीछे पीछे फिरा मगर बाबाजीने शास्त्रार्थ करनेके डरसे ऊपर ऊपरकी चिट्ठी पत्रीसे ही अपनी जान बचाई ! अगर तुमको इस बातका निर्णय करना हो तो " दयानंद मुखचपेटिका " देखलो !

मनीराम–खैर देखा जायगा ! मगर मुझको तुम यह बतलाओ कि " स्वामीजी " ने " सत्यार्थप्रकाश " में जैनियोंके लिये क्या झूठ लिखा है ?

सुमतिचंद्र–भाई साहब ! " सत्यार्थप्रकाश " में झूठ कितना है, वह,वही लोग जानते हैं कि जिन्होंने बाबाजीकी इस

थोथी पोथीको शुरूसे आखीरतक पढा है ! मुझे यहां दावेके साथ कहना पडता है कि,

" उन्तालीस सेर चूरा–डेढपाव मिट्टी ढाईपाव कूडा–शेष आटाही आटा " वैसेही बाबाजीके "सत्यार्थप्रकाश" में काले काले जितने अक्षर है उतने असत्य, और सब सत्यही सत्य ! अब लो जो वातें बाबाजीने जैनियोंकी लिखी है वे वातें जैनियोंके मतव्यसे कहीं नहीं मिलती ! मिले कहासे ? अगर बाबाजीको झूठ लिखनेका डर होता तो सत्य सत्य लिखते ! सो सत्यके साथ तो बाबाजी जनमसेही वैर बांध कर आए थे.

भाई साहब ! बाबाजीने जब अपनेही धर्मके वेदोंका अर्थ उलट पुलट कर अपना नयाही मन घडत अर्थ बना दिया तो, जैनियोंके लिए विना जैनागमोंको देखे और विना उनके रहस्यको समझे अपना मन माना गाना गाया तो इसमें तअज्जुबही क्या ?

बाबाजीने तो यह समझ रखा था कि किसी तरह से अगले मतका खंडन हो जाना चाहिए चाहे झूठ क्यों न बोलना पडे !

मनीराम–अजी जानेभी दो ! कभी सच्चेको बुरा और बुरेको सच्चा भी कोई कहता है ?

सुमतिचद्र– (हस कर) भाई ! तुम्हारे बाबा दयानन्दजी और उनके चेलोंके यहां तो सच्चेको बुरा और बुरेको

सचा, झूठको सत्य और सत्यको झूठ कहाही जाता है ! वरना " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ २९० में " जो जीव " ब्रह्मकी एकता जगत् मिथ्या शंकराचार्यका निज मत " था तो वह अच्छा मत नहीं और जो जैनियोंके " खंडनके लिए उस मतका स्वीकार कीया हो तो कुछ " अच्छा है " इत्यादि लिखा है कभी न लिखते ! हम नहीं जान सकते कि, बाबाजीकी आखोंके आगे किस विलायतका बना हुआ पक्षपातका चस्मा लग रहा था जो वे ऐसा मानते है कि, दूसरेको झूठा ठहरानेके लिये अपनेको महा पाप क्यों न करना पडे, तोभी पाप कर लेना ! मगर दूसरेको झूठा ठहरा देना ! बाबाजीका तो यह हाल था कि, दूसरेको अपशुकन करदेना ! चाहे अपना नाक कट जावे तो भी कुछ परवा नहीं ! इन्हीं बातोंसे बाबाजीकी विद्वत्ता प्रगट हो रही है !

देखो, मै तुमको बाबाजीकी सत्यता और विद्वत्ताका नमुना दिखलाऊ (मनीरामके पास जो सन् १८८४ का सत्यार्थप्रकाश मौजूद था उसीके पृष्ठ ४४७ मे निकाल कर)

"भुंक्ते न केवलं न स्त्री मोक्षमेति दिगंबरः ।
"प्राहुरेषा मयं भेदो महान् श्वेतांबरैः सह ॥ "

यह श्लोक लिख कर बाबाजीने जो भाषा की है उस पर जरा ख्याल कीजिए कि, इस साधारणसे श्लो-

कके अर्थ करनेमें जिस गुरुसे व्याकरण पढा था उस गुरुका भी भान करादिया कि, वह भी पूरा २ वैया करण चार्य ही था ! और बाबाजी तो थे ही वैयाकरण! वरना ऐसा अर्थ कैसे करते ? बाबाजी पूर्वोक्त श्लोकका अर्थ लिखते है कि—

" दिगंबरोंका श्वेतांबरोंके साथ इतनाही भेद है कि " दिगंबर लोग स्त्रीका संसर्ग नही करते और श्वेतांबर " करते हैं इत्यादि बातोंसे मोक्षको प्राप्त होते है यह " इनके साधुओंका भेद है "— अब आपही विचारो कि, अगर बाबाजी इसका परमार्थ किसीसे जान लेते और परभवका डर करके यथार्थ ठीक ठीक अर्थ लिख देते तो भोले भाले जीव हरगिज भी बाबाजीके जालमें न फसते ! मगर बाबाजीका तो पेशाही यह था कि, जो मनमें आवे सो लिख दो, कौन देखता और तहकीकात करता है ! वह तो अपने दिलमें यही समझते थे कि, मेरे लिखेको तो लोग ईश्वरका वचन समझेंगे !

मनीराम— (बडे शोचमें पडकर कुछ देर बाद) अच्छा तो पूर्वोक्त श्लोकका यथार्थ अर्थ क्या है ? जिसका यथार्थ अर्थ और परमार्थ " स्वामीजी " ने नहीं पाया ! आपही कहिए !

सुमतिचंद्र—इसका अर्थ तो मैं आपको बतला देता हूं मगर श्वेतांबर और दिगंबरोंमें कितना फरक है यह देखनेकी

यदि आपकी इच्छा हो तो जैनाचार्य श्रीमद् विजयानद सूरि (आत्मारामजी) कृत " तत्वनिर्णय प्रासाद " के तेतीसवें (३३) स्तंभको देखना, वहां विस्तार पूर्वक खुलासा किया हुआ है.

लो अब श्लोकका असली अर्थ सुनिये !.

"भुंक्ते न केवली न स्त्री, मोक्षमेति दिगंबराः ।
"प्राहुरेषामयं भेदो, महान् श्वेतांबरैः सह ॥ "

अर्थात्-[केवली] केवलज्ञानी-ब्रह्मज्ञानी [न] नहीं [भुक्ते] भोजन करते [स्त्री] स्त्री-औरत [न] नहीं [मोक्षं] मुक्तिको [एति] प्राप्त होती, ऐसे [दिगंबराः] दिगंबर [प्राहुः] कहते है [एषा] इन-दिगंबरोंका [अयं] यह [महान्] मोटा [भेदः] भेद [श्वेतांबरैः सह] श्वेतांबरोंके साथ है.

मतलब कि जैन मतकी दो शाखाए कही जाती है, एक श्वेतांबर और दूसरी दिगंबर. जिनमें श्वेतांबरका मतव्य है कि,यदि स्त्री मुक्तिका साधन करलेवे तो सर्व कर्मका क्षय कर मोक्षको प्राप्त होती है. और दिगंबरोंका मतव्य है कि, स्त्री चाहे कितनाही साधन करे परंतु मोक्षको नहीं प्राप्त होती ! इस भेदको दिखलानेके बदले बाबाजीने अपना जुदाही तोलड राग गाया है ! सो आप

स्वयही विचार करलेवें-'स्त्रीससर्ग' यह अर्थ बाबाजी कहासे लाए ?

मनीराम-बेशक यह अर्थ तो " स्वामीजी " ने बिलकुलही झूठा लिखा है !

सुमतिचद्र-अभी क्या ? आप जरा ठहरिये तो सही, मैं आपको बाबाजीकी सैंकडों नहीं बल्कि हजारों ऐसी बातें बतलाऊगा ! देखिए, बाबाजीके बारेमें एक महाशयजो क्या कहते है वहभी सुनिए—

[जीवनतत्व] अखबार-देव समाजने लाहौर १० सितबर १९०५ में लिखा है कि—

" सवाल-बेशक मालूम होता है कि आर्यसमाजके स्वा-
" मी दयानद स्वामीभी इसी किसमके मत प्रचारक थे ?
" जवाब-इसमें क्या शक है वेदोंके ईश्वर रचित बनाने
" के बारेमें उनकी कुल मन घडत गप्पें और उनके
" मत्रोंके अर्थोंका उलट फेर साफ तौरसे जाहिर करता
" है कि स्वामी साहिब मौसूफभी ऐसेही " महर्षि " थे
" कि जिनके ख्यालमें किसी मजहबके फैलानेके लिए
" झूठ और रियाकारीका हस्न मौका इस्तेमाल न सिर्फ
" दुरुस्त और मुनासिब है बलकि बहुत काबले तारीफ
" भी है मतलब देखिए यही दयानद साहिब शकराचा-
" र्यके वेदात मतका खडन और जैनियोंके साथ उनके
" शास्त्रार्थका बयान करके अपनी किताब सत्यार्थप्रकाश

" तबै दोयम्के २८७ सफा पर क्या कुछ तहरीर फर-
" माते हैं–अब इनमें विचार करना चाहिए कि अगर
" जीव और ब्रह्मकी एकता और जगतका झूठ मठ
" होना शंकराचार्यजीका सचमुच अपना अक़ीदा था
" तो वह अच्छा अक़ीदा नहीं है और अगर जैनियोंके
" खंडनके लिए उन्होंने उस अक़ीदाको इख्तियार
" किया है तो कुछ अच्छा है—

" अब देखिए यहां पर स्वामी दयानंद साहिब अपने
" आपको अपने असल रंगरूपमें जाहिर करते हैं यानी
" वह कहते है कि अगर शंकराचार्यजीका जो उनके
" कौलके बमुजिब वैदिक मजहबके कायम करने वाले
" थे जीव ब्रह्मकी एकता और जगतका मिथ्या यानी
" झूठ मूठ होना सिदक दिलसे अपना यक़ीन या अ-
" क़ीदा हो तबतो वह अच्छा नहीं लेकिन अगर उन्हों-
" ने झूठ मूठ और मकारीके साथ उसे इस लिये मान
" रखा था कि उसके जरिए जैनियोंको जो वेदोंको
" नहीं मानते खडन किया जाय–तो कुछ अच्छा है–
" यानी वेदोंके नामसे अगर किसी मतके प्रचार करनेमें
" झूठ और मक्कारीसे काम लिया जावे तो ऐसा करना
" बुरा नहीं है–अब यह जाहिर है कि ऐसा सख्स
" जो वेदोंके नामसे जरूरत समझने पर सब किसमकी
" फरजी कहानियां और वेदमंत्रोंके झूठ मादने तैयार
" करेगा उसमें किसीको क्या शक हो सक्ता है यही

" ग्रायस है कि उनके वेद भाष्यको आर्यसमाजियोंके
" सिवाय कोई संस्कृत पंडित चाहे वह इस मुलकका
" हो और चाहे किसी और मुलकका ठीक नहीं
' मानता "

मनीराम– भाई ! यह " जीवनतत्व " का लेख तो सचमुचही " स्वामीजी " के अनुयायियोंको निरुत्तर करने वाला है.

सुमतिचन्द्र– क्या आप " स्वामीजी " के अनुयायी नहीं ?

मनीराम–बेशक ! मै उन्हींका अनुयायी हू, लेकिन

सुमतिचंद्र–हा ! हा लेकिन–लेकिन क्या आगे कहिए रुकते क्यों हो ?

मनीराम– (हंसकर) कुछ नही ! क्या कहूं ? "स्वामीजी" स्वयंतो इस बातको कर गये और जाते हुए अपने चेलोंकोभी यही नसीहत दे गये !

सुमतिचन्द्र– हैं हैं ! आपतो इतनीसी देरमेंही " स्वामीजी " के लेखका अनादर करने लगे ! समाजी लोग आपका नाम समाज पार्टीमे खारिज कर देगे ! बचके रहना !

मनीराम–कुछ परवाह नहीं ! मे सत्यका ग्राहक हू ! मुझे यह बात पसद नहीं है कि " मेरा सो सच्चा " मुझे तो यह पसद है कि " सच्चा सो मेरा "

सुमतिचंद्र–हां ! ओ हो ! तब तो आपको सत्यशोधक कहना चाहिए !

देखिए आपके बाबाजी सन् १८८४ के सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २८२ में लिखते हैं कि–" जो मनुष्य झूठ " चलाना चाहता है वह सत्यकी निन्दा अवश्य करता " है " इससे यह सिद्ध होगया कि, बाबाजीने अपना झूठ चलानेके लिएही सत्यकी निन्दाकी है ! वरना क्यों करते ?

इसमें बिलकुल शक नहीं कि, बाबाजीने अपना झूठ प्रचलित करनेके लिएही सत्य धर्म वालोंकी निन्दाकी है ! वरना निन्दा करनेकी जरूरतही क्या थी ? क्यों कि, बाबाजीके लेखसे साफ प्रगट है कि " जो मनुष्य झूठ चलाना चाहता है वह सत्यकी निन्दा अवश्य करता है "

मनीराम–भला यह तो हुआ, मगर " स्वामीजी " की लेखनी बडी जबरदस्त चली है !

सुमतिचंद्र–मेरे ख्यालमें तो बाबाजी जिसवक्त लिखने बैठते थे उस वक्त अपनी अकलको किसी खेतमें चरनेके लिए भेज दिया करते थे ! रही शरीरकी चेतना सोतो भगकी तरंगमें ही लग रहा करती थी ! इस लिए जबरदस्ती की तो फिर बातही क्या ?

[illegible] आप ऐसा क्यों कहते हो ?

सुमतिचंद्र–भाई साहब ! ऐसा इस लिए कहता हू कि, " बाबाजी " ८४ के " सत्यार्थप्रकाश " पृष्ट ५४ में लिखते है कि–" विना माता पिताके सतान पैदा हो नहीं सकती " और पृष्ट २२३ में लिखते हैं कि–"आदिमें अनेक अर्थात् सैकडों सहस्रों मनुष्य " (जवानके जवान विना मा वापके) ईश्वरसे" अब हसो बाबाजीकी बुद्धिपर ! क्यों कि, कहा तो " विना माता पिताके " लडका उत्पन्न हुआ ऐसा कथन सृष्टि क्रमसे विरुद्ध " होनेसे सर्वथा असत्य है " बतलाना, और कहा यह लिखना कि–" सृष्टिकी आदिमें अनेक अर्थात् सैकडों " सहस्रो (विना मा वापकेही) मनुष्य उत्पन्न हुए " शाबाश ! बाबाजीकी बुद्धिको ! जो कहीं परभी सीधे रास्ते न चली ! इसी बातपर ' देव समाज ' अखबार " जीवनतत्व " जिल्द अव्वल न० २७ × (२–७–५) में बाबाजीको—

" अब बाबाजीकी गप्प सुनो ,, यह चाद मिला है !

मनीराम–आप मुझे " जीवनतत्व " मे यह लिखा निकाल कर बतलाओगे ? (सुमतिचन्द्रके उत्तर देनेसे पहलेही)

ज्ञानचद्र– (जेबसे निकाल कर जीवनतत्वका परचा) लीजिए ! आपही पढिए !

मनीराम– (परचा लेकर पढने लगे)–" अब पंडित दया- " नदकी गप्प सुनो आप कहते हैं कि सृष्टिकी शुरूमे

" परमेश्वरने माँ बापके विनाहीं सैकड़ों आदमी पैदा
" कर दिए यह आदमी भी बच्चे पैदा नहीं किए गये
" बलके ईश्वरने एकदम बड़े बड़े जवान पैदाकर दिए"
(इतना पढकर परचा देदिया और बोले) भाई !
बेशक ! यह तो गप्पही है !

सुमतिचंद्र–अच्छा ! अब और सुनिए आपके बाबाजी " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ४३६ में–" जो कर्मसे मुक्त होता है वही ईश्वर कहाता है " ऐसा जैनकी तर्फसे प्रश्न बनाकर उत्तर देते हैं कि–" जब अनादि कालसे जीवके साथ कर्म लगे हैं उनसे जीव मुक्त कभी नहीं हो सकेंगे " सो यह क्या बात है ? जीव कर्मसे मुक्त होगा कि, नहीं ? आपके ध्यानमें क्या आता है ?

मनीराम–मेरेतो ध्यानमें कुछभी नहीं आता ! आपही इसका जवाब कहिए !

सुमतिचंद्र–जीव कर्मोंसे रहित होते आए है, होते हैं, और आगेको होंगे ! (हस कर) मगर आपके बाबाजी महाराजके साथ उन कर्मोंकी ऐसी दोस्ती है कि, बाबाजी अगर संसारकी जन्म मरण रूप विटंबनासे दुखी होकर मुक्त होनाभी चाहे, तो भी वह कर्म–चन्दजी ! बाबाजीको किसी कालमें भी न जाने देवेंगे !

अगर बाबाजी अपने माने मुताबिक मुक्तिमें चले भी जावे तो वे कर्म कुछ कालके बाद बाबाजीको फिर घसीट लावेगे !

ज्ञानचंद्र– (हस कर) यह तो बहुत ही अच्छी बात है कि, बाबाजीको कर्म महाराज मुक्तिसे छुडा लावे ! क्यों कि, मुक्तिको तो बाबाजीने कारागार (जेलखाने) की उपमा दी है !

मनीराम–यह कहा ?

ज्ञानचद्र–आपतो जान बूझकर अनजान बनते हो ! देखिए " सत्यार्थ प्रकाश " पृष्ठ २४१– " क्या थोडेसे कारा- " गारसे जन्म कारागार दडवाले प्राणी अथवा फासीको " कोई अच्छा मानता है जब वहांसे आनाही नहीं तो " जन्म कारागारसे इतनाही अंतर है कि वहा मजूरी " नहीं करनी पडती और ब्रह्ममें लय होना समुद्रमें डूब " मरना है "– इससे पहले–"इस लिए यही व्यवस्था " ठीक है कि मुक्तिमे जाना वहासे पुनः आनाही अ- " च्छा है । " क्यों ठीक है न ?

सुमतिचद्र– (मनीरामसे) इस बाबाजीके लेखको वह कौन आर्य समाजी है जो बेठीक कहे ! मेरी समझमें तो आर्य समाजियोंको मुनासिब है कि, मुक्त (कारागार) में जानेके कामहीं न करें तो अच्छी बात है, क्यों कि

खानेमें जानेका दाग तो लगही जायगा ! और वह वापस आनेपर किसी न्यायालयमें नौकरी नहीं कर सकता, विकालतका चोगाभी नही पहन सकता ! क्यों कि वह डामिस हो चुका ! रहे बाबाजी, सो तो हरामकी रोटिया खानी पसदही नही करते थे ! क्यों करे ? जिनकी टागोंमे जोर हो वह हरामकी क्यों खायें ? बाबाजी जैसोंको मजूरी करके खाना मजूर था, मगर हराम खोर बनना अच्छा न था ! हलालखोरही बनना अच्छा था ! और मुक्ति " जन्म कारागारसे इतनाही " अतर है कि वहा मजूरी नही करनी पडती " तो जिसको मजूरी करकेही ससारमें अपने दिन काटनेकी हिम्मत हो उसको जिस मुक्ति स्थानमे मजूरी नहीं वहा जाकर " समुद्रमें डूब मरना है " क्या जावे ?

मनीराम–भला " स्वामीजी " ने मुक्तिसे वापस आना क्यों माना ?

सुमतिचंद्र–भाई ! आपके " स्वामीजी " की बुद्धि दो प्रकारकी थी ! एकतो पहला–" सत्यार्थप्रकाश " वेद भाष्य भूमिका " आदि ग्रथोंके बनानेके वक्त, और दूसरी कुछ थोडे साल बाद बदल गई ! जिस बुद्धिने एकदम दूसरी तीसरी बारके " सत्यार्थप्रकाश " में और ही रंग दिखलाया ! कहो किस बुद्धिके अनुसार उत्तर दू ?

मनीराम–हमको तो उत्तरसे मतलब है !

सुमतिचन्द्र—अच्छा तो लीजिए यही ८४ का "सत्यार्थप्रकाश" इसीके मुताबिक उत्तर लो ! पृष्ठ २४० पंक्ति २७ से—

" मुक्तिके स्थानमें बहुतसा भीड भडक्का हो जायगा
" क्यों कि वहा आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं
" होनेसे बढतीका पारावार न रहेगा " इसी कारणसे बाबाजीने मुक्तिसे वापस आना माना माल्म देता है ! और शायद यहभी माल्म देता है कि, इस प्रकारकी मुक्तिमें बाबाजी कभी पहले किसीके सिखे सिखाए भूलमें चले गए होंगे और वहा बहुतसे इकठे हुए हुए कैदियोका भीड भडक्का देखकर भाग आए हो ! अथवा किसीके साथ दगा फिसाद हो पडा होगा ! क्यो कि, आज कलभी कई एक जेलखानोंमें कैदी लोग आपसमें लडपडते हैं, और मियाद पूरी होने पर निकाल दिए जाते हैं, यही बात अगर बाबाजीके साथ बनी हो तो कोई आश्चर्य नहीं ! और मुन्शी " इन्द्रमणिजी " साहब तो बाबाजीका मुक्तिसे वापस आनेका मानना " अननतप्रकाश " के पृष्ठ ३८ में इस प्रकारसे लिखते हैं कि—

" जालधर नगरमें स्वामीजीकी किसी इसाईके
' साथ मत विषयकी बातचीत हुई इसाईने कहा कि
" जब तुम जीवोंको अनादि मानते हो और उनकी उ-
" त्पत्तिका निषेध करते हो इस दशामें यदि एक एक
" जीव भी मुक्तिको प्राप्त करे तो किसी समय सम्पूर्ण

" जीव मुक्त हो जायगें और संसार प्रवाहका उच्छेद हो
" जायगा स्वामीजीने उत्तर दिया कि जीव अनन्त
" और असंख्य है अतएव जीवोंकी समाप्ति और सं-
" सारका उच्छेद कभी न होगा । इसाई बोला कि
" परमेश्वर सपूर्ण जीवोंको जानता है वा नहीं ? स्वामीजीने
" कहा कि परमात्मा सब जीवोंको जानताभी है और
" सबके कर्मोंका फलभी देता है इसाईने कहा कि जब
" यह बात है तब तो जीव अनत नहीं है यदि अनंत
" होते तो परमेश्वरको सब जीवोंका ज्ञान किस प्रकार
" होता और वह प्रत्येकके कर्मोंका फल कैसे देता तब
" स्वामीजीने इसाईको तो जैसे तैसे चुप करादिया
" परंतु आप अज्ञानमें पडकर कहने लगे कि जीवोंका
" अनत होना मिथ्या है हां मुक्ति सदाके लिए नहीं
" है किन्तु एक कल्पके पश्चात् मुक्त जीव फिर संसारमें
" आते है "

अब विचारना चाहिए कि, अगर बाबा दयानन्द जीको मुक्तिसे लौट आना यह माननेका कारण मुन्शी-जीके कथनानुसार वह इसाईजीही हों तो, कोई तअज्जुबकी बात नहीं है ! ऐसाही हुआ मालूम देता है, वरना पहले " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ १६१ मे ये लिखते हैं
" कि–फिर कभी जन्म मरणमें वह पुरुष नहीं आता
" सदा आनदमेंही परमेश्वरको प्राप्त होके रहता है "

पृष्ठ १६७–"पाप पुण्य रहित जब शुद्ध होता है तब

" सनातन परमोत्कृष्ट ब्रह्म उसको प्राप्त होता है फिर-
" कभी दुःख सागरमें नहीं आता "

ऋगवेद् भाष्य भूमिका पृष्ट ११२ " मुक्तिका उत्तम सुख मिलता है जिससे छुटके वे दुःखमें कभी नहीं गिरते"

" जन्म मरणको जीतके मोक्ष सुखको प्राप्त होजाते हैं " इत्यादि जगह जगह पर उन्होंने ऐसाही लिखा, मगर मुन्शीजीके लिखे मुताबिक मालूम देता है कि इसाईजीन बाबाजीकी बुद्धिको ऐसा चक्करमें डाला कि जो रही सही बुद्धिथी वहभी बाबाजीको छोड कर भागी, जो फिर अततकभी बाबाजीके पास न आसकी!

बडे खेदकी बात है कि, न जाने हमारे आर्य समाजी साहब क्यों नहीं बाबाजीकी बुद्धिको गौरसें विचारते कि, उस इसाईके एक तुच्छ जैसे प्रश्नका उत्तर न दे सके उससे निरुत्तर होकर मुक्तिसे लौट आना मान बैठे, और एक दम मुक्तिको जेलखानेकी उपमा देदी! बाबाजीने मुक्तिके विषयमें कोईभी शास्त्रीय प्रमाण या प्रबल युक्ति नहीं दी. जब और बातोंके लिएही प्रबल युक्तिया या शास्त्रीय प्रमाण नहीं दिए तो मुक्तिके लिए कहासे लाते ? जैसे और बातें झूठ मूठ इधर उधरसे इकट्ठी करके दो चार थोथे पोथे बना दिये इसी तरह किसी जेलखानेको देखकर मुक्ति बनादी! और उसमें भीड भडक्केकी प्रबल युक्ति देकर मुक्तिसे वापस आनाभी

सिद्धकर दिया ! बाबाजीके पास तो ऐसीही ऐसी युक्तियां थीं कि-

" मुक्तिके स्थानमें भीड भडक्का हो जायगा क्यों कि " वहा आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं होनेसे बढ- " तीका पारावार न रहेगा " इस लेखसे मालूम होता है कि, बाबाजी मुक्तिके स्थानको देख आए हैं, और लंबाई चौडाईकाभी माप कर आए है, लेकिन मुझे यह जान लेना मुशकिल हो रहा है कि, बाबाजी जैसे लट्ठ पुट्ट वहा कितने आदमी समा सकते है ?

ज्ञानचंद्र- (मनीरामकी तरफ हस कर सुमतिचंद्रसे) भाई ! " मुक्तिके स्थानमें भीड भडका होजायगा " बाबाजी के इस लेखसे मालूम होता है कि, बाबाजीको इसाई- जीसे निरुत्तर हो जानेके कारण मारे चिन्ताके सारी रात नींदमें पडे हुए सुपनेमें भीड भडके वालाही मकान नजर आया होगा ! इस लिए उसीको बाबाजीने मुक्ति स्थान समझकर अपने पोथेमें लिख दिया होगा !

मनीराम-भला " वहा आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं होनेसे बढतीका परावार न रहेगा " क्या यह हमारे स्वामीजीकी युक्ति मुक्तिके विषयमें कुछ कम है ?

सुमतिचंद्र- (हस कर) क्या कहना है इस युक्तिका ! यह युक्ति बडी प्रबल है हमको इस बाबाजीकी युक्तिमें

अच्छी-तरह पता लग गया कि, बाबाजीको आत्मा रूपी (मूर्त्त) पदार्थ है या अरूपी (अमूर्त्त) इसबातका बिलकुलभी पता नथा, और ईश्वरकाभी पता नहीं लगा कि, वह साकार है या निराकार ? वरना यह कुयुक्ति न पैदा होती, और नाही अपने पहले मतव्योंको उलट पुलट करनेकी नौबत आती ! लेकिन इसमेंभी बाबाजीका कुछ दोप नहीं ! दोषतो उनके पूर्वोपार्जित कर्मोकाही मानना चाहिए या उनके माने फलप्रदाता ईश्वरका कि, जिससे उनकी मति एक दम बदल गई ! मनीराम जी ! देखो बुरा न लगाना ! बाबाजीकी युक्तिने तो कमाल कर दिया-" वहा आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं होनेसे बढतीका पारावार न रहेगा " तुम्हारे बावा आदमकी बुद्धि पर मै कुरबान जाऊ !

मनीराम-भाई ! अब आप मुझे बनाओ तो मत मगर सीधी तरह इस युक्तिका उत्तर दो !

सुमतिचद्र-अच्छा ! अभीतक तुमको यह युक्तिही मालूम दे रही है ? भाई मेरे ! जरा गौरतो करो कि, अरूपी आत्माका अरूपी ब्रह्ममें लय होनेसे भी कभी भीड भडका हो सकता है ? अगर ऐसाही हो तो समुद्रके अदर हजारोंही नदियोंके साथ जो रेता-बालू बह बह कर जाता है उससे तो समुद्रके अदर बडेबडे बालुरेतके टीबेके टीबे पहाड जैसे सैकडों और हजारों बलकि लाखो हो गए होंगे ! शायद आपने तो देखेभी होंगे ! और

बावाजीनेभी कभी उन रेतके पहाडों पर चढकर समुद्रमें डूबी हुई अपनी बुद्धिको ढूंढा हो तोभी कोई तअज्जुब नहीं ! लेकिन समुद्रमें पडी हुई वस्तु किसी भाग्यशाली कोही प्राप्त होती है ! अगर बावाजी मोटी दृष्टिसेभी विचार करते तो मुक्तिमें भीड भडका धक्का याद न आता और खोटा कक्का बनाकर ससाररूप मक्काका सक्का बनानेको जी न चाहता !

ससारमे छोटे छोटे आदमी भी इस बातको समझ सकते हैं कि दृष्टि (नजर) एक रूपी (मूर्त्त) पदार्थ है वोभी जगा नहीं रोकती है ! जब कभी कोई वेश्या नाटक करती है उस वक्त हजारों आदमियोंकी नजर उसके एक छोटेसे मुंहपर पडती है वहा किसीकोभी भीड भडकेका धक्का न लगता है और न लगा सुना है और नाही उस नर्त्तकीका मुह भरता या मोटा होजाता है लक्ष क्या करोंडों आदमियोंकी नजर पडे तोभी मुह उतनाहीका उतना और सबकी नजर उस मुहमेंही समा जाती है तो सर्व व्यापक अनंत परमात्मामेंही मुक्तके अमूर्त अनत जीव नहीं समा सकते ? या वे अमूर्त मुक्तरूप जीवसे जगा भर जाती है और भीड भडक्का हो जाता है !

अगर अमूर्त्त वस्तु जगा रोकती है और उससे भीड भडक्का होजाता है तो बावाजीका माना सर्व व्यापक परमेश्वरही सब जगाको रोक लेवेगा और भीड भडक्का

हो जानेसे अन्य किसी पदार्थको तो रहनेका एक तिल मात्रभी स्थान न मिलेगा क्यों कि बाबाजीके परमात्माने सबही जगा रोकली है अगर कोई जगा बिना रोके बाकी रही है तो बाबाजीका परमेश्वर सर्व व्यापकभी न ठहरेगा तबतो बाबाजीको व्याज छोडके मूलसेभी हाथ धोने पडेंगे !

मनीराम– (एकदम) बस साहिब ! बस ! बहुत हुई स्वामीजीकी लीला अपरपार है !

ज्ञानचन्द्र–अजी साहिब ठहरिये अभी मत घबराइये जरा औरभी सुनिये बाबाजीके परमेश्वरमें अनंत ज्ञान बाबाजीने माना है वहभी नहीं समायेगा जरा गौरसे शोचना बाबाजीके परमात्माका ज्ञान बाबाजीके परमात्मासे अधिक है या न्यून ? यदि अधिक है तो छोटी चीजमें बडी चीजका समावेश कदापि नहीं हो सकता है और यदि न्यून है तो परमात्माका ज्ञान पूर्ण नहीं सिद्ध होगा । अगर बराबर है तो परमेश्वर अनंत न होनेसे ज्ञानभी अनंत नहीं हो सकता है क्यों कि परमेश्वरको स्वामीजीने आकाशसे मोटा लिखा है (वेदभाष्य भूमिका पृष्ठ ११) जब आकाशसे मोटा परमेश्वर हुआ तो आकाश छोटा हुआ और परमेश्वर आकाशसे भी बाहिर पहुंचा सिद्ध हुआ ! परंतु बाबाजीने शोचा नहीं कि आकाश न होगा तो वहां निग्घर अवश्यही होगा और वह निग्घर भी आकाशके बिना नहीं ठहर सकता

है तो आकाशसे बडा परमेश्वर इसका क्या परमार्थ निकल सकता है आकाश सूक्ष्म अमूर्त्त पदार्थ और परमेश्वर स्थूल और मूर्त्त पदार्थ सिद्ध होगा जब ऐसा हुआ तब तो परमात्माका अनत ज्ञान क्या हुआ और वह कहां समायेगा सो स्वयही विचार कर लेना—

और वेदोंका अनंत ज्ञान ऋपियोंके अंदर किस तरह समाया होगा ? क्यों कि– वेदोंमें ईश्वरका ज्ञान माना है और ईश्वरका ज्ञान अनता है जब अमूर्त्त पदार्थ जगा रोकता है तो अब विचारो उन आदित्यादि ऋपियोंके पेटमें वेदोंमें कहा, ईश्वरका अनत ज्ञान कैसे समाया होगा ?

सुमतिचंद्र–देखिए मनीरामजी ! आपके बाबाजीके पास गालियाहीं गालिया थी सो कलम द्वारा लिखकर अपने मुखको पवित्र बना लिया ! सच बात है कि, जो चीज जिसके पास होती है वह वही दिया करता है ! लेकिन बाबाजीने जो गालिया दी ह उन्हें हम कहा सभालते फिरें ? इस लिए मेहरबानी करके तुम अपने बाबाजीकी इमानतको हमसे लेलो ! फिर तुम्हारी मरजी चाहे अपने पास रखना, या समाजके सिपुर्द करना हमारे सनातनी भाईयोंने तो मयसूदके भुगतान कर दिया, और कर रहे हे ! हम यही सोचते थे कि, बाबाजी तो सिधार गये, मगर उनकी इमानत किसे दें ? सो तुमारी नेक नियती पर हमें विश्वास होनेसे तुम्हेही संभलाते है (मनीरामके हाथ पर हाथ मारके) लीजिए !

मनीराम–क्या कहना है ? इमानत वावाजीकी और लूं मैं ! जाओ जाओ ! दो जाके उनकी पूंजी सभालने वालोंको !

सुमतिचंद्र–यु वचनेसे छुटका नहीं है, तुमको भी वावाजीकी पूंजीका मान है ! खबरदार ! इनकार करनेसे काम न चलेगा ! सूद सहित लेना तो किनारे, मगर मूल लेनेमे भी इनकार करते हो ? मालुम होता है कि, कुछ दालमे काला जरूर है !

मनीराम–भाई ! आप दोनों जने मिलकर मुझे दिक, मत करो ! देखो " स्वामीजी " ने " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ४४० में लिखा है कि–" अब देखो जितना मूर्ति पूजाका झगडा है वह सब " जैनियोंके घरसे, और पाखंडोंका मुलभी जैन मत है "

सुमतिचंद्र–मनीरामजी ! आपके वावाजीको न जाने यह कैसी आदत थी कि, किसीको पाखंडी, किसीको धूर्त्त निशाचर, भंगी कुलोत्पन्न, शठ, आखके अंधे, कुम्हारके गधे, शैतान, अधर्मी, जंगली इत्यादि, किसीको कुछ, किसीको कुछ लिख लिख कर आनंदित होनेमें अपना परम धर्म मानते थे ! (वात काटकर वीचमें)

ज्ञानचंद्र–भाई ! वावाजी स्वय जैसे थे वे दूसरोंकोभी वैसा ही देखते थे ! क्यों कि, "सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ठ ४४०

में बाबाजीने लिखा है कि-" जो जैसा होता है वह अपने सदृश्य दूसरेको समझता है " इससे जैसे आप थे, वैसे दूसरेको समझते थे. और यह बातभी थी कि-" आप आखके अधे और गाठके पूरे " की औ-लाद थे ! देखो मनीरामजी ! बुरा न मानना ! यह शब्द मैं नहीं कहता, ऐसा शब्द बाबाजी जैसे महात्मा को कहना बडा भारी पाप है ! " बाबाजी " ने स्वयही मूर्त्तिपूजा करने वालोंको " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३०५ में लिखा है, और यह बात बाबाजीके जीवनच-रीत्रसेभी साबित है कि, बाबाजीका बाप शिवलिंगकी पूजा करने वाला था. तो अब बतलाइए इसमे कौन ना कहसकता है ? कि, बाबाजी " आखके अधे और गांठके पूरे " की संतान न थे ? अवश्य थे ! अपने बा-पका असर अगर बेटेमें आजावे तो आश्चर्य नहीं !

मनीराम-तो क्या बाबाजी आंखके अधे और गांठके पुरे थे ?

ज्ञानचंद्र-यह तुम कहो ! हमतो किसीके लिए भी ऐसा न कहेंगे, बाबाजीकी तो बातही क्या है ? हमने तो तुमको यह बतलाया है कि, जो बाबाजीने लिखा है ? औरभी जो कुछ हम बताएगे, वह बाबाजीका ही लिखा बता-एंगे ! सुनो बाबाजीका बाप वेद विरोधी था ! क्यो कि, बाबाजी "सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ठ ३१४ में लिखते हैं कि, " जो पाषाण आदि मूर्त्ति पूजते है वे अतीव वेद विरोधी

हैं ” वस इसी लेखसे वावाजी और उनके वाप दोनोंही जने–“ सत्यार्थप्रकाश ” पृष्ठ ३१९ में लिखे मुताबिक यानै–“ पाषाण आदिकी मूर्त्ति बना उसके आगे नैवेद्य “ धर घंटानाद टंट पु पु और शंख वजा कोलाहल कर “ अगुंठा दिखला अर्थात्–त्वमगुष्ठ गृहाण भोजन पदार्थ “ वाऽहं ग्रहिष्यामि, जैसे कोई किसीको छले वा चिढावे “ कि तू घंटा ले ” इत्यादि लेखानुसार पूर्वोक्त काम करने वाले थे ! तो आप और आपके वाप दोनोंही वेद विरोधी, वलकि अतीव वेद विरोधी सावित हो चुके ! मगर हमको क्या ? वे जाने उनके करम ! जो जैसा करेगा सो पायेगा ! लेकिन इतनी वाततो कहे वगैर हमसे नहीं रहा जाता कि, वावाजी लिखते हैं कि–“पाखडोंका मूल भी जैन मत है ” तो इस वावासाहवके लेखसे सावित होता है कि दुनियामें जितने मत हैं वे सवही जैन मतके पीछे हुए ! क्यों कि, पहले मूल होता है, वादमें शाखाएं फुटती हैं ! तो “ मूल जैन मत है ” इस वातको वावाजी मानतेही हैं तो यह वात सिद्ध हो चुकी कि, जैन मत अनादि, सब मतोंसे पहलेका है ! रहा “ मूर्त्तिपूजाका झगडा चला ” सो मर्त्ति पूजा क्या चीज है, और किसे कहते हैं ? उसके विषयमें मैं तुमसे फिर वात करूंगा ! मगर पहले वावाजीकी बुद्धिको देखिए ! आपकी बुद्धि जडके संसर्गसे जड होगई ! जडभी ऐसी हुई है कि शायदही वह कभी चेतन हो ! क्यों

कि, बाबाजी " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३१३ में लिखते है कि " जडका ध्यान करने वालेका आत्मा भी " जड़ बुद्धि हो जाता है " तो अब विचारो कि, बाबाजी सारी उमर जडही जडका ध्यान करते करते मरगए, मगर निःकेवल चेतनका दर्शन नहीं हुआ ! बाबाजीकी बुद्धिका जड होजाना बाबाजीके लेखानुसार लाजिमही था, सो उनकी बुद्धि जड़थी इस लिए जब तक वो दुनियामें रहे तबतक केवल चेतनका भान न हुआ, और नाही शुद्ध चेतन होनेका उपाय किया ! उपाय क्या करते ? शुद्ध चेतन होनेका जो जरिया था, शुद्ध चेतन बननेका जो उपाय था, वह तो बाबाजीको पथ्थरही पथ्थर भान होता था ! और सच बानतो यह है कि, अन्य भावना बाबाजीको उसमें जब आती अगर बाबाजी इन्सान होते !

मनीराम–बस बस चुपकरो ! बाबाजी इन्सान नहीं तो क्या हेवान थे ?

सुमतिचंद्र–भाई ! तुम एकदम जामेंसे बाहर क्यों होते हो ? बाबाजीके लिय हेवान शब्द तुम भले अपने मुखसे निकालो, हमसे तो यह नहीं कहा जा सकता ! लेकिन बाबाजीने स्वयंही " सत्यार्थप्रकाश " ७५ के पृष्ठ ३५ में लिखा है कि–" पाषाण आदिके मूर्त्ति पूजन एकका " देखके दूसरेभी करने लगे ऐसे भेडोंकी प्रवाहकी नाई

" लोग गतानु गतिक होते है जैसे एक भेड आगे चले
" उसके पीछे सब भेड चलने लगती है और जैसे एक
" सियार वा कुत्ता भोंकने लगे उसका शब्द सुनके अन्य
" सियार वा कुत्ते वहुत वोलने वा भोंकने लगते है वैसेही वि-
" द्याहीन मनुष्योंकी अंध परमपरा"इत्यादि–अब आपही
देखिए कि, बाबाजीका वह पुर्वोक्त लेख कि-" जो
जैसा होता है वह अपने सदृश दूसरोंको समझता है" इस
अपनेही लेखसे वावाजी स्वयं स्याल (गीदड) कुत्ते
विद्याहीन अंध सिद्ध हुए ! और लीजिए, आर्य समा-
जियोंके बाप मूर्त्ति पुजा करते हैं, किसीका वाप शैवधर्म
पालता नजर आता है तो, किसीका बेटा वैश्नव, किसी
का भाई कुछ औरही धर्म ! रही समाजियोंकी औरतें,
सो वे माता, मसाणी, अंबिका, भवानी पुजती फिरती
है ! कहो ! यह बात झूठ है ?

मनीराम–फिर इसमें क्या हुआ ? मेराही बाप शैव है ! तो
क्या आर्य समाज झूठा होगया ?

सुमतिचंद्र (हस कर) इसमे कुछभी न हुआ इससे हुआ यह
कि तुम बाबाजीके लेखानुसार सियाल, गिदड, कुत्ते
और विद्या हीन अंधकी औलाद साबत हुए !

मनीराम–अगर यु कहोगे तो बाबाजी महारजका बापभी
शिवलिंगकी पूजा करता था तो, क्या बाबाजी भी—

सुमतिचंद्र– (मनीरामका हाथ पकड कर) वस बस ! रहने
दो ! रहन दो ! भाई मेरे ! अपने मुखसे तुमही अपने

बाबाजीको एसा कहने लगे तबतो दूसरे कहें इसमें आश्चर्यही क्या ? लीजिए मुझे एक बात याद आई, कितनेक विद्वानोंको बाबाजीके मनुष्य होनेमेंभी शंका है ! इसी कारण राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के सी. एस. आई. बहादुर बाबाजीको अपने द्वितीय निवेदनमें लिखते हैं कि, " डॉक्टर टीबो साहब बहादुर स्वामी " दयानंद सरस्वतीजीके मनुष्य होनेमेंभी सदेह लिखते " हैं डाक्टर टीबो साहबको अपने सहीस आदि नौकर " के मनुष्य होनेमें कुछभी सदेह नहीं किंतु केवल स्वा- " मीजीको मनुष्य होनेमे सदेह करते हैं– "

मनीरामजी ! कहिए आपके बाबाजीने डॉक्टर टीबो साहबका क्या बिगाडा था जो बाबामें इन्सान होनेका शक गुजरा ? हा हो सकता है कि, अगर वह डॉक्टरथे उनको इस बातकी परीक्षा करनेकी कोई तदबीर याद हो ! उस जरिएसेही डॉक्टर साहबने बाबाजीको पशु लिखा हो तोभी मुमकिन हो सकता है ! अथवा कोई पशु जैसा काम करते देखा होगा ! वरना ऐसा वहेम कभी न करते और अपनी कलमसेभी ऐसा न लिखते !

मनीराम–अच्छा जाने दो इसबातको ! आप यह बतलाइए कि, दुनियामें वह कौन कौन मत है जो मूर्त्ति नहीं मानते ?

सुमतिचंद्र–हमें तो दुनियामें कोई ऐसा मत नहीं नजर आता जो मूर्तिको न मानता हो ! जबतक जीवको अपना आत्म स्वरूप (केवल ज्ञान) अथवा मोक्ष प्राप्त नहीं होता तब तक मूर्त्ति माने विना किसीकाभी गुजारा नहीं चलता !

मनीराम–पहले तो हमारे " स्वामीजी " के अनुयायी आर्य समाजी ही मूर्त्ति नहीं मानते औरकी तो पीछे बताएंगे !

सुमतिचद्र–तुम्हारे बावाजीके अनुयायी आर्यसमाजी मूर्त्ति नहीं मानते, यह कहना तो तुम्हारा हमें ऐसा मालुम होता है कि, जैसे कोई आदमी अपनी औरतसे आकर कहे कि, अरी मुझे क्या देखती है ? तूतो राड होगई ! और यहभी सामने अपने पतिको खडा हुआ देख कर रोने पीटने लग जावे !

मनीरामजी ! आपके बावाजीको मूर्त्ति पूजापर जितना द्वेषथा उतनाही अपने पोथेमें लिखकर अपने अपने अनुयायियोंको हमेशा सबके इष्ट देवोंकी निन्दा करनाही सिखा गए ! मैंने सुना है कि, तुम्हारे यहा बावाजीकी मूर्त्ति है, उसका तुम बडा अदब करते हो ! मुझे मालूम देता है कि, तुमको परभवमें सुखकी इच्छा नहीं देखो ! मूर्तिपूजा–भक्ति करने वालोंको तुम्हारे बावाजी ने गालिया देकर जो गति प्राप्तकी है अगर तुम्हारीभी उन्होंके पास जानेकी मरजी हो तो फौरन अपने घरसे

वाबाजीकी मूर्त्ति (जिसे तुम मुंबई से २५) रुपयेमें लाए हो) अभी जाकर फैंक दो ! अगर मूर्त्तिका अदब करोगे तो दुःख पाओगे तुमने वडी भारी गलती की जो आजतक तुम उस मूर्त्ति द्वारा बाबाजीका ध्यान धरते रहे और उसका अदब करते रहे

मनीराम—बस बस ! रहने दो रहने दो ! खबरदार ! अगर हमारे स्वामीजीकी मूर्त्तिकी बेअदवी करने वालेको जो मैं कभी देख पाउ तो उसका सिर तोडदूं !

ज्ञानचद्र—जो मेरे भगवान् प्रभू परमात्मा अवतारी पुरुषोंकी मूर्त्तिकी बेअदवी करनेवालेको जो मैं कभी देख पाऊं तो उसके नाक कान काटलूं !

सुमतिचंद्र— (ज्ञानचद्रसे) चुप चुप ! देखो ए अपने आप अपनेको मूर्त्ति पूजक सिद्ध कर रहे हैं !

ज्ञानचद्र— (सुमतिचद्रसे) अजी ये क्या ? इनके सभी समाजी बाबाजी मूर्त्तिकी पूजा भक्ति और अदब करते है मैंने एक जगह देखा था कि, आर्य मन्दिरमें सभा लगी तब एक मेजपर बाबाजीकी मूर्त्तिको खुबही सजाकर रखा जब एक लेक्चरारजीने बाबाकी मूर्त्तिको हाथ जोडकर यह कहा था कि–" महाशयो ! ये हमारे स्वामीजी महाराज इस कलिकालमें अवतार न लेते तो वेद धर्मका पोप पाखडीयो द्वारा नाश हो जाता " कहो इस प्रका-

रका अदब करना पूजा नहीं तो और क्या है ? समाजी लोग अच्छी तरह जानते हैं कि, हमारा गुजारा मूर्त्तिके विना एक मिनट भरभी नही चल सकना, मगर हठके मारे, बाबाजीका कथन झूठ न हो जाय, इस ख्यालसे झूठी बातको भी सत्य करनेकी कोशिस करते हुए नही शरमाते ! अगर समाजी लोग मूर्त्ति पूजक नहीं है तो बाबाजीकी मूर्त्ति देखकर उसमें यह कोई पाखडी, भाड या धूर्त्त है ऐसी कल्पना–भावना किसीको हुई ? बलकि उस स्याही कागजकी चित्रामकी मूर्त्तिको " यह स्वामी दयानदजी महाराज " वाहजी मनीरामजी ! अब तुमसे क्या कहूं ? कभी बाबाजी इस वक्त मौजूद होते तो तुमको तमाशा दिखाता !

मनीराम–स्वामीजीने ८४ के " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ट ३०५ मे लिखा है कि–" यह मूर्त्तिपूजा केवल पाखंडमत है जैनियोंने चलाई है " सो क्या बात है ?

सुमतिचद्र–बेशक बाबाजीका लिखना बिलकुल ठीक है. क्यों कि, " जो जैसा मनुष्य होता है वह प्राय' अपनेही स " दृश दुसरोंको समझता है " बाबाजी इस अपनेही लेखसे बाबाजी दयानंदजीका आर्यमत " केवल पाखड मत है " और बाबाजीनेही चलाया है ! अबलो रही मूर्त्ति पूजासो अगर लोग मूर्त्तिकीही पूजा करते हैं तो बिलकुलही बाबाजीका लिखना ठीक है, मगर जो लोग

मूर्ति द्वारा अगर अपने इष्टदेव ईश्वर परमात्मा वीतराग देवकी पूजा करते हैं तो बाबाजीका लेख बिलकुल झूठा! बाबाजीका मत बिलकुल झूठा ! ! और यह उनका केवल पाखंड मत है, जो कि बाबाजीने चलाया है !!!

मनीराम-हैं है ! यह क्या कहते हो ? मूर्त्ति पूजा नहीं ?

सुमतिचंद्र-हां हां मूर्त्ति पुजा नहीं !

मनीराम-तो क्या ?

सुमतिचंद्र-देव पूजा ! प्रभु पजा ! मनीरामजी ! मै जबीतो आपसे कहता हू कि, आप केवल बाबाजीकी लिखीहुई लकीरके फकीर मत बनो ! कुछ अपनी अकलसे भी विचार करो. जो लोग अनेक प्रकारसे सेवा-पूजा-करते हैं वह मूर्त्तिकी नहीं, किं तु जिसकी वह मर्त्ति है उस ईश्वर परमात्मा वीतराग देवकी सेवा भक्ति पूजा है यही तो एक बडी भारी भूल है कि, लोग विना मतलब समझे मर्त्ति पूजा कहने लग गए. लेकिन वह लोग जब मंदिरके अंदर जाते है और मूर्त्तिको देखते हैं तब वह लोग जिसकी मूर्त्ति होती है उसकाही नाम लेकर स्तुति प्रार्थना नमस्कार करते हैं ! न कि-हे पथ्थरकी मूर्त्ति तुझे नमस्कार हो ! तो अब कहिए कि, यह देव पूजा सिद्ध हुई या मूर्त्ति पूजा ? मगर जिस मूर्त्तिने अपने ईश्वर परमात्माका ज्ञान कराया वह मूर्त्ति हमारे लिए साक्षात् ईश्वर परमात्माकेही तुल्य है. जिसका दिल प

थरके समान होता है उसको तो वह मूर्त्ति पथ्थर दिखाई देती है, और जिनके अंदर वह मूर्त्ति साक्षात् इष्टदेव ईश्वर परमात्माही मालम होता है उन लोगोंको तो उस मूर्त्तिको पथ्थर कहनेवालाही पथ्थर जैसा लगता है !

मनोराम–वाह जी वाह ! यहतो आपने खूब कही ! मुझे और मेरे बाबाजी दोनोंको पथ्थर बनादिया ! क्या बाबाजी और मै पथ्थर ?

सुमतिचद्र–अगर तुम और तुम्हारे बाबाजी पथ्थर होते तो कहनाही क्या था ? दुनियामें लोगोंके काम तो आते ! तुम्हारे बाबाजी तो पथ्थरसेभी कठोर निकले कि, जिन्होंने हरएक मत वालोंके कोमल हृदयको उनके धर्मकी निन्दा करके दुःखाया और सताया ! जबतक बाबाजीने अवतार नहीं लिया था, तबतक हिंदुस्तानमें लोग बडे अमन चैनमें थे ! बाबाजीके पहले किसीने ताऊन (प्लेग) का नामभी न सुना था ! न जाने बाबाजीने ही अपने दयानन्दी शरीरको छोडकर रहा सहा बदला लेनेको ताऊनका अवतार धारण किया हो तोभी कोई आश्चर्य नही ! इस बातमें बाबाजीकाही लेख साक्षी समझना देखो “ सत्यार्थप्रकाश ” पृष्ट ३८५–“ धर्मात्मा अधिक “ होने और अधर्मी न्यून होनेसे ससारमें सुख बढ़ता “ है और जब अधर्मी अधिक होते हैं तब दुःख ” सो दयानन्दी दल जबसे बढा तबसे लाखों आदमी ताऊनका

ग्रास वनगए, दयानंदीयोंकी निन्दासे लाखों आदमीओं के हृदय विदीर्ण हो रहे हें !

धर्मी लोगोंका दिल दुःख रहा है, दिनपर दिन कुसंप वढ़ रहा है, वस जवसे अधमी दल वढा तवसेंही लोग दिनपर दिन दुःखी होने लगे ! एक एक औरतको दश दश-खसम करनेकी आज्ञा है ! यह दयानंदीयोंका उपदेश सुनकर लाखोंही पतिव्रता सती कुलीन स्त्रियोंका हृदय थर्राता है ! कलेजा कापता है ! शरीरके रूमटे खडे होते हैं ! विचारिया मारे दुःखके आंखोंसे आंसुओंकी धारा वहाकर वावाजीके इस व्यभिचार वर्धक धर्मको धिकारती है ! हाय ! कैसा गजव ! ऐसा अधर्म शास्त्र विरुद्ध पशुओं जैसा खोटा आचार करना तो दरकिनार, लेकिन कानोसे सुनाभी नहीं जाता ! अरे इस दुःखको देख कर पथ्थरभी पसीज जाये ! मगर वावा दयानन्दजीके हाथसे यह लेख लिखा कैसे गया ? हमें इसी वातसे मालूम होता है कि, वावाजीका दिल पथ्थरसेभी कठोर था ! और तुमभी पथ्थरके भगत पथ्थरही हो !

मनीराम–आप जी चाहे सो कहें ! लेकिन देखिए आपलोगोंके लिए हमारे " स्वामीजी " महाराजने " सत्यार्थप्रकाश " पृष्ठ ४३१ में लिखा है कि–" सवसे वैर, " विरोध, निन्दा, ईर्षा आदि दुष्ट करम रूप सागरमें " डुवाने वाला जैन मार्ग है जैसे जैनी लोग सवके

" निन्दक हैं वैसा कोईभी दूसरा मत वाला महा निन्दक " और अधर्मी न होगा " सो कैसे ?

सुमतिचंद्र–देखो मनीरामजी ! तुम इन अपने बाबाजीके वाक्योंको सुनाकर अगर हमसे उत्तर चाहते हो तो अपनी आंखोसे पक्षपातका चशमा उतार कर शांतिसे देखो, और जो कहता हूं उसे सुनो ! अगर गौरसे विचारा जाय तो यह पुर्वोक्त अक्षर तुम्हारे बाबाजीमेंही थे, तभी उन्होंने लिखे ! क्यो कि, वह आप खुद वैर, विरोध, निन्दा ईर्षा आदि कामोको करते थे, सोई मरते हुए तुमको और अन्य अपने मतानुयायीयोंको सिखागए ! उनके चेले उनसेभी बढ़कर निकले ! बाबाजी अगर किसीको दशगालिया देगए होंगे तो, चेले बीस देनेको तैयार है ! बडे अफसोसकी बात है कि, अगर बाबाजी हरएक मत वालोंको इस प्रकारकी गालिया न लिखते तो क्या " सत्यार्थप्रकाश " को ' असत्यार्थप्रकाश ' या ' मिथ्यात्वप्रकाश ' कोई कहता, या लिखता ? किसीकी ताकत थी कि, बाबाजीको *कलयुगानंद, गपोडानंद आदि कहकर बुलाता, या कहता ? यदि गौरसे देखा जाए तो बाबाजीमें ' दयानंद ' इस निज नामकी भी शरम नही पाई जाती !

---

* इस पुस्तकके पृष्ठ ११–१२ आदिमें गन्, ये " दयानद स्तोत्र " के हैं.

मनीराम–कैसे ?

सुमतिचंद्र–कैसे क्या ? क्या तुमने सन् ७५ के सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ३०३ में अपने बाबाका लेख नहीं देखा ?

मनीराम–नहीं ! भला क्या लिखा है ?

सुमतिचंद्र–लिखा है कि–" और जो वंध्या गाय होती है " उसकोभी गौ मेधमें मारना लिखा है–स्थूल पृपती " माग्ने वारुणीमनड्वाहो मालभेत् यह ब्राह्मणकी " श्रुति है इसमें स्त्री लिंग और स्थूल पृपती विशेपणसे " वन्ध्या गाय ली जाती है क्यों कि वन्ध्यासे दुग्ध " और वत्सादिकोंकी उत्पत्ति होती नहीं और जो मास " न खाय घृत दुग्ध आदिकोंसे निर्वाह करे क्यों कि " घृत दुग्ध आदिकोंसे भी बहुत पुष्टी होती है सो जो " मांस खाय अथवा घृतादिकोंसे निर्वाह करे वेभी मत " अग्निमें होमे विना न खाये क्यों कि जीवको मारनेके " समय पीडा होती है उससे कुछ पापभी होता है फिर " जब वे अग्निमें होम करेंगे तब परमाणुसे उक्त प्रकार " सब जीवोंको सुख पहुचेगा एक जीवकी पीडासे भी " पाप भयाथा सो भी थोडासा गिना जायगा अन्य " था नहीं " तथा इसी " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३०२ में–" कोईभी मास न खाय तो जानवर पक्षी " मत्स्य और जल जतु इतने है उनसे शतसहस्र गुने " हो जाए "

मनीराम–हाय हाय ! अगर ऐसा लिखा है तवतो बहुत बुरा ! !

ज्ञानचद्र–मनीरामजी ! यह क्या ? अपने " स्वामीजी " के लेखको बुरा बताते हो !

मनीराम–बस मुझे मालुम होता है कि, स्वामीजी इसी डरके मारे वेमौत मरकर भाग गए कि, कहीं ऐसा न हो कि, मेरे उपदेश पर लोगोंने गौरतो नहीं किया. सबके दिलमें दया वस रही है इस लिए पशु पक्षी वढ जायगे मुझे रहनेको कहीं तिल जितनी जगाभी न मिलेगी ! देखिए

दयानन्द वावाकी दया ! सवत् १९३२ की " संस्कार विधि " के पृष्ट ११ में–" जो चाहे कि मेरा पुत्र पडित " सद्विवेकी शत्रुओंको जीतने वाला, स्वयजीतमें न आने " वाला, युद्धमें गमन, हर्ष और निर्भयता करने वाला " शिक्षित वाणीका बोलने वाला सब वेद वेदाग विद्या- " का पढने वाला और पढाने तथा सर्वायुका भोगने " वाला पुत्र होय वह मास युक्त भातको पकाके पूर्वोक्त " घृत युक्त खाय तो वैसे पुत्र होनका सभव है " तथा औरभी देखो–" अजाके मासका भोजन अन्नादिकी " इच्छा करने वाला तथा विद्या कामनाके लिए तित्त- " रका मास भोजन करावे " इत्यादि लिख कर वा- वाजीने तो अपने नामकोभी व्यर्थ कर दिखलाया ! आज तक मुझे " स्वामीजी " के ग्रंथों पर वडाही प्रेम

था, मगर इसको सुनतेही आज प्रेम तो क्या परंतु क्रोध उत्पन्न होता है ! बस अब मैं आपसे कुछ नहीं सुनना चाहता, आप मुझे घर जाने दो !

सुमतिचंद्र– (हाथसे पकडकर) अजी मनीरामजी ! यह क्या ? एकदमही तुमको यह क्या होगया ? जरा सबर करो ! अभी तो हमने आपसे बहुत कुछ बात चीत करनी है और बावाजी महाराजकी सत्य प्रियताको " दिखाना है. जैनीलोग सबके निन्दक हैं वैसा कोईभी " मत वाला महानिन्दक और अधर्मी न होगा " मनी रामजी ! अब जरा आपने अपने इस बाबाजीके लेखको देखकर जरा विचार करना कि, जैनियोंने अपने किस शास्त्रमें सबकी निन्दा की है ? और यह तो मैं तुमको दिखाता हूं कि, बावाजीने " सत्यार्थप्रकाश " में सब मतोंकी पेटभर निन्दाकी है ! देखिए–बाबाजीकी महा निन्दाका नमूना मात्र सत्यार्थप्रकाश–पृष्ठ ३१ "आख- " के अधे गांठके पूरे उन दुर्बुद्धि पापी स्वार्थी "

स० पृ० १२१ " क्यों भूसता है "

" " २३५ " वाहरे झूठे वेदांतिओ "

" " २८० " गडरिएके समान झुठे गुरु "

" " २९२ " जिसके हृदयकी आखे फूटगई हों "

" " २९७ " उन निर्लज्जोंको तनिकभी लज्जा न आई "

" " २९० " मुनिराहन भगी कुलोत्पन्न यावनाचार्य " यवन कुलोत्पन्न शठ कोप नाम कजर "

स० पृ० ३०७ " मदमति "

" " ३०९ " अधे धूर्त "

" " ३१७ " भठियारेके टट्टू, कुम्हारके गधे "

" " ३१९ " ठगोंके तुल्य निर्बुद्धि अनाथोंका माल
" मारके मौज करते है "

" " ३२२ " पुजारी पडे आलके अधे गाठके पुरोंको "

" " ३२६ " ऐसे गुरु और चेलोंके मुख-धूळ और "
" राख पडे "

" " ३३० " भागवतके बनाने वाले लाल बुझकड "
" क्या कहना है तुझको ऐसी ऐसी मिथ्या "
" बात लिखनेमें तनिकभी लज्जा और शरम "
" न आई निपट अधाही बनगया भला "
" इन झूठ बातोंको वे अधे पोप और बाहर
" भीतरकी फुटी आखों वाले उनके चेले
" सुनते और मानते हैं "

" इन भगवत आदिके बनाने हारे जन्मतेही
" क्यो नही गर्भहीमें नष्ट हो गए वा जनमते
" समय मर क्यो न गए "

" " ३३१ " तुम भाट और चारणोंसे भी
" बढकर गप्पी हो "

" " ४०२ " भाड धूर्त निशाचर वत महीधर आदि
" टीकाकार हुए हैं "

- स०पृ० ४३१ " सबसे वैर विरोध निन्दा ईर्षा आदि दुष्ट
" कर्म रूप सागरमें डुबाने वाला जैन मार्ग
" है जैसे जैनी लोग सबके निन्दक है वैसा
" कोईभी दूसरा मत वाला महा निन्दक
" और अधर्मि न होगा "

" " ४४० " पाखंडोंका मूलही जैन मत है
" " ५०५ " में-ईशूको शैतान-लिखा है
" " ५०९ " मे योहन आदिकोंको जगली-इत्यादि.

मैं कहातक तुमको बतलाऊ सिर्फ इतनेही उदाहर्णोंसे अपने बाबाजीकी परीक्षा करलो कि, महानिन्दक और अधर्मी कौन ? " जैसे जैनी लोग सबके निन्दक है वैसा " कोईभी दूसरा मत वाला महानिन्दक और अधर्मी न " होगा " इस बाबाजीके लेखको अगर तुम सच्चा करना चाहते हो तो, हम दावेके साथ कहते हैं कि, जैन धर्मके किसीभी शास्त्रमें अगर तुम कहीभी किसीकी निन्दा लिखी निकालकर बताओ ! वरना बाबाजीके पूर्वोक्त लेखसेही बाबाजीको महानिन्दक और अधर्मी होनेके कारण अपने मू पर कपडा डाल कर रोओ !

मनीराम-मैं क्यों रोऊ ?

द्र-तुम उनके सेवक हो ! इस लिए !

मनीराम–छिः ! वस खवरदार ! मुझे वावाजीका सेवक कहाते !

ज्ञानचंद्र–मनीरामजी ! तुम वावाजीके सेवक हो ! क्या ए झूठ है ? तुम समाजमें नहीं जाते ? तुम समाजी नहीं ? तुम्हारा समाजके रजिष्टरमें नाम नही ? तुम समाजीहो ! समाजी हो ! हजार दफा वलकि लाख दफा समाजीहो !

मनीराम–देखिए आप ज्यादती करते हैं, अव मैं समाजी नहीं !

ज्ञानचद्र–कवसे ?

मनीराम–जवसे आपलोगोंके साथ वात हुई तवसे ! वस मुझे मालूम होगया कि, यह "सत्यार्थप्रकाश" जिसको रात दिनं वगलमें दवाए फिरता था वह धर्म ग्रथ नहीं वलकि मेरी समझमें अधर्म ग्रथ है !

ज्ञानचद्र–अरे चुप चुप ! कोई सुनेगा तो ठोक वैठेगा !

मनीराम–क्यों ठोक वैठेगा ? मै किसीकी निन्दा थोडेही करता हू ! मैं साफ साफ कहूगा कि, इस जमानेमें अगर सत्य वोलने वाले और लिखने वाले कोई हुए है तो एक वावा दयानन्दजी ही हुए हैं ! क्यो कि, जिन्होंने अपने अदर जो औगुण थे वे साफ साफ प्रगट करदिए ! वरना ऐसा कौन अकलका दुश्मन है जो अपने आपको पाखडोंका मूल, शैतान, जंगली, कजर,

भडवा, भंगी कुलोत्पन्न, निर्लज्ज, अंधा, फूटी आंखोंवाला गप्पी, समुद्रमें डूबने वाला, निन्दक, महानिन्दक, अधर्मी आदि लिखें ! धन्य है बाबाजीको जो ऐसी उपाधियां धारण करते थे ! यह हिम्मत वालोंकाही काम है ! बाबाजी आपही स० प्र० के पृष्ठ ४४० में " जो जैसा " होता है वह अपने सदृश दूसरेको समझता है " इस अपने लेखसे जैसे आप थे वैसाही दूसरेको देखते थे ! देखो बाबाजी कैसे मर्द बहादुर थे कि " ऐश्वर्यकी इच्छाके लिए बैलसे भोग करे " है किसीकी ताकत जो आज न्यायवान् गवर्मेन्टके राज्यमें बैलके साथ भोगकरे ? देखो फिर लोहेके पींजरेमें जाना पडता है या नहीं ? यह हिम्मत वालोंका ही काम है ! अब किसीकी ताकत है ? हमें तो आज कल कोई ऐसा समाजी नजर नहीं आता जो बैलके साथ भोग करे ?

ऐश्वर्यकी इच्छाको तो बेशक चाहते हैं, पर वेभी, इस कामके करनेसे सारी उमर कंगाल और दरिद्री रहना मंजूर करेंगे, लेकिन ऐसा काम कभी भी न करेंगे ! मगर कुछ कहा भी नहीं जाता ! क्यों कि, बाबाजीके हुकमकी तामील करने वालेभी शायद कोई न कोई हों !

सुमतिचंद्र—भाई बाबाजी तुम्हारे, तुम जी चाहे सो कहो ! हमतो सिर्फ इतनाही कहेंगे कि, बाबाजी जिन्होंने सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ४३१ में " जैसे जैनी लोग सबके निन्दक है वैसा कोई भी दूसरा मत वाला महानिन्दक

" और अधर्मी न होगा क्या एक ओरसे सबकी निन्दा
" और अपनी प्रशंसा करना शठ मनुष्योंकी बातें नहीं"
इत्यादि लिखकर अपनी जबान और हाथोंकी "खाज मिटाइ है, और अपनी पंडिताई दिखाई है ! सज्जन जन पक्षपात और हठ दुराग्रहसे दूर रहने वाले धर्मप्रिय आपही कहते हैं कि, सब मतवालोंकी निन्दा करने वाले जैनी है या बाबा दयानन्दजी ? हमें तो बाबाजी जैसी निन्दा जैनियोंने किसीकी की हो नहीं मालूम होता ! बाबाजीने तो "सत्यार्थप्रकाश " मे ज्यों शुरूसे आखीर तक कलम चलाई है सिवाय निन्दाके दूसरी बात ही नहीं, और किसीभी मत वालेको बुराभला कहनेसे नहीं चूके ! शैव, शाक्त, वैष्णव, कबीर, नानक, दादू, गोकल स्वामी, स्वामीनारायण, जैन, बौद्ध, शंकर, पौराणी, ईसाई, मुसलमान, आदि सबकी निन्दा खूबही पेट भर की है. जैनियोंने इस प्रकार खोटी निन्दा कहीं भी की हो या लिखी हो तो बताओ ! हमारी समझमें पूर्वोक्त बाबाजीके लेखमें जहा जैन पद डाला है वहा बाबा दयानन्दका नाम डालकर पढ लेना चाहिए ! याने–" जैसे
" दयानन्द और दयानन्दी लोग सबके निन्दक है वैसा
" कोईभी दूसरा मत वाला महानिन्दक और अधर्मी न
" होगा क्या एक ओरसे सबकी निन्दा और अपनी
" अति प्रशसा करना शठ मनुष्योंकी बात नहीं ! "बस
यह बाबाका लेख मै बाबाजीको ही वापस देना योग्य समझता हूं !

मनीराम–बाबाजी तो मरगये !

सुमतिचंद्र–तो तुमही लेलो !

मनीराम–मुझे क्या जरूरत पडी है, जाईए ! उनके अनुयायीयोंको ही दे दीजीए ! आपने तो यह औरही बातें कहडाली ! इसमें मुझे फायदाही हुआ है, लेकिन मूर्त्ति पूजाके विषयमें जो मैं पूछ रहा था, उसका तो कुछभी खुलासा नहीं हुआ !

सुमतिचंद्र–हा बेशक ! लीजिए मूर्त्ति पूजाके विषयमें म दावेके साथ कहता हू कि, मर्त्तिके बगैर कोईभी ऐसा नहीं जिसका गुजारा चला हो या चले ! अपना झूठा हठ ताने जाना हो तो कोई उपाय नहीं ! मगर गौरसे देखा जायतो, क्या हिन्दु, क्या मुसलमान, और क्या ईसाई, सबही मूर्त्तिको मानते है. लेकिन बिना विचारे एक दूसरेको बुतपरस्त २ कह कर अथवा ऐसे वैसे कठोर शब्दोंको इस्तेमाल करके सिवाय चिढानेके उनके हाथ पल्ले कुछ नही आता !

मनीराम–क्या ईसाई और मुसलमानभी मूर्त्ति मानते और उसकी सेवा भक्ति करते हैं ?

सुमतिचंद्र–हा अव्वलदरजेकी सेवा भक्ति और अदब करते है !

मनीराम–मूर्त्तिकी सेवा भक्ति ?

सुमतिचद्र–हा हा मूर्त्तिकी ! मूर्त्तिकी !

मनीराम–आपको भाग चढरही मालूम देती है !

सुमतिचद्र–तुमको ऐसा मालूम होता है तो इसका कारण यही है कि, तुमको बाबाजीके वचनोपर पूरीतौर पर अमल करना आता है " जो जैसा होता है वह दूसरोंको अपने सदृश समझता है " वेशक ! इसी कलमके मुताबिक तुमको मे भगेडी नजर आता हू !

मनीराम–मैने तो कही भी उनको मूर्त्तिकी सेवा भक्ति करते नही देखा !

सुमतिचद्र–तुम बाबाजीकी कपनीके चसमेको अपनी आंखोंके आगेसे हटाकर अगर देखो तो अच्छी तरह दिखाई देने लगजावे !

देखिए मनीरामजी ! मेरी बात पर ध्यान रखना ! अपने हिन्दुस्तानके मुसलमान भाई, जहा उनका अपना " मक्काशरीफ " है, वहा यात्रा (हज) करनेको जाते हैं. यह तो तुमको मालूम है ?

मनीराम–हा यह तो मालूम है ! अभी मेरे एक दोस्त " इस्माइलखा " हज करके आए है.

सुमतिचद्र–अच्छा ! ओहो ! अब तो कुछ कुछ दिखाई देने लगा, यह सब न दिखनेका कारण आपकी आखोंके

आगे जड़ चसमोंही था, भला हज किसकी करके आया ? वहां मूर्ति है ? अथवा कोई आदमी बैठा है ?

मनीराम–आदमी काहेका ? वहा है उनके "पैगम्बर साहब" की दरगाह !

सुमतिचंद्र–क्यां भाई ! यह क्या ? जडकी सेवा भक्ति ! अदब तालीम ! उसके सामने अपने पापोंकी माफी मागना ! अपने गुनाहोंको बखसाना ! उस दरगाह सरीफके चूमे–बोसे लेना ! फूल चढाना ! कितना अदब ! कितनी मान्यता ! क्या अबभी मूर्त्ति पूजामें फरक है ? लीजीए मैं तुमें औरभी सुनाऊ ! (जहा आपके बावाजीके प्राण निकले) अजमेर शहरमें ख्वाजा मोइनुदीन चीशती साहबकी दरगाहका किस प्रकार पूजन होता है ! क्या है किसी बंदेकी मजाल जो उसकी बे अदबी कर सके ? यह मूर्त्ति पूजा नही तो और क्या इट चूनाकी पूजा है ? बस मनीरामजी ! मै ज्यादा क्या कहु ? मेरी आखों देखी बात है कि, अजमेर सरीफकी दरगाहकी भक्ति केवल मुसलमानही नहीं ! बलकि, हजारोंकी संख्यामें हिन्दु (ब्राह्मण–क्षत्री–वैश्य) भी करते हैं. खास चंद्रशेखर पडितकी स्त्री अपने पुत्र पुत्रीयो सहित खूब गाज बाजेके साथ वहा गई थी !

मनीराम–आपभी साथ गए थे ?

सुमतिचंद्र–हां मे उनके साथ सिर्फ इसलिएही गया था कि, उन्हें रेलमें तकलीफ न हो और वहा उतर कर जगह

वगैरह और बाजे आदिका इतजाम करना था। इस लिए पंडितजीने मुझे साथ भेजा था उनके लिहाजसे जाना पडाथा।

मनीराम–तो आप दरगाह सरीफ शायदही गए होंगे !

सुमतिचंद्र–नहीं नहीं मै साथमें अदर जहा दरगाह सरीफ है वहा गया था !

मनीराम–क्यों तुम क्यों गए ?

सुमतिचंद्र–यही देखनेको कि, ये वहा पर क्या क्या कार्रवाई करते है !

मनीराम–अच्छा फिर क्या देखा ?

सुमतिचंद्र–देखा क्या ? देखी मूर्त्तिपूजा !

मनीराम–कैसे ?

सुमतिचंद्र–जब पडितानीजी वहा गाजे वाजेके साथ बहुत सी मिठाई, फूल, अतर और धूप (अगर वत्तीयां) आदि लेकर गई तब उन्होने उस नामाकित मसिद्ध दरगाह (कबर) को गुलाब जलकी पाच बोतलोंसे अच्छी तरह धोया ! फिर अपने माथेके बालोंसे सारी दरगाहको लूंछ कर उसके इर्द गिर्दकी धूलभी अपने बालोंसे साफ की, पीछे अतर लगाया और एक हरे रगकी चद्दर

जा कि वडी वढिया रेशमी साथ ले गई थी वह चढाकर उसपर फूल गेरे और मिठाई और रेवडियां आगे रख कर धूप वगैरह किया। वहाके रहने वाले एक पीरजी, कि जिन्होंने वह सब कार्रवाई कराईथी उन्हें पांच रुपए दिए और हाथ जोडकर बोली कि–" पीरजी ! मैने मानता कीथी वह मेरी पूरी होनेसे मैं ख्वाजा साहबकी दरगाह पर हाजर हो अपना फर्ज अदा कर चली हू " पीरजीने लोबान मिलानेके कसोरेमेंसे थोडीसी भभूत लेकर पडितानीजीके हाथमें देते हुए कुछ आशीर्वाद सा दिया, और जो मिठाई और रेवडिया चढाईथी उनमेंसे थोडी थोडी रखकर बाकी अपने हाथसे पीरजीने वापस देदी ! इत्यादि–ऐसी कार्रवाई मैने आंखों देखी है. दिल्लीमें जुमामसजिदके सामने " हरेभरे साहब " की दरगाह पर भी यही हाल देखा, एक दिन एक हिन्दु स्त्री और दो मुसलमाननीने शामके वक्त जाकर चदर चढाई और उस दरगाहको जैसे किसीके पैर चापते है वैसे चापती रही और पंखा करती रहीं, बाद एक घंटेके दरगाहजीके पैरोंके भागको चूंमा और चली गई. ऐसी ऐसी कार्रवाईया आगरा, लखनऊ, मेरठ, गवालियर, दिल्ली दरवाजेके बाहर कोटला है वहां, और लाहोर, आदि सैकडो जगह यह मूर्त्ति पूजाकी रौनक मै खुद देख चुका हूं और तुम देखना चाहो तो मैं दिखानेको तैयार हू ! क्या यह मूर्त्ति पूजा नहीं ? हरसाल मोहरम्मोंमें ताजीए निकालते है, क्या यह पूजा नहीं ?

कुरानसरीफ क्या चीज है ? यहभी एक मूर्ति है, खुदाका कलाम धर्मशास्त्र मानकर ही उस कागज स्याहीका कितना अदब ? कितनी भक्ति ? किसी बातकी सहादत देनी होती है तो कुरानसरीफकी कसम खाते हैं। कहिए उसमें सिवाय जड़ वस्तु–स्याही कागजके अन्य कोई वस्तु दिखाई देती है ? नहीं ! सिर्फ उसमें खुदाके कलामकी स्थापना (मूर्त्ति) मान करही इतना अदब और भक्ति की जाती है.

इसी प्रकार ईसाई लोगोंके बारेमें समझ लीजिए, वह इंजिलका बडाही मान करते है और ईशु क्राइष्टकी मूर्त्तिको मानते हैं उसकी बे अदबी करने वालेको मारने मरनेको तैयार हो जाते हैं, क्या उस जड स्याही कागज या पाषाणमें ईशु आगया ? नहीं वह ईशु नहीं है, लेकिन ईशुकी असलियत प्रगट करने वाली वह नकल (मूर्त्ति) है, जिसको देखने मात्रसे ईसाई मात्रको अपना ईशा प्रभु याद आता है ! कहो अब कौन रहे जो मूर्त्ति न मानते हो ? बाबादयानन्दजी मरगए है मगर उनकी असलियत याद कराने वाली मूर्त्तियां समाजी महाशयोंके घर घर प्राय दो चार शहरोंमें मैंने देखी है ! बल्कि, मैंने उनसे पूछा भी कि–महाशयजी ! यह मूर्त्ति किसकी है ? तो बोले कि– " स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज " की. मुझे बडा अफसोस होता है कि, सरासर मूर्त्ति मानना और

दूसरोंको कहना कि हम मूर्त्ति नही मानते ! छिः कैसी वे समझीका पडदा तुम्हारी आखों पर पडा है ? जो देखते हुएभी इनकार करते हो ! वाहजी मनीरामजी !

मनीराम-भाई ! मूर्त्ति जिसकी हो उसकी न कहें तो क्या झूठ बोलें ?

सुमतिचद्र-शाबास ! मैं यही कहलाना चाहता था कि, मूर्त्ति जिसकी हो उसीकी कहो, और जिसकी वह मूर्त्ति है उसीकीही हमलोग पुजा करते हैं. कागज और रग-स्याहीकी मूर्त्तिमें तुम्हारे परम हस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानद सरस्वती बाबा अपने इस लबक लबे उपाधीके पूंछडे सहित आ घुसते हैं तो अफसोस है कि सत्य व्रत धारी समाजीदलका यह कहना कि, पथ्थरमें क्या परमेश्वर आ घुसा ?

अगर उस मुसलमानके हाथकी चितरी हुई रग वेरगी मूर्त्तिमें तुम्हारे बाबाजी जिनकी गतिकाभी ठिकाना नहीं कि, मरकर किस गतिमें गए हैं ? वह आ घुसे; तो साक्षात् परमात्मा अवतारी पुरुष जो निश्चय परब्रह्म मोक्षपदको प्राप्त हुए हैं उनकी मूर्तिमें उनका होना सर्वथा संभव है, यथार्थ है ! वह पथ्थर नहीं, हमारेलिए साक्षात् परमेश्वर परमात्मा है. प्रभु परमात्माकी मूर्तिको पथ्थर बतलाना याने बाबाजीको मूर्ति पूजा न माननेका कारण मुझे अच्छी तरह मालूम है.

मनीराम–भला क्या ?

सुमतिचन्द्र–इसका कारण यही है कि बावाजी जानते थे कि, मैं अगर मूर्त्ति पूजाका मंडन करूंगा और मूर्त्ति मानूंगा तो लोग मेरी मूर्त्तिकीभी पूजा करेंगे, लेकिन मैंने किसी के साथ सिवाय बदीके नेकी तो कीही नही, हर किसी को बुरा भला कहा है, सब धर्म, धर्मवालोंके नेताओंको गालिया दी है, ऐसा न हो कि लोग जहां कहीं मेरी मूर्त्तिको देखें वहांही अदब भक्ति पूजाके बदले दूसरेही प्रकारकी पूजा करने लग जावे ! यह लाजमी है कि, अगर मेरी मूर्त्तिकी बे अदबी हुई तो मेरी तो होही चुकी ! किसीकी मूर्त्ति पर जूता मारा जाय तो वह मूर्त्ति वालेकीही तौहिनी गिनी जाती है. हमने सुना है कि बम्बईमें किसी बदमाशने महाराणी विक्टोरिआकी मूर्त्तिके गलेमें जूतियोंका हार पहना, काले लुकसे चेहरा काला कर दिया था. इस वारदातके अगले दिन, उस वक्त जो बम्बईके गवरनर साहिब थे उन्होने सुना और हुकम दिया कि जो उस बदमाशको पकडे तो उसे सरकार अमुक इनाम देगी बस साबित हुआ कि मूर्त्ति एक ऐसी चीज है जो माने विना कोई बच नहीं सका. जो ऐसा कहने वाले हैं कि " मूर्त्ति कुछभी नहीं कर सकती " उनको यहां लाकर खडा करदेना चाहिए कि मूर्त्ति कुछ कर सकती है या नहीं ? अगर उस वक्त उस बदमाशका पता लग जाता तो क्या वह सारी जि-

न्दगीके लिए वडे घरमें पहुचे वगैर रहता ? नहीं हर-गिज नहीं ! ! देखिए पाषाणकी मूर्त्तिके गलेमें जूतोंका हार डालनेसे महाराणी विक्टोरियाके गलेमें वह नहीं पडगया था ! मूर्त्तिका चेहरा काला करनेसे महारा-णीका चेहरा काला नहीं होगया था ! फिर किस लिए सरकारको बुरा लगा, जो उस बदमाशकी तलाश करने वालेके लिए इनाम देनेको तैयार हुई ? इसी बातसे साबित होता है कि हमारी ब्रिटिस सरकार मूर्त्तिका मान करती है! मूर्त्तिको मानती है। हम इस बातके लिए सरकारको धन्यवाद देते हैं कि, जो मूर्त्तिकी बे अदबी करने वालेके लिए योग्य न्याय पूर्वक दंड देती है, अगर ऐसा न होता तो न जाने यह बाबाजीका नया दल क्या करता ? जयहो हमारे ब्रिटिस शासनकी जयहो ! !

मनीरामजी ! मूर्त्ति सबकुछ करसकती है, देखो मूर्त्ति में इतनी ताकत है कि, नहीं मानने वालोंके अंदर मू-र्त्तिको देखकर द्वेष उत्पन्न होता है और जो मानने वाले हैं उनके अदर शुभ अध्यवसाय–अच्छे प्रणाम आते हैं ! मगर नहीं मानने वालोंके दिलमें इतना तो जरूरही आता है कि, यह अमुक महात्मा या अमुक शखसकी मूर्त्ति है ! जब वह मूर्त्ति असलियतकी याद दिलाती है तो उसका आदर सत्कार पूजा भक्ति करने वालेको अच्छा फल क्यों न होगा ? अवश्यही होगा ! बस वह झूठोंके सरदार है जो कहते है कि, मूर्त्तिका मानना पा-

खड है ! सरासर खुद उस बापको करना और दूसरोंको देखकर पाखडी बताना ! वाहरी बाबाजीकी कचहरी ! ! !

ज्ञानचद्र– (सुमतिचद्रसे) साहब ! आपको मालूम नहीं ! बाबा दयानदजीकी बुद्धि बहुत दूर तक पहुची हुई थी, बाबाजीको जैसे " मुक्ति " जेलखानासी मालूम होती थी इसी प्रकार अपने आपको मूर्त्तिमें माननाभी वे मानिन्द कैदके समझते थे ! उन्होंने यह सोचा कि मेरा इतना बडा लबा चौडा शरीर एक छोटेसे कागजके या पाषाण आदिके थोडेसे टुकडेमें लोग लाएगे तो मुझे तग होना पडेगा ! क्यों कि–" जो मूर्त्तिके पूजने वाले " हैं उन सबनेही अपने अपने अवतारी पुरुषोंके जो " बडे २ शरीरभी थे उन्हें एक छोटीसी मूर्त्तिमें कैद " कर लिया है और उनका अनादर करते हैं देखो " क्या कभी किसीने दरीया समुद्रको भी कूजे (कुलडी) " में बद होते देखा है ? नहीं कदापि नही ! " तो बस इसी अपने विचारसे बाबाजीने मूर्त्तिका मानना अस्वीकार किया हो तो कोई तअज्जुबकी बात नहीं ! और बाबाजीका विचारभी ठीक है कि, उनके बडे बडे शरीरको एक जरासी वस्तुमें कैद करना क्या अच्छी बात है ?

सुमतिचद्र–मनीरामजी ! देखो मेरे भाईने तुम्हारा पक्ष लेकर क्याही बढ़िया बात ढूंढ निकाली है ! वाह भाई वाह !

मनीरामजी ! मैं तुमको एक बीती हुई बात सुनाता हूं दिल्लीमें एक दिन मैं बाहर जा रहा था इतनेमें घटाघरके पास एक हड्डी चमडोपासकजी मिल पडे, और विना सोचे विचारे मुझसे बोल पडे कि, आप मूर्ति पूजाके बडे भक्त हैं लेकिन बताइएगा कि वह जड मूर्ति पथ्थर क्या कर सकता है ! मैने उसको उसवक्त उसके प्रश्नके मुताबिक ही उत्तर देना चाहा, क्यों कि-अगर वह नरमाईके साथ पूछता तो मैं भी वही रस्ता पकडता, लेकिन महाशयजी तो आतेही जड पथ्थर उठाने लगे ! खैर आज कल का जमानाही ऐसा है कि, जबतक ईंट उठातेको पथ्थर न उठाया जावे तब तक वह चुपका नहीं होता! उसवक्त दो सिपाही पुलिसके वहां पर खडे थे, वेभी टहलते २ पासमें आगए, पांच सात आदमी और भी खडे हो गए ! मैने प्रश्न कर्त्ताजीसे कपनी बागमें कमेटी घरके सामने जो महाराणी विक्टोरियाकी मूर्ति है उसकी तर्फ दिखाकर कहा कि, बेशक मैं तुम्हारे कहनेको अभी इसी वक्त मंजूर करनेको तैयार हूं, मगर जरा अपने पैरका जुता उतारकर इस मूर्तिपर रख दो, अगर इस मूर्तिने कुछ कर दिखलाया तो, मेरा मूर्त्तिका मानना ठीक है ही, इसमें संदेहही कुछ नहीं ! अगर इस मूर्तिने कुछ न किया तो तुम जीते, हजार दफे तुम जीते ! और मैं हारा ! मेरा यह कहना सुन महाशयजी तो ऊपर नीचे देखने लगे, उत्तर कहां ? पडगये विचारमें मगर उन दो सिपाहिओंमेंसे एकने कहा कि, बस साहब !

आपका कहना तो ठीक है ! यह देखिए हथकडियाँ और कोतवालीका रास्ता ! पैरसे जरा जूता उतारनेका इरादा तो करे ! फिर देखो तमाशा ! उस सिपाहीके वचन सुनतेही महाशयजी नीची गरदन डालकर चल पड़े ! मैंने कहा भाई ! क्यों, मूर्त्ति तो कुछभी नहीं कर सकती ! क्यों घबराते हो ? बात तो सुनो ! मगर महाशयने एक न सुनी ! सुनना तो किनारे रहा, लेकिन पीछे फिरकर भी न देखा ! उक्त सिपाही, हालाँकि मोहोंमेदन थे, मुझसे बोले कि, वाह साहब ! आपने तो उत्तर क्या दिया बिचारेकी अकलमारदी, अगर आदमी होगा तो आज पीछे " जड़ मूर्त्ति पथ्थर कुछ नही कर सकती " यह कलाम अपनी जबानसे न निकालेगा ! लोग भी उस वक्त उसकी हंसी करने लगे ! इस लिए भाई मनीरामजी ! ईश्वर परमात्माकी मूर्त्ति बननेसे ईश्वरका कैदमें आना, अथवा अनादर होना, दोनोंही बातें युक्ति प्रमाण शून्य झूठी हैं

ईश्वर परत्मा अपना सर्वोपरि पूज्य तथा मान्य है इस लिए उसके नामकी मूर्त्तिया अधिक से अधिक बननी चाहिए और लोगोंको अधिकसे अधिक सेवा भक्ति पूजा करनी चाहिए ! रहा "क्या कहीं दरयाभी कूजेमें भरा जा सकता है ? " इसका उत्तर यही है कि, मूर्त्ति बनानेका जब हमारा यह उद्देशही नहीं है कि, मूर्त्ति वालेको मूर्त्तिमें ठुस ठुस कर भरें, तबतो यह दलील देनाही मूर्खता है

अगर कोई आर्य समाजी अपनी मूर्त्तिमें अपने आपको या बाबा दयानन्दकी मूर्त्तिमे बाबा दयानन्दको ठुंस २ कर भर दिखावे तो हमभी माननेके लिए विचार करेंगे ' इस लिए मूर्त्तिका मानना अर्थात् देवपूजा परमात्माकी सेवा भक्ति बिलकुल ठीक है, मगर समाजियोंकी समझमें न आवे तो कोई तअज्जुबकी बात नहीं ! क्यों कि जैसे चरस, गाजा, चंडु, शराब पीने वालेको, या रंडीबाज, ज्वारी, चोर आदिको कितनाही उपदेश दो, लेकिन वे उस अपने कामसे बाज नहीं आते ! उनकी बुद्धिमें अविद्याके कारण दुराग्रहने पूरा पूरा दखल कर लिया है ! वैसेही बाबा दयानन्दजी महाराजके भक्तोंको चाहे कैसेही युक्ति प्रमाणसे समझाया जावे लेकिन इनके हृदयमें प्रभू परमात्माकी उपासनाके विरोधने पूरा २ दखल कर लिया है, अब सुधरने और समझने वाले नहीं हैं !

मनीराम– " स्वामीजी महाराज " " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३११ में लिखते हैं कि " मूर्त्तिपूजा अधर्म रूप है " मनुष्योंका ज्ञान जडकी पूजासे नहीं बढ़ सकता " किन्तु जो कुछ ज्ञान है वहभी नष्ट हो जाता है इस " लिए ज्ञानियोंकी सेवा सगसे ज्ञान बढता है पाषाण " आदिसे नहीं क्या पाषाण आदि मूर्त्ति पूजासे परमेश्वरको ध्यानमें ला सकता है ? नहीं मूर्त्ति पूजा सीढी " नहीं किन्तु एक बडी खाई है जिसमें गिरकर चकना

" चुर हो जाता है पुनः उस खाईसे निकल नहीं स-
" कता किन्तु उसीमें मर जाता है " इत्यादि सो क्या
बात है ?

सुमतिचंद्र—रस भाई ! बात क्या है ? बात यही है कि,
मूर्त्तिपूजा धर्मियोंको धर्मरूप है, और अधर्मियोंको अध-
र्म रूप है. बाबाजीको तो मूर्त्ति पूजा अधर्म रूप ही
मालूम होती थी !

मनीराम—क्या बाबाजीको अधर्मी सिद्ध करना चाहते हो ?

सुमतिचंद्र—छिः ! हम अपने मूहसे बाबाजी महाराजको अ-
धर्मी कहें ? कभी नहीं ! लेकिन ईश्वर परमात्मा या
अपने २ इष्टदेवकी सेवा भक्ति पूजा, ऐसा उत्तम कार्य
आत्माके कल्याणका हेतु उसको तो बाबाजीने " मूर्त्ति
पूजा अधर्म रूप है " ऐसा लिख मारा तो धर्म रूप
बाबाजीने किसको समझा ? सो तुम आपही सोचलो !
बाबाजीका धर्म तो बहुत कुछ पुस्तकोंमें प्रसिद्ध हो
चुका है फिरभी तुमको थोडासा सुना देता हूं !

(१) हर किसी मतवालोंकी निन्दा करना !

(२) जिसमें अगलेका दिल दुखे ऐसे शब्द लिखने
जैसे कि—ईश्वर परमात्माकी मूर्त्ति मानने वालोंको
जडोपासक, पथ्थर पूजन करने वाले ! पाखंडी !

(३) एक औरतको (११) ग्यारा खसम करना,
कराना !

है ! नहीं है ! ! नहीं है ! ! ! लेकिन मूर्तिको अधिष्ठान मानते है । जैसे हर एक जीवात्माका अधिष्ठान हरएक शरीर है उस जीवात्माकी पूजा, सेवा, भक्ति अगर कोई करे तो उस शरीर रूप अधिष्ठानमे ही कर सकता है शरीरके सिवा उस जीवात्माका कहींभी पता नहीं लगता ! लगता तो क्या लगही नही सकता ! रहा शरीर सोतो चमडा, हड्डी, मास, लहु, मल मूत्र आदि इन जड वस्तुओंकाही समुदाय याने पुज है, क्या जीवात्मा की पूजा भक्ति करने वाला शरीरकी पूजा न करके केवल जीवात्माकी सेवा भक्ति पूजा कर सकता है ? अगर है किसीकी ताकत तो इस बातका ठीक ठीक जवाब देवे ! और अगर शरीरकी पूजा की तो पूर्वोक्त चमडा हड्डी मल मूत्रादि जडोकी पूजा होगी ! और अगर इन जडोंकी पूजा करनेसे जीवात्माकी सेवा भक्ति पूजा हो जाती है तो मूर्त्तिकी पूजा करनेसे जिसकी वह मूर्त्ति है उस ईश्वर प्रभु वीतराग परमात्माकी पूजा क्यों न होगी ? अवश्य होगी जिसकी वह मूर्त्ति है !

मनीराम–शरीर तो चेतन है, शरीरमें जीवात्मा प्रत्यक्ष प्रसन्न होता है, इससे जान लेते है कि, उसकी सेवा पूजा हो गई, वैसे मूर्त्तिमें चेतन देवता शरीरमें जीवात्माके तुल्य होता तो शरीरके तुल्य मूर्त्ति भी चेतन हो जाती और देव (जिसकी वह मूर्त्ति है वह) पूजासे प्रसन्न होना जाहिर करदेता !

सुमतिचंद्र–वाहजी वाह मनीरामजी ! क्या कहना ? तुम्हारी बुद्धितो सात समुद्र पार करनेको एक स्टीमरका काम दे सकती है ! तुमने तो शरीरको चेतन बना दिया ! बस तो जिसवक्त कोई समाजी मर जावे उस वक्त उसके शरीरको उसके शरीर प्रमाण घीमें होम देना–जलादेना तुम्हारे हिसाबसे उस चेतनकाही जलाना–होमना साबित हुआ, और जब चेतनही जल भुन कर राख होगया तो मोक्षभी न रही ! सुख दुःख, नरक, स्वर्गभी उडगया, जब चेतनही नहीं तो यह चीजें किसके लिए ? अरे भाई ! शरीर चेतन नहीं, लेकिन अग्निके लोहमें प्रवेश करने पर लोहा अग्नि रूप दिखाई देता है मगर लोहा अग्नि नहीं होगया, इसी तरह चेतन जीवके प्रवेशसे शरीर चेतन जैसा दिखलाई देता है, लेकिन शरीर चेतन नहीं है. अगर तुम प्रत्यक्ष प्रसन्नता चाहते हो तो प्रत्यक्षवादी सिद्ध हुए ! तबतो अगर कोई महात्मा मौन धारण किए–ध्यानमें मग्न, समाधि लगाए हुए है, और किसीसे किसी प्रकारका आंख या हाथ आदिसे इसारा भी नहीं करते. एसे महात्मा पुरुषकी कोई सेवा पूजा भक्ति करे उसको शरीरके दुःख सुख हानि लाभसे कुछ हर्ष शोकभी नहीं, और नाही वह उस सेवा पूजा करने वालेसे प्रसन्नता जाहिर करता है तो, क्या उसकी सेवा पूजा करना निरर्थक है ? उसको कैसे मान लोगे कि, उसकी सेवा पूजा होगई ?

अब रहा यह कि चेतन, देवकी मूर्त्तिमें मौजुद होने परभी शरीरोंके तुल्य मूर्त्ति चेतन क्यों नहीं हो जाती ?? तो इसका उत्तर यह है कि, तुम्हारा निराकार चेतन ईश्वर भी तो सबी जड पदार्थमें मौजूद है ऐसा तुम मानते हो तो, फिर वे सभी जड पदार्थ चेतन शरीरके तुल्य क्यों नहीं हो जाते ?

मनीराम-इसका उत्तर क्या दू ? आपही कहिए !

सुमतिचंद्र-अच्छा ! इसका उत्तर मेरसे सुनना चाहते हो तो सुनो, मै कहता हू, जीव कर्मोंका संबंध प्रवाहसे अनादि बद्ध है और कर्मोंकी वजहसे यह जीव जन्म मरण शरीर धारण करता है ! लेकिन परब्रह्म ईश्वर परमात्मा वीतराग देव किसी मूर्त्ति आदिमें बद्ध नही है उसका ज्ञान ऐसी कोई जगह कोई वस्तु नहीं जिसमें विद्यमान न हो ? इसी वजहसे जीव तो शरीरको मान लेता है कि, यह शरीर रूप ही मैं हू इसी कारण शरिरके हानि लाभमें जीव अपना हानि लाभ समझता है, मगर ईश्वर परब्रह्म परमात्मा अपनी मूर्त्तिके हानि लाभमें अपना हानि लाभ नहीं मानते ! अगर मूर्त्ति द्वारा शुद्ध भावसे उस परमात्माकी सेवा पूजा करता है तो पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मोंका क्षय करके और शुभ कर्मोंका सुख भोगके, शुभा शुभ दोनो प्रकारके कर्मोंका नाश करके मुक्तिको प्राप्त होता

है ! और जो ईश्वर परमात्मा आदिकी मूर्त्तियोंकी निन्दा करता है वह अशुभ कर्मोंका बधन कर दुर्गतिका भागी बनता है ! इसमें ईश्वरकी मूर्त्तिका अनादर करने वाले काही ससार बढता है, न कि उसकी भाव भक्ति करने वालेका ! बस इस हिसाबसे हम प्रभु परमात्माकी सेवा भक्ति करने वाले है, और जो हमको जडोपासक कहने वाले है वेही जडोपासक, मल, मूत्र, हड्डी, चमडेके उपासक सिद्ध होते हैं !

मनीराम–अच्छा पहले इन दो बातोंका जवाब दो कि, आप जो मूर्त्तिके सामने स्तुति प्रार्थना करते हो क्या वह मूर्त्ति सुनती है ? और उस मूर्त्तिके सामने फल, फल, नैवेद्य, लड्डु पेडे, मिठाई चढाते हो, क्या वह खाती है ? अगर नहीं सुनती और नही खाती तो ऐसा करनेसे क्या फायदा ?

सुमतिचद्र–वाहजी मनीरामजी तुमतो खूब पनडुब्बेका काम जानते हो !

मनीराम–पनडुब्बा क्या ?

सुमतिचद्र–पनडुब्बा नहीं जानते ? पनडुब्बे उन्हे कहते हैं जो समुद्रमे डुबकिया लगा कर सीप, सख, कौडिये आदि निकाल लाया करते है !

मनीराम–फिर मैं पनडुब्बा कैसे ?

सुमतिचंद्र–वाह ! तुमतो वडेही वहादुर बढ़िया पनडुब्बे ! वावाजी महाराजके " सत्यार्थप्रकाश " रूप समुद्रमेंसे ऐसी ऐसी कुथच्चे रूप सख, सीप, कौडियें ढूंढ २ कर लाते हो कि जिस पर हजार मूर्खोंकी अकल कुर्बान की जाय तोभी थोड़ी ! लो मनीरामजी ! अपनी कुथच्चोंका उत्तर सुनो ! लेकिन मै पहले यह पूछता हु कि, तुम्हारे वावाजीका आर्यसमाज जव कभी किसी स्थानमें इकट्ठा होता है और उस वक्त वावाके निराकार ईश्वरकी स्तुति करता है और ऊंचे ऊचे गला फाड फाड़ कर, हार्मोनियम, तबले, सारंगिया वजाकर, भजन गाता है तो वह निराकार उस समाजका गाना सुनता है ? अगर सुनता है तो वताओ इसमें क्या प्रमाण ? और वह किस कुरसीपर और किस जगह वैठ कर सुनता है ? क्यों कि सुनना कानोंका धर्म है और कान विना शरीरके होते नही, जव शरीर होगा तो उसके उठने वैठनेकी जगह तो जरूरही होनी चाहिए ! जैसे आज कलके वहुतसे शेठ साहुकार, रांडों और भांडोंका नाच तमाशा देखने वैठते है तो खूवही तकिया मसलद लगा कर ऊंची जगह पर वैठते हैं और वह तो शेठ साहुकारोंकाभी वडा है । आपकी वह ताना री री को अवश्यही सुननेको वैठता होगा ! अच्छा अगर कहो कि, विना कानोंही सुनता है तो वस फिर यही प्रमाण हमारे लिए काफी है ! क्यों कि हम उस इरादेसे स्तुति तो करतेही नहीं है कि, यह मूर्त्ति सुने ! हम तो जिसकी यह मूर्त्ति है उस

ईश्वर परमात्मा वीतराग देवकी स्तुति प्रार्थना करते है और कोई स्थान ऐसा नहीं जो उसके ज्ञानमें न हो, वह त्रिकाल दर्शी सर्वज्ञ हमारे सर्व भावोंको जानता है ! और भी लो, शरीरमें भी तो जीवात्माही सुनता है, यह मानना ही पडेगा, शरीर तो सुनताही नहीं अगर शरीर सुनता हो तो मुरदेको भी सुनना चाहिए, सोतो आजतक किसी मुरदेने किसी समाजीकी वात सुनीही नहीं ! वस जिस प्रकार शरीरका सुनना सिद्ध नहीं होता तो मूर्त्तिकाभी नहीं होता ! वह मूर्त्ति तो शरीरकी माफक उस देवका अधिष्ठान मात्र है । और हम मूर्त्तिकी स्तुति नहीं करते, लेकिन मूर्त्ति वालेकी स्तुति करते हैं. और दूसरी वात जो नैवेद्य फल लड्डु पेडा, मूर्त्तिके आगे धरते हो सो क्या वह खाती है ? यह प्रश्न बिलकुल वे समझीका है ! क्यों कि, क्या मूर्त्ति पूजक नहीं जानते कि, वह नहीं खाती ?

भला हम पूछते है कि, आप किसी राजा या रईस अथवा महात्माके पास खानेके लिए लेजाओ और आगे रखो-भेट करो, तव वह राजा आदि आपकी दी हुई भेटको खालेवे तवही तुम्हारी दी हुईभेट मंजूर होगी ? क्या तवही आप मानोंगे ? अगर आपकी भेट फलफूल आदि सामग्रीके ले जानेसे पहलेही वह उत्तम २ पदार्थोंसे तृप्त हो रहा है तो तुम्हारे रूगरू तो क्या ? मगर आपके वादमें याने पीछे भी न खायगा ! यह वात आप

खुद जानते हो कि, जब कभी कोई किसी बड़े हाकिमके पास डाली याने भेट ले कर जाता है तो वह हाकिम या राजा डालीके पदार्थोंको स्वयं नहीं खा लेता ! लेकिन वहा पर आप या आपके समाजी यह दलील क्यों नहीं उठाते ? बलकि उस वक्त वह हाकिम–राजा आदि सामने की हुई भेटको उसी वक्त खाने लग जावे तो उसे तुच्छ भुक्खर, बत्तमीज और बे अकल कहने लग-जाओगे ! सो भाई ! यह तो हमभी जानते हैं कि, मूर्त्ति खानी नहीं और नाही हम इस इरादेसे रखते हैं कि यह मूर्त्ति खा लेवे तबही हमारी भक्ति सफल हो ! लीजए जरा सुनिए, मूर्त्ति पूजकों पर तो आप लोग झट ऐसी ऐसी कुतर्कें तैयार कर देते हैं, मगर अपने बाबा दया-नंदजीकी बनाई हुई " आर्याभि विनय " भी आपने कभी देखी ! जिसमें बाबाजीने लिखा है कि–" हेईश्वर " हमने आपके लिए सोम लतादिका रस तैयार किया " है उसे तुम पियो " लो अब बताओ कि बाबाजीके कहे मुताबिक, निराकार सोमरसका प्याला लेकर मुहसे पीता है या नहीं ? यदि पीता है तो किसी दिन प्याला भरके ईश्वरको पिलायाभी कि नहीं ? और अगर बाबा-जीका पूर्वोक्त यह लिखना आप मानते हो तो आपके मतके स्थापक बाबा दयानन्दजी ही झूठे ठहरते हैं तो बस उनका कहना और आपका मानना सबही झूठा !

और यह जो बाबाजीने लिखा है कि "क्या पाषाण आदि मूर्त्ति पूजा से परमेश्वरको ध्यानमें ला सकता

है ? नहीं नहीं । ” इस पर हम कहते है कि, अगर स्याहीसे कागजों पर, मुसलमान आदिकोंके हाथसे छपे हुए वेदके वडे वडे पोथोंसे निराकार ईश्वरका ज्ञान ध्यानमें लाया जा सकता है तो हम साकार अवतारी पुरुषका ध्यान उस मूर्त्तिसे क्यों नहीं ला सकते ? जब कि जड़ पदार्थसे बाबाजीको निराकार ईश्वरके ज्ञानका भान होगया तो क्या अवतारी महात्मा पुरुषोंकी मूर्त्तिसे उनका ज्ञान न होगा ? अवश्य होगा ! ! और फिर तुम्हारे बाबाजीने यह लिखा है कि–“ मूर्त्ति पूजा सीढ़ी “ नहीं किन्तु एक बडी खाई है जिसमें गिर कर चकना “ चूर हो जाता है पुनः उस खाईसे निकल नहीं सकता “ किन्तु उसीमें मरजाता है ” इसका उत्तर—

बस अगर माना जाय तो बाबाजीको मूर्त्तिनेही खाई में गिरा दिया, जिससे निकल न सके और उसीमें मर गए ! क्यों कि, बाबाजीने मूर्त्तिकी निन्दा की तो उसका खोटा फल मिलनाही था और खाईमें गिरना और मरनाही था सो वेशक बाबाजीका लिखना ठीकही है जिसके लिये खाईमें गिरना होगया उसके लिए वह खाई दिखाई देती है । और जो मूर्त्तिकी पूजा करते करते तरगया उसके लिए तो वह सीढी ही है कि जिसके जरिएसे वह ऊपरकी मंजिल तक पहुचा और मुक्ति को प्राप्त हुआ ! सचतो यह है कि, ऊपर मंजल पर ले जाने वाला या खाईमें गेरने वाला तो भाव याने परि-

णाम–इरादाही है, वह मूर्त्तितो निमित्त मात्र है। न तो मूर्त्तिने किसीको धक्का दिया, न खाईमें गेरा और नाही उस मूर्त्तिने किसीका हाथ पकड़ कर ऊपर चढाया। यह जीवोंका भाव ही उस मूर्त्ति द्वारा खाईमें गिराने और ऊपर चढाने वाला है। और खाईमें गिरा हुआ फिर कभी निकल नहीं सकता उसीमें मर जाता है यह ठीक है, ऐसा वैसा काम करनेसे खाईमें गिराहुआ आदमी निकलभी आवे तो कोई तअज्जुव नही, मगर ईश्वर परमात्माकी मूर्त्तिकी निन्दा करने वाला खाईमेंसे कभी निकल नहीं सकता ! और वह उसीमें सड़ सड़ कर मर जाता है ! भाई मनीरामजी ! जरा अपने अंदर विचार करो नाहक दुर्गतिका मारग साफ न करो ! ईश्वर परमात्मा राग और द्वेपसे मुक्त, प्रभुको तो पूजक पर न हर्ष है न निन्दक पर द्वेष ! मगर आप खोटे अध्यवसाय करके नाहकही क्यों कर्मोंका बंधन करते हो ? हो सके तो उसकी सेवा पूजा भक्ति करो वरना केवल निन्दा करके दुर्गतिके पात्र तो होही चुके हो !

ईश्वर भगवान् वीतराग देवको तो किसी चीजकीभी इच्छा नहीं ! किन्तु भव्य लोगोंको अपने २ पाप कर्म दूर करनेके लिए, जीवन मोक्ष (तीर्थंकर) जिस तरहका ईश्वर भगवानकी आकार यह आकार मूर्त्ति, प्रति बिंब उस मू परमेश्वर भगवंतको अपनी

श्वरकी भक्ति करना चाहिए ! यह हम पहले कह आए हैं कि मूर्त्ति पाषाण आदिकी होती है और वह मूर्त्ति परमेश्वर नहीं है, लेकिन, परमेश्वरको याद करनेका वह वसीला है। उससे हमको परमेश्वरका स्मरण होता है। मूर्त्ति परमेश्वरके स्वरूप स्मरणमें कारण है। जैसे ईसाई आदि मतोंमे बाईबल, कुरान, वेद, आगमादि शास्त्र, सब मत वाले अपने२ धर्म पुस्तकको अपने सिरपर या हाथपर उठा कर कसम खाते हैं। मुसलमान भाई कुरानका कितना अदब करते हैं ? दर असलमें ए सबही पुस्तक स्याही और कागजही है। यह मैं पहले कह आया हू याद है न !

जैसे ईश्वरीय ज्ञानके स्मरण वास्ते अक्षर रूप मूर्त्ति अपने हाथसे बनाई जाती है और उसका विनय आदर सत्कार करते है, कागजोंके ऊपर अपने हाथसे लिखे हुए अक्षरोंसे ईश्वरके ज्ञानका बोध होता है, वैसेही मूर्त्ति द्वारा जीवन मोक्ष स्वरूप वाले ईश्वर भगवंतके स्वरूप का बोध होता है. जैसे विलायत आदिकोंके नकशे छोटे बड़े कागजों पर लिखे जाते हैं उन नकशों द्वारा विद्यार्थियोंको मास्तर–उस्ताद लोग उंगली रख कर कहते है कि, यह देखो हिन्दुस्तान है ! यह रूस है, यह रूम है, यह जापान है, यह इंगलेन्ड है. विद्यार्थी यह नहीं मानते कि, जहां हमारे उस्ताद–मास्तरने उंगली रखी है यही रूम रूसादि है ! जैसे नकशेसे असली रूम रूसादि देशोंका ज्ञान होता है वैसेही मूर्त्ति द्वारा मूर्त्ति वाले

सत्य मोक्ष मार्गके बताने वाले, परमेश्वर, तीर्थंकर भगवान अवतारीकाही ज्ञान होता है. मूर्ति परमात्माके बोध होनेमें कारण है, इस लिए परमेश्वर अवतारी पुरुषोंकी मूर्त्ति अवश्य माननी चाहिए. विना मूर्त्ति माने किसीकाभी छुटका नहीं है, जो लोग मूर्तिको नहीं मानते उनको अपने मतके पुस्तकोंकाभी आदार विनय न करना चाहिए ! क्यों कि, पुस्तकोंका मानना भी मूर्तिमेंहीं शामिल है.

मनीराम–आपने बहुत ठीक कहा, मेरा संदेह दूर होगया, परन्तु " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३१२ में लिखा है कि, " साकारमें मन कभी नही स्थिर हो सकता " यह कैसे ?

सुमतिचंद्र–बस यह ऐसेही है, बाबाजीने अपनी अनुभवी बात लिखी है, बाबाजीके इस लेखसे यह साफ प्रगट होता है कि–बाबाजीका मन वेदोंमें मरण पर्यंतभी स्थिर नहीं हुआ होगा ! क्यों कि वेद साकार है जब यूं हुआ तो बाबाजीका अगला लेख कि " उसको मन झट ग्रहण करके उसीके एक एक अवयवमें घूमता और दूसरेमें दोड जाता है " यह भी उलटा बाबाजीके गलेमें पिलच गया. याने बाबाजीका मन वेदके एक एक अवयवको ग्रहण करके पागलोंकी तरह भटकताही रहा होगा ! माल्म होता है कि इसी लिए बाबाजीका जन्मसे लेकर मरण पर्यंत एकसा मंतव्य नहीं रहा ! और जो बाबा-

जीका यह ख्याल है कि, निराकारहीमें मन स्थिर होता है साकारमें कभी नहीं, सोभी विचारशून्य होनेसे अग्राह्य है, यदि निराकारमे मन स्थिर होता है तो विना ही किसी वस्तुके आलंबनके आकाशमें सबका मन स्थिर हो जाना चाहिए! क्यों कि आकाश निराकार है. नहीं मालूम बाबाजीको किस प्रकारका रोग था कि अपने अक्षरोंकी तरफ भी जरा ख्याल नहीं देते थे!

जब कि निराकारमें मन स्थिरही हो जाता है तो फिर सब जीवोंका मन स्थिर हो जाना चाहिए, क्यों नहीं होता? यदि कहा जाय कि आलंबन रूप निमित्तोंके विना स्थिर नहीं हो सकता है तो बस उन आलंबनोंकाही विचार करना आवश्यक है कि वे आलंबन साकार है या निराकार? यदि साकार आलंबन है तो फिर भगवानकी मूर्त्ति रूप आलंबन माननेमें क्या दुःख खड़ा होता है? यदि निराकार आलंबन है तो वेदादि शास्त्रोंका आलंबन छोड केवल आकाशकाही आलंबन समाजी भाइयोंको लेना चाहिए! क्यों कि वेदादि शास्त्र साकार है, और ईश्वरका ज्ञान निराकार है! साकार आलंबनसे निराकार तक पहुंचना स्वामीजीको मंजूर नहीं है, अगर मंजूर है तो जैसे साकार वेदादि शास्त्रोंके आलंबनसे निराकार ईश्वरके ज्ञानका भान इस जीवको हो सकता है, तद्वत् भगवानकी मूर्त्ति रूप साकार आलंबनसे ~ ध्यानादि होनेमें केवल पक्ष

पातके और क्या हरकत आसकती है ? आप विचार लीजिए !

मनीराम–अच्छा साहब ! आज मुझे आपसे बहुतसी बातों का पता लगा है, अब रजा लेताहूं ! कलको मैं आपके मकान परही आऊगा और जो जो बातें रही हैं उनको आपके शास्त्रोंसे मुकाबला करके देखूगा कि "स्वामीजी" ने जो कुछ लिखा है वह वैसाही है जैसा आप मानते हैं या कि उससे विरुद्ध ?

सुमतिचंद्र–तबतो बहुतही अच्छी बात है वस बस आप जरूर आवें मैं अच्छी तरहसे दिखलाऊगा कि बाबाजीने कैसा अपना मन माना गाना गाया है जरूर आइए ! औरभी अगर कोई आपके समाजो साहब बाबाजीकी सचाइका फांका रखते हों तो उन्हें भी साथ लेते आइए ! बाबाजीने जैन मतकी बाबत तो ऐसा उलटा गाना गाया है कि कुछभी मत पूछो ! एक दो ग्रथोंके प्राकृत श्लोक लिखके ऐसा अर्थ किया है कि अपनी सारी पंडिताई दिखलाई है श्लोकमें वे अर्थही नहीं जो बाबाजीने लिख डाले और उस पर अपनी मन मानी समीक्षा करडाली है, न जाने ऐसा करनेसे उनके सन्यासका कौनसी डिगरी प्राप्त हुई ? कुछ समझमें नहा आता ! (तीनो जने उठकर चलने लगे)

मनीराम–(चलते चलते) मुझे एक बात और याद आ गई, इस बारेमें आपका क्या ख्याल है ?

सुमतिचंद्र-कहिए कहिए ! किस बारेमें ?

मनीराम-बाबाजी महाराजने सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३१२ " में लिखा है कि " स्त्री पुरुषोंका मंदिरमें मेला होनेसे "व्यभिचार लडाई बखेडा और रागादि उत्पन्न होतेहैं " इत्यादि.

सुमतिचंद्र-भाई ! सचबात तो यह है कि " बाबाजी " को छोटे पनसेही व्यभिचारका शौक होगया था वह संस्कार यह लिखनेके समय तकभी नहीं गया ! उन्हे चारोंओर व्यभिचारही व्यभिचार नजर आता रहा इसी लिए एक एक जनीको ग्यारां ग्यारा खसम करनेका उपदेश दे डाला और ब्रह्मचर्य सतीपना-पतिव्रता धर्मका तो उच्छेदही करडाला ! देखिए ऋग्वादि भाष्य भूमिका पृष्ठ २२६ मे स्वामीजी महाराज फरमाते है ।

" (इमां०) ईश्वर मनुष्योंको आज्ञा देता है कि हे इन्द्रपते ऐश्वर्ययुक्त ! तू इस स्त्रीको वीर्य दान देके सुपुत्र और सौभाग्य युक्त कर. हे वीर्यप्रद ! (दशास्या पुत्रानाधेहि) पुरुषके प्रति वेदकी यह आज्ञा है कि इस विवाहित वा नियोजित स्त्रीमें दश संतान पर्यंत उत्पन्न कर अधिक नहीं (पतिमेकादश कृधि०) तथा हे स्त्री तू नियोगमें ग्यारह पतितक कर अर्थात् एक तो उनमें प्रथम विवाहित और दशपर्यंत नियोगके पति कर " इत्यादि—

बाबाजीको मैं अपनी जबानसे कुछ नहीं कहता मैंने तो " स्वामी आत्मारामसागर सन्यासीजी " के बनाए हुए

" दयानन्द मिथ्यात्वप्रकाश " नामक ग्रंथके भाग ३७ के पृष्ट ११ पंक्ति १८ से लगाकर जो पढ़ा है वह मैं आपको सुना देता हूं तुमको स्वयंही मालूम हो जायगा कि कौन क्या कहता है ?

सुनिए- " इसके भाष्यमें वृन्दावनको वेश्यावन
" कहा है और लिखा है कि वहां बंदर, कछुआ, चौबे
" तीन प्रकारके पोपजी रहते हैं. इन रूलोसेभी बाबाजी
" लाल बुझकड साबित होते है क्यों कि वृक्षोंके समु-
" दायका नाम वृन्दावन है उसे रंडियोंका वन लिखना
" पागलोंका तमासा है अगर रासलीला होनेसे वेश्या
" वन कहो तो तीसरे समुल्लाससे आर्या लडकी लड-
" कोंको नृत्यकारीका सिखाना कहा है उससे आर्या
" समाजको रंडी समाज अथवा वेश्या समाज कहना
" चाहिए क्यों कि विना अंगोंकी चपलताके नृत्यकारी
" कभी नहीं हो सकती. ग्यारवे समुल्लासमें पोप शब्दको
" रोमन भाषा कहा है रोमन भाषामें पोपका अर्थ
" पिता लिखा है उसमें बदर कछुआ, चौबे आर्यसमा-
" जियोंके बाप साबित हो चुके क्यों कि दयानंदने
" उनको पोप लिखा है यद्यपि ठगी करने वालेकोभी
" पोप लिखा है और मूर्त्ति पूजक तीर्थ यात्रा करने
" वालोंको ठग कहा है तथापि उससे दयानंद और
" आर्यासमाजी ठगोंके पुत्र साबित होते हैं क्यों कि
" उनके माता पिता मूर्त्ति पूजा और तीर्थोंको मानते है

" [दयानन्द छल कपट दर्पण] से सावित है कि घरमें
" दयानन्दका नाम शिवभजनथा वापका नाम हरभजन
" था जाति कापडी थी सोला (१६) वर्षकी उमर तक
" रंडी वनकर नाचता रहा था, एक चौवीस (२४).
" वर्षका राजपुत उसके साथ लंपट था इसी लिए
" वावाजीने वृन्दावनको वेश्यावन लिख मारा है धिक
" वावाजीकी पंडिताईको न जाने वावाजीकी मूर्खताई
" कौनसा जगली जानवर है वारवें समुल्लाससे सावित
" हो चुका है कि जो मनुष्य जैसा आप होता है वह
" दूसरेकोभी अपने जैसाही समझता है इस रूलसे
" दयानन्द जैसा आप वेश्यावन था वैसाही वृन्दावनको
" समझता था "

मनीराम-वस कीजिए वस कीजिए ! आपने तो निवधके निवध याद कर रखे हैं.

सुमतिचंद्र-अगर याद न करें तो वावाजीकी फौज हमें चुटकियोंमेही उडा डाले ! भाई ! आपके प्रश्न पर अभि- मेरा अभिप्राय क्या है वह कहना तो वाकीही है सुनिए ! मन्दिरोंमें कभी किसीके बुरे प्रणाम नहीं आते जो अदर प्रवेश करता है वह तो परमात्मा परमेश्वरका ही नाम स्मरण करने और भगवत देवका दर्शन करनेमें ही उनका ध्यान तल्लीन होता है वहां तो क्या स्त्री क्या पुरुप सवकाही ध्यान भगवत देवकी प्रतिमाके दर्शनमेंही लगा हुआ होता है और सवके मुहसे परमात्मा

परमेश्वरकी स्तुति और उसके गुणानुवादकीही ध्वनि निकलती है हां कदापि कोई बाबाजीका चेला, समाजी किसी मदिरमें खोटे इरादेके साथ चला गया हो और पाप बुद्धि आनेसे अगर किसी स्त्रीको देखकर काम उत्पन्न होगया हो, उसकी इस कुचेष्टाको देखकर, हो सकता है कि किसीने उसे मदिरमेंसे निकाल दिया हो ! और उसीका तरस खाकर ही बाबाजीने पूर्वोक्त लेख लिखा हो तो तअज्जुब नहीं ! वरना ऐसा कौन पापी है जो ईश्वर-परामात्माके देवल-मदिरोंमें खोटे परिणाम लावे ? ईसाई लोग चर्चमें स्त्री पुरुष सब एक साथ मिल कर प्रभू प्रार्थना करते है. क्या वो बाबाजीके हिसाबसे वहा काम विकारके पैदा होनेके लिए इकठे होते है ? आर्यसमाजी स्त्री पुरुष मिलकर एक स्थानमें प्रभू प्रार्थ-नाके लिए क्या नहीं इकठे होते ? होते हैं तो क्या बाबाजीका लेख उनके लिए नहीं लगता ? लेकिन क्या करें ! बाबाजीका तो दूसरोंके छिद्र देखनेकाही स्वभाव था सो देखते रहे ! खूबी तो यह थी कि जब कोई छिद्र हाथ नहीं आता था तो अपनी मन कल्पना से ऐसी कोई बात घडकर लिख दिखाते कि बस आबे-हूब निराकारकी लुगाई ही न हो !

मन्नीराम-(हंसकर) आप तो बडेही मौकेकी निकालते हो !

सुमतिचद्र-तो क्या बे मौकेकी निकालूं ! बे-मौकेकी निकालना तो आपके बाबाजीकाही काम था, जो एक जगह

तो लिखते है कि–" आप पराधीन भटियारेके टट्टु " और कुम्हारके गधेके समान शत्रुओंके वशमें होकर " अनेक विध दुःख पाते हैं " इत्यादि और आपही लिखते हैं कि " जो जैसा होता है वह दूसरोंको " वैसाही समझता है "

ज्ञानचंद्र–मनीरामजी ! तुमने २६ दिसम्बर १८९४ के "मित्र विलास " में " 'स्वामी आत्मारामजीकी यात्रा " इस हेडिंका लेख पढा है ?

मनीराम–जी नहीं ! क्या आपके पास है ?

ज्ञानचंद्र–जी हां है यह लीजिए ! पढिए !

मनीराम–साहब अब समय बहुत होगया है मैं यह परचा कल लेता आऊंगा अबतो रजा लेता हू नमस्ते !

सुमतिचंद्र, ज्ञानचंद्र–बहुत अच्छा ! कल तीनबजेके बाद हम आपको "विश्वंभरनाथ " के यहां ले चलेंगे, आपने अढाई बजे हमारे मकान पर पहुंच जाना !

मनीराम– " विश्वंभरनाथ " कौन हैं ?

ज्ञानचंद्र–कल जिस वक्त आप आवेंगे उस वक्त उनसे मुलाकात होनेपर आपही मालूम हो जायगा कि वे कौन है ? अब तो आपको देर होती है अच्छा जय जय !

(मनीरामजीने अपने घरका रास्ता लिया मगर " मित्रविलास " अखबारको आपने चलते चलते ही

पढ़ना शुरू करादिया-" " मित्रविलास " २९ दिसंबर पौष प्र० १३

-स्वामी आत्मारामजीकी यात्रा-

" ९ दिसंबरको प्रयागसे चलकर मैं कटनी उतरा जहां
" पंडित रघुनाथ पांडेजीने व्याख्यानका प्रबंध किया
" आर्य समाजीभी तसरीफ लाए थे मैंने लैक्चरमें कहा
" पुराने सत्यार्थप्रकाशमें दयानंदने गो बैलका मांस
" खाना लिखा है एक आर्य समाजी सरकारी मुला
" जिम बोला नहीं लिखा मैंने सत्यार्थप्रकाशमें दिखा
" दिया फिर मैंने कहा दयानंदने दूसरे नये सत्यार्थप्रकाशमें
" मनुष्यका मांस खाना लिखा है वही दयानंदी बोला कि
" नहीं लिखा परंतु मैंने फिर सत्यार्थप्रकाशमें दिखा
" दिया फिर मैंने कहा दयानंदने शिखा काट देना लिखा
" है वही दयानंदी बोला नहीं लिखा परन्तु मैंने फिर सत्यार्थ
" प्रकाशमें दिखा दिया मैंने कहा कि दयानंदने दूसरे
" श्लोकको नए सत्यार्थप्रकाशमें सामवेदका वचन कहा है
" दयानंदी बोला नहीं कहा मैंने सत्यार्थप्रकाशको
" दिखा दिया इतना बांचते बांचते सामनेसे एक औरत
पानीका घडा सिरपर उठाए आरही थी उसकाभी ध्यान और तरफ था आप उसके साथ अथडा पडे उसके माथेका घडा गिरकर फूट गया वह खिजकर बोली निगोडा रस्ते चलतेभी अखबार बांचता चलता है न जाने किस गुरुने पढाया है ? मनीरामजी अखबार

खीसेमें डाल शरमिन्दे होकर घर पहुंचे तो घरका दरवाजा बंद पाया बाहरसे आवाज देने लगे " दरवाजा खोल ! " अंदरसे आवाज आई कि " कौन है ? " मनीराम बोले " अरी मैं हूं " एक औरत दरवाजा खोल कर बोली " क्या है ? " मनीराम उस औरतको देखकर अवाक हो गए नीची गरदन डालकर बोले " बाईजी ! माफ करना मैंतो अपना घर समझा था " इतना कह बराबरमें अपना घर था जल्दीसे घुसगए और जो बात बनी थी अपनी स्त्रीको कहसुनाई.

इधर सुमतिचंद्र और ज्ञानचंद्र भी सीधे " विश्वभर" के पास पहुचे और मनीरामके साथ जो बात हुई थी वह कह सुनाई. " विश्वभरनाथ " ने कहा कि बहुत अच्छा कल वो यहा आवेंगे तो रंग जमेगा ! मैंनेभी खूबही मसाला इकट्ठा कर रक्खा है आज मेरे पास दश पुस्तकें ऐसी आई हैं जिसमें समाजीयोंने वेदव वैष्णव आदिकोंकी निन्दाकी है इस लिए पंडित नीति रमण व्याख्यान वाचस्पतिकोभी बुला लेना चाहिए !

सुमतिचंद्र–जरूर ! जरूर ! !

ज्ञानचंद्र–मैं स्वयं जाकर उन्हे ले आऊंगा ! यह आप क्या देखते हैं ?

विश्वंभर–मैं अपने बापकी डायरी देखता हूं । इसमें लिखा है कि " स्वामीजी " का देहान्त दिन १० ० में

देहांत होगया । मगर मुझे आश्चर्य पैदा होता है कि, मेरी मासी (कला) को भादोंमें ही इस खबरका स्वप्न कहांसे आगया ?

ज्ञानचन्द्र-अच्छा, ऐसे ही होगा ! अब मैं जाता हूं ।

विश्वंभर-अच्छा बहुत अच्छा !

सुमतिचंद्र और ज्ञानचद्र-अच्छा रजा लेते हैं जय जिनेंद्र !

विश्वंभरनाथ-जय जिनेन्द्र ! साहब जय जिनेन्द्र !

आपका

M. V. मोक्षाकर,

चैत्र १५ सवत् १९६७

